THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_178424
UNIVERSAL LIBRARY

Osmania University Library

Call No

Accession No

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

॥ श्रीः ॥

भोज और कालिदास.

सम्भल (मुरादाबाद) निवासी बाबू स्वरूप-
चन्द्रजी जैन द्वारा लिखित.

तथा

वैद्य शङ्करलाल जैन द्वारा
परिशोधित और परिपूरित.

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक " लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम् प्रेस.

कल्याण-बम्बई.

संवत् १९९३, शके १८५८.

1936.

मुद्रक और प्रकाशक-

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, कल्याण-बंबई.

सन् १८६७ के आक्ट २५ के मुजब रजिष्टरी सब हक्क

प्रकाशकने अपने आधीन रक्खा है.

भूमिका।

प्रायः भारतवर्षमें ऐसा कोई भी नगर, पत्तन अथवा ग्राम नहीं है कि, जहां धाराधिपति महाराज भोजकी अपूर्व उदारता, अद्भुत विद्वत्ता और अलौकिक गुणग्राहकता प्रसिद्ध नहीं हो तथा उसी प्रकार महाराजा भोजकी सभाके भूषण कवीन्द्र-कुलतिलक कवि कालिदासकी उज्ज्वल कीर्ति विस्तृत नहीं हो। जिन्होंने यदि वेतालपञ्चविंशति, भोजप्रबन्ध प्रभृति छोटी छोटी पुस्तकें भी देखी होंगी वे भी महाराजा भोज और कवि कालिदासके नामको अच्छे प्रकारसे जानते होंगे।

यद्यपि विक्रमके समान एक नामवाले कितनेक कालिदास और कितनेक भोज हुए हैं किन्तु इस पुस्तकमें परमारवंशावतंस धाराधिपति वृद्ध भोज और वृद्ध भोजकी सभाके मुख्य कविराज रघुवंश, कुमारसंभव और मेघदूत आदि ग्रन्थोंके रचनेवाले कालिदासका संवाद लिखा गया है।

राजा भोज और कवि कालिदासकी अपूर्व चातुर्यसम्पन्न अनेक कथा वार्तायें और समस्यापूर्तियें संसारमें प्रसिद्ध हैं, किन्तु जिसमें उपरोक्त कथा और समस्यापूर्ति आदिकोंका एकत्र संग्रह हो ऐसी पुस्तक आजतक कोई भी हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुई। इसी अभावको दूर करनेके लिये प्रियवर बाबू स्वरूपचन्द्रने[1] इस पुस्तकको लिखना आरम्भ किया था, किन्तु दैवकी कुटिल गति है, उन्होंने अनुमानतः इसकी २०—२२

---

१ स्वरूपचन्द्र सौम्य, शांतस्वभाव, दृढप्रतिज्ञ और असीम साहसी थे, इन्होंने थोडीसी अवस्थामें बहुतसे उत्तम उत्तम काम किये थे. इनके लिखे और भी कितनेक ग्रंथ मेरे पास अपूर्ण पडे हैं, वे अवकाश मिलनेपर परिपूरित करके प्रकाशित किये जायँगे।

कला लिखी होंगी कि, इतनेमें वे दारुण व्याधिसे ग्रस्त होकर परलोकको प्रयाण कर गये ।

इसमें आधुनिक साहित्यसंसारके नियमानुसार कहीं कहीं भाषाके दोष और अप्रचलित शब्दोंके प्रयोग आदिक कई एक दूषण आगये थे, वे अबकी आवृत्तिमें हमने विद्वानोंकी सम्मतिसे शुद्ध कर दिये हैं और श्लोक भी जो कि, दृष्टिदोषसे अशुद्ध रह गये थे वे शुद्ध कर दिये हैं ।

यद्यपि इसमें विशेषतासे तो राजा भोज और कवि कालिदासकाही संवाद लिखा गया है किन्तु कहीं कहीं भोजकी सभाके अन्यान्य कवि और विद्वानोंका भी संवाद आ गया है ।

इस पुस्तकके लिखनेमें गुर्जरभाषाकी " भोजसुबोधरत्नमाला" " भोज अने कालिदास " एवं मेरुतुङ्गाचार्यप्रणीत " प्रबन्धचिन्तामणि " आदिसे विशेष सहायता ली गयी है ।

इसमें अनेक प्रकारकी कथारूपी कलाओंका संग्रह होनेसे इसका नाम "कलाप्रकाश" भी है ।

उपसंहारमें वैश्यवंशावतंस परममाननीय श्रेष्ठिवर्य " श्रीवेङ्कटेश्वर" प्रेसके अधिपति सेठ खेमराजजी श्रीकृष्णदासजीको बारंबार धन्यवाद दिया जाता है कि, जिन्होंने अपना बहुतसा धन खर्च करके इस पुस्तकको जगजाहिर अपने " श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें छपाकर प्रकाशित किया है । सर्वाधिकार " श्रीवेंकटेश्वर" प्रेस बम्बईका ही है ।

भवदीय आज्ञाकारी–

सं० १९६०
२-१-३.

वैद्य शङ्करलाल जैन,
आयुर्वेदोद्धारक-कार्यालय,मुरादाबाद.

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

भोज और कालिदास ।

कला १.

(राजा भोजका चरित्र.)

पहिले इस भारतवर्षमें महाप्रतापशाली, तेजस्वी, धीर, वीर, अत्यन्त पराक्रमी, सूर्य और चन्द्रवंशी सहस्रों राजा राज्य कर गये, पश्चात् अन्य देशीय राजाओंके चढ़आनेपर यह देश अत्यन्त हीन अवस्थाको प्राप्त होता गया, कलाकौशल और सब विद्याएँ नष्ट हो गयीं, सिकन्दर और उसके पीछे होनेवाले आक्रमणोंने प्रजाको अत्यन्त हीनदशामें कर दिया, देशी राजाओंमें सन्धि न होनेसे अन्य देशके राजा राज्य करते रहे, तदनन्तर वारंवार अफगान, मुगल और तातार लोगोंने चढ़ाई की, उनकी चढ़ाईसे देशकी हीनता बढ़ती ही गयी. ई॰सन् १००१ से १०२४ तक गजनीके सुलतान मुहम्मदने बारह बार चढ़ाई की, उससे और भी अवस्था बिगड़ गयी, राजाओंको रात्रि दिवस अपने जीनेकी चिन्ता लगी, विद्या और कला कौशलपर किसीने ध्यान नहीं दिया, क्योंकि जहां राजा स्वयं ही मूर्ख हो वहां प्रजाका कहना ही क्या? तत्पश्चात् बारहवीं शताब्दीमें राजा भोज हुआ, वह स्वयंभी

विद्वान् था इस कारण उसने विद्यादिके बढ़ानेका यत्न किया, अपनी सभामें देशविदेशोंके विद्वान् कवि बुलाकर रक्खे. अपने नियमोंमें एक ऐसा नियम नियत किया कि, धारा नगरीमें कोई भी मूर्ख नहीं रहे, क्या छोटा, क्या बड़ा, क्या स्त्री, क्या पुरुष, प्रत्येक जन विद्याभ्यास करे. उस समय प्रायः सभी मनुष्य मूर्ख थे; उसमेंसे भी बहुतसे केवल अपने कार्यके योग्य अक्षरमात्र जानते थे. तब राजा भोजने सब प्रजाको विद्याध्ययन करनेकी आज्ञा दी. भोजने अपने व्ययसे अनेक पाठशालाएँ स्थापन कीं. उस समय भोजराजा विद्वत्तामें सर्वोपरि समझा जाता था. धारा नगरी इन्द्रकी अमरावती नगरीके सदृश थी, इस कारण अब विद्याका भंडार होनेकी सबको इच्छा हुई ।

राजाभोजके विषयमें इतनी वार्ता कहकर अब उसकी उत्पत्ति आरंभ करते हैं। महाराजाधिराज विक्रमादित्य परमारके वंशमें सिंधुल नामक राजा धारा (उज्जयिनी) नगरीमें राज्य करता था, इसने अपने पूर्वजनोंको पराजित हुआ देखकर स्वयं जय प्राप्त किया, यह राजा अपनी प्रजाका पालन उत्तम रीतिसे करता था, इस कारण अत्यन्त सुखी था, केवल इसको एक पुत्रका ही दुःख विशेष था, वृद्धावस्था होगयी थी तो भी यह दुःख नहीं गया. परंतु प्रारब्ध बलवान् है, इस कारण वृद्धावस्थामें ही इसको पुत्रकी प्राप्ति हुई । पुत्रप्राप्तिके

हर्षमें राजाने अत्यन्त दान पुण्य किया और बन्दी-जनोंको यथेच्छ धन दिया, प्रजाने भी अतिशय महोत्सव किया। राजाने राजज्योतिषियोंको बुलाकर पुत्रकी जन्मपत्री बनानेकी आज्ञा दी. ज्योतिषियोंने गणितके द्वारा पुत्रका जन्मलग्न देख देखकर राजासे कहा कि, हमें गणितसे यह विदित होता है कि, कुँवरकी आयु अधिक है. यह बड़ा होनेपर महायशस्वी होगा, इसके राज्यमें कोई भी मनुष्य मूर्ख नहीं रहेगा, विद्या और कला-कौशलका यह अधिक प्रचार करेगा. यह चक्रवर्ती महाराजा कहलावेगा और सुखपूर्वक राज्य करेगा. परन्तु इसको बाल्यावस्थामें एक दुःख भोगना पडेगा ऐसा लिखा है. इस दुःखके भोगनेके पश्चात् यह सुखसे रहेगा. सुख दुःख कर्मानुसार आते हैं इस कारण इसका हर्ष विषाद करना वृथा है. राशिसे इसका नाम भकारके ऊपर आता है, इस कारण इसका नाम भोज रखिये. यह कहकर ज्योतिषी चुप होगये।

राजाने उनको दक्षिणा देकर बिदा किया 'जो कुछ होनहार है वह अवश्य होगा' इस प्रकार विचारकर राजाने धैर्य धारण किया।

भोज जब पांच वर्षकी अवस्थाको प्राप्त हुआ तब सिंधुल राजाको संतोष हुआ. आप अब अत्यन्त वृद्ध हो गये और चिंतवन करनेसे चित्तमें अत्यन्त उदासीनता छागई. संसारको त्यागनेका विचार किया. तब

इनके चित्तमें यह विचार आया कि, पुत्रके होनेपर भाई मुञ्जको राज्य देना भी योग्य नहीं है, परन्तु भोजको राज्य दूँगा तो मुञ्ज महाबलवान् है वह राज्यको छीन लेगा और कालान्तरमें भोजको मार डालेगा; क्योंकि कहा है कि–

" लोभः प्रतिष्ठा पापस्य प्रसूतिर्लोभ एव च।
द्वेषक्रोधादिजनको लोभः पापस्य कारणम् १॥
लोभात्क्रोधः प्रभवति क्रोधाद्द्रोहः प्रवर्तते।
द्रोहेण नरकं याति शास्त्रज्ञोऽपि विचक्षणः २॥
मातरं पितरं पुत्रं भ्रातरं वा सुहृत्तमम्।
लोभाविष्टो नरो हंति स्वामिनं वा सहोदरम् ३"

अर्थात् लोभसे पापकी प्रतिष्ठा और उत्पत्ति होती है, क्रोध और द्वेष लोभसे होते हैं, लोभ पापका कारण (हेतु) है, लोभसे क्रोध समर्थ होता है और क्रोधसे द्रोह बढ़ता है; शास्त्रज्ञ पुरुषको भी द्रोहसे नरककी प्राप्ति होती है और लोभी मनुष्य माता, पिता, पुत्र, भाई, मित्र, स्वामी तथा सगे भाईको भी लोभके वशीभूत होकर मार डालता है।

इस कारण जो भोजको राज्य दूंगा तो मुञ्ज जो कि, अधिक लोभी है वह इसको मारडालेगा और इसकी मृत्यु होजानेसे मेरे वंशका नाश होजायगा इस कारण सबसे उत्तम तो यह बात है कि, मुञ्जको राज्य देकर भोजको

उसके हाथ सौंपदूं जिससे भोज पूर्ण आयु होनेपर अपना राज्य ले सके इस प्रकार विचार कर राजाने अपने प्रधान मन्त्री बुद्धिसागरको बुलाकर अपने चित्तकी वार्ता प्रगट की. प्रधानने भी यह वचन स्वीकार किया. राजाने अपने भाई मुञ्जको बुलाकर राज्यका समस्त भार उसको सौंप दिया और बालक भोजको उसके हाथमें देकर राजाने कहा कि, भाई मुञ्ज ! मेरा पुत्र भोज बहुत छोटा है; इस कारण जब यह बड़ा होजाय तब इसका यह राज्य इसको सौंप देना और तुम अपने ग्राम सँभाल लेना ।

मुञ्जने इस कथनको स्वीकार किया, तत्पश्चात् राजाने शांतचित्त होकर आत्मध्यान कर स्वर्गको पयान किया। राजाके मरनेसे राजभवनमें अत्यन्त शोक हुवा, राजाके मृतक शरीरको अग्निसंस्कार करके अपने घर आये । राजाकी सर्व क्रियाओंसे निवृत्त होनेके पश्चात् मुञ्जको बड़े समारोहके साथ राजसिंहासनपर बैठाया. राजा मुञ्ज स्वयं लोभी और स्वार्थी था. जब उसको अनायासही राज्य मिलगया तब उसने अपने अनुसार मनुष्योंको ढूँढा और जिन प्रधान कार्यकर्त्ताओंको अपने प्रयोजनके अनुकूल समझा उनको नियत रक्खा और शेष कर्मचारियोंको निकालकर उनके स्थानमें नवीन कार्यकर्त्ता नियत किये, जब प्राचीन मनुष्य पृथक् हुए और नवीन नियत हुए तब प्रथम तो कुछ हलचल मची पश्चात् कुछ कालके अनन्तर अपने आप शांत हो गयी ।

नवीन कर्मचारी और अधिकारी लोग इच्छानुसार प्रजाको लूटने लगे, जिस प्रकार चित्तमें आया उसी प्रकार दुःख देने लगे, राजा तो उनकी पुकार कुछ सुनतेही नहीं थे. इस प्रकार कुछ समय व्यतीत हुवा, तदनन्तर भोज जब सात वर्षका हुआ, तब मुञ्जने उसको विद्याभ्यास करानेका निश्चय किया, उसके निमित्त एक पृथक् पाठशाला स्थापित की और उसमें कई एक विद्वान् नियत किये, भोजका यज्ञोपवीत कराके उसको प्रत्येक विद्या प्राप्त करनेकी आज्ञा दी। यद्यपि भोजकी अल्प अवस्था थी तोभी विद्याध्ययनमें विशेष ध्यान रखता था, उसके पाठक भी उसका चातुर्य और उत्तम आचरण देखकर उसपर अधिक प्रेम करते थे, गुरु जो कुछ भोजको पढ़ातेथे वह हर्षपूर्वक यादकरलेता था। किञ्चित् कालमें वह अनेक प्रकारकी विद्यायें, कला, मंत्र, तन्त्र आदि विषयोंमें परिपूर्ण हो गया। एक दिन राजा मुञ्ज पाठशाला देखनेको आया उस समय युवराज भोजकी अवस्था बारह तेरह वर्षकी होगई थी. मुञ्जने भोजको प्रत्येक विषयमें चतुर देखा. भोजके अपूर्व चातुर्यको देखनेसे मुञ्जके चित्तमें विचार हुआ कि, बारह तेरह वर्षकी अवस्थामें भोज इतना चतुर है तो कुछ बड़ा होनेपर यह मुझसे अपना राज्य अवश्य छीनलेगा, इस कारण इसका अभीसे उपाय करना चाहिये। लोकापवादका भय करना ठीक नहीं है, मैं जो कार्य करूंगा वह ठीक होगा नहीं तो पीछेसे पश्चा-

ताप करना पडेगा, जबतक यह छोटा है तबतक तो कुछ नहीं परन्तु जब बड़ा हो जायगा तब भारी पड़ेगा।

इस प्रकार विचार करते करते मुञ्जकी भूख और नींद बिलकुल जाती रही, तत्पश्चात् एक दिन यही विचार निश्चय करलिया और एक वत्सराज नामक अपने मन्त्रीको एकान्तमें बुलाकर सब बात कही कि, हे मन्त्रि-वर्य ! हमारे दुःखके भागी तुम्ही हो, मेरे ऊपर एक यह महाविपत्ति उत्पन्न हुई है इस कारण निवारण भी तुम्ही कर सकते हो, श्रेष्ठ मित्रकी परीक्षा दुःखमें ही होती है इस कारण इस समय यह काम करो कि, भोजको रात्रिके समय रथमें बैठालकर वनमें ले जाओ और वहाँ इसको मारकर इसका मस्तक काटकर ले आना, इस कार्यके बदलेमें तुमको ग्रामादिक बहुत कुछ मिलेगा। वत्सराज यह सुनकर व्याकुल हो गया, क्या उत्तर दूं; यह भी उसको नहीं सूझा परन्तु कुछ समयमें शांत होकर हाथ जोड़कर बोला कि, हे महाराज ! कुँवर भोज तो अभी बालक है न तो उसके पास धन है और न सेना है सिंधुल राजा इसको आपके हाथमें सौंप गये हैं; अत एव यह कुमार आपको पितातुल्य मानता है, कदापि आपकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं करता तो ऐसे आज्ञा-कारी सुपुत्रके मारनेसे क्या लाभ ? ऐसे काम करनेसे पहले पूर्णरीतिसे विचार करलेना उत्तम है, किन्तु पीछेसे पश्चात्ताप करना कुछ कार्यकारी नहीं होता है।

देखो एक राजाके पुत्रने साहस करके अपने तोतेको मार डाला था और पीछेसे इतना पश्चात्ताप किया था कि, आत्मघात करनेतकको उद्यत होगया, सो यह बात क्या आपने नहीं सुनी? मुञ्जने कहा कि, यह बात मैंने नहीं सुनी तुम सुनाओ।

वत्सराजने कहा नहीं सुनी तो सुनो–किसी राजाका एक कुँवर एक दिन अपने मित्र प्रधानके पुत्रको साथ लेकर शिकारके लिये वनमें गया। मध्याह्न काल हो जानेसे राजकुमारको तृषा लगी, राजकुमारके लिये जल लेनेको प्रधानका पुत्र गया। राजकुँवर एक वृक्षकी छायामें जीनपोश बिछा बैठ गया, पहलेसे राजकुँवरने एक तोता पाल रक्खा था, वह तोता अपने सीखे हुए मधुर शब्दोंसे लोगोंका मनोरंजन करता था, इस कारण राजकुँवर जहां जाता था वहां उस तोतेको अवश्य ले जाता था, उस दिन भी वह तोता साथ था, प्रधान पुत्र जो पानी ढूँढने गया था उसको नजदीकमें जल न मिलनेके कारण बहुत दूर जाना पड़ा, यहां राजकुँवर तृषासे अत्यन्त व्याकुल होकर इधर उधर देखने लगा तो क्या देखता है कि, उस बड़के वृक्षसे पानीकी बूँदें गिर रही हैं। राजकुँवरके पास एक प्याला था उसको बड़के नीचे रख दिया, जब वह प्याला भर गया तब राजकुँवर पीने लगा, उस समय तोताने झपटकर प्याला हाथसे गिरा दिया। राजकुँवरने बडी तृषाकी असह्य पीडासे अत्यंत

क्रोधातुर हो तोतेकी गर्दन तोड़ डाली, फिर दूसरी बार प्याला वृक्षके नीचे रखकर भरना चाहा कि, इतनेमें ही प्रधानपुत्र जल लेकर आपहुँचा, राजकुँवर जल पीकर शांत हुआ, प्रधानपुत्रने तोता न देखकर पूछा कि, तोता कहां गया ? तो राजकुँवरने तोतेकी समस्त पिछली कथा सुनायी. यह सुनकर प्रधानपुत्र बोला कि, राजकुँवर ! यह तुमने क्या किया कि, भला इस वनमें बडके वृक्षके ऊपर पानी कहांसे आया ? वर्षाऋतु भी तो नहीं है जो कि, संभव हो। इस वृक्षके ऊपर क्या है ? वह देखना चाहिये ।

यह कहकर प्रधानपुत्र वृक्षपर चढ़ा और वहां एक बहुत बड़े मरे हुए सर्पको देखा, उसका रक्त पानी सदृश नीचे गिर रहा है, यह देखकर प्रधानपुत्र नीचे आया और देखी हुई सब बात राजकुँवरसे कही, प्रधानपुत्रकी बात सुनकर राजकुँवर अपने किये हुए कार्यका बहुत ही पश्चात्ताप करने लगा. जो कुँवर ऊपरसे गिरा हुआ जल पी लेता तो निश्चय ही मृत्यु हो जाती, राजकुँवरने अत्यन्त विलापकर पत्थरसे मस्तक फोड़नेकी और मरनेकी इच्छा की, परंतु प्रधानपुत्रने ऐसा नहीं करने दिया, समझा बुझाकर उसको घर ले आया. इस कारण महाराज ! जो काम करो वह विचारपूर्वक करिये, आगे पीछेका सब विचार कर लेना चाहिये. प्रजाका चित्त मृत्युगत महाराज सिंधुल और कुँवर

भोजकी ओर अधिक है, जो आप भोजको मरवा डालेंगे तो प्रजा आपका सामना करेगी. आपके पृथक् किये हुए कार्यकर्ता आदि सब उसकी ही ओर हैं, अतः प्रजा तथा सेना बिगड़ जायगी पश्चात् आप क्या करेंगे? उस समय आपको बचना भी कठिन होजायगा।

वत्सराजका यह वाक्य सुनकर मुञ्ज क्रोधित हुआ और उच्चस्वरसे कहने लगा कि, सेवकको स्वामीके साथ किस प्रकार बर्ताव करना चाहिये सो तू अभी जानता नहीं, तुझको तो हमारे अनुसार होना चाहिये, परंतु तू तो हमारा गुरु बनकर हमको शिक्षा देता है यह क्या? हां! हां! तेरे मनकी बात अब मैं जान गया, भोजके साथ तू गुप्तभावसे मित्रता रखता है, अब उसके साथ तेरी भी व्यवस्था करनी पड़ेगी, मुञ्जके यह वचन सुनकर वत्सराज चलने लगा और विचार किया कि, इस मूर्खको जितना समझाऊंगा उतना ही अधिक जलमें डूबेगा, जो हितकारक कहूँगा वह सब कठोर लगेंगे, आजकल संसारमें धर्म नहीं रहा, इस कारण इस समय तो जो यह कहे उसमें हां में हां ही करनी चाहिये, कहा भी है कि "विनाशकाले विपरीत-बुद्धिः" इसका काल ऐसे ही आया तो किसका सामर्थ्य है कि, रोक सके? पश्चात् हाथ जोड़कर बोला कि, हे महाराज! मुझ मूर्खने जो जो अपशब्द आपको कहे उनको क्षमा कीजिये, मैंने जो कहा है वह

विना विचारे कहा है, आप आज्ञा करें तो भोजको तो क्या अपना मस्तक भी अपने हाथसे काटकर आपके आगे रख दूं।

मुञ्ज इसके यह वचन सुनकर हर्षयुक्त हो बोला कि, तेरा अपराध मैं क्षमा करता हूं, तेरे विषयमें अब मुझको कुछ संशय नहीं है किन्तु यह काम आज ही करना चाहिये। वत्सराजने कहा कि, बहुत अच्छा महाराज! इस प्रकार वत्सराज वचन कहकर चल दिया, पश्चात् रथ जोड़कर पाठशालामें गया और भोजको तुच्छतासे बुलाया, इस प्रकार भोजको तुच्छतासे बुलाता देख गुरुजीने आश्चर्य किया. भोजने भी भीतर यह शब्द सुने और बाहर आकर कहा कि; तू हमारे पितृभ्राता(चाचा)का सेवक हो मुझे तुच्छतासे बुलाता है, यह कह हाथ सम्हारने लगा. वत्सराजने कहा मुझे राजासाहबकी आज्ञा हुई है. यह कहकर बलात्कारसे भोजको पकड़कर रथमें बिठाकर रथ हांक दिया, रथमें बैठे बैठे भोजने किंचित् विघ्न किया, इस कारण वत्सराजने उसको भय दिखलानेके लिये खड्ग निकाला. भोज शस्त्रके विना लाचार था. मार्गमें जिन्होंने उसको देखा वह पुकारने लगे, परन्तु वत्सराज किसीकी कुछ भी न सुनकर एक साथ वेगसे रथको हांकते चला गया।

वत्सराज भोजको मारनेके लिये जाता है यह बात सम्पूर्ण नगरमें फैल गयी और यह बात राजभवनमें

भी पहुँची, यह सुनते ही भोजकी माता हाहाकार करने लगी; और कहने लगी हे पुत्र ! तेरी इस अल्प अवस्थामें यह दशा ! अरे पापी मुञ्ज ! तुझे यह क्या सूझा ? अरे ! तू इसके पिताका भाई नहीं बरन् पहले जन्मका शत्रु है. अरे ! तू पिताका भाई होकर राज्यके लोभमें इसको इस निर्दयतासे मारना विचारता है ? इत्यादिक अनेक प्रकारसे विलाप करने लगी. राजभवनमें छोटे बड़े सब रोने लगे, शोकके कारण सबने अन्न जल त्याग दिया, प्रजामें कोलाहल मच गया, उस दिन किसीने अपने घरमें दीपकतक भी नहीं जलाया, परन्तु इस कोलाहलका राजा मुञ्जको कुछ भी ध्यान न हुआ ।

अब वत्सराजने भोजको लेजाकर वहां क्या किया सो देखना चाहिये. जहां प्राणी नहीं केवल वन ही प्राणियोंका भयंकर शब्द सुननेवाला है, ऐसे भयंकर वनम जाकर, बालक भोज प्रथम तो भयभीत हुआ, परन्तु फिर धीरे धीरे कुछ धैर्य हुआ, रथसे प्रथम वत्सराज उतरा और पश्चात् भोजको उतारा । हाथमें नग्न खड्ग लेकर वत्सराज मन्त्री बोला कि हे भोज ! तेरे पिताके भ्राता मुञ्जने तेरी इतनी अवस्थामें ही ऐसी चतुरता देखकर लोभसे तेरे मारनेकी आज्ञा दी है, इस कारण अब तुम तैयार हो जाओ ।

मन्त्रीके यह शब्द सुनकर भोज बोला अरे मन्त्री वत्स-

राज ! यदि मेरी मृत्यु अभी है तो टल नहीं सकती और यदि नहीं है तो तू मार नहीं सकता । मेरे प्रारब्धमें यदि इस प्रकार मृत्यु होनी लिखी है तो इसमें तेरा किंचित् भी अपराध नहीं, तू राजसेवक है, सेवक उसका नाम है जो स्वामीकी चित्तसे आज्ञा माने और सेवा करे. लंकापति रावण जो अधिक बलवान् था उसके नष्ट करनेके अर्थ ही श्रीरामचन्द्रजीने वनवास लिया और रावण सीताजीको हरकर ले गया; इस मिषसे रावण रामके हाथसे नाशको प्राप्त हुआ. यदि मेरी मृत्यु इसी मिषद्वारा है तो टल नहीं सकती, इसका हर्ष शोक करना मिथ्या है । हमारे राजाकी आज्ञाका पालन तुम अवश्य करो, परन्तु मैं मरते समय एक पत्र लिखता हूँ तुम उसको मेरे पिताके भाईको दे देना ।

मन्त्रीने उसके पत्रको ले जाना स्वीकार किया इस कारण भोजने लिखनेका विचार किया, वनमें लिखनेका सामान कहांसे हो ?

भोजके वाम हाथमें छः अंगुलियाँ थीं, उनमें छठी अंगुली जो वृथा थी उसको छुरीसे छेदा और रक्तसे बड़के पत्तेके ऊपर एक श्लोक लिखा, वत्सराजने श्लोक पढ़ा, उसी समय उसके हाथसे खड्ग गिर पड़ा और भोजके सम्मुख हाथ जोड़कर इस प्रकार कहा—हे महाराज ! तुम्हारी यह विद्वत्ता देखकर तुम्हारे मारनेके लिये मेरा हाथ नहीं उठता, मुझे तो एक दिन मरना

ही होगा इस कारण तुम्हारी मृत्युके बदलेमें हे धर्मराज ! मैं अपने प्राण दे दूंगा, यह कह भोजके चरणोंमें गिर कहने लगा कि, अरे मुझे धिक्कार है ! कि मुट्ठीभर अन्नके लिये एक ऐसे सज्जन और विद्वान् राजाको वध करनेके निमित्त इस वनमें ले आया. मंत्रीने बालक भोजसे कहा—अब मेरे घरको चलो, रात्रिका समय है कारण अंधकारमें कोई देखेगा भी नहीं, अपने घरके एकान्त स्थानमें तुमको भले प्रकार रक्खूंगा, भोजने कहा—हे मंत्रिराज ! तुम हर्ष शोक कुछ भी मत करो मेरे प्रारब्धमें ऐसा ही लिखा है।

वत्सराजने कुछ उत्तर न देकर भोजको फिर रथमें बिठलाया और गुप्तभावसे अपने घर ले आया और एकान्त स्थानमें रक्खा, इस बातकी अपने घरके मनुष्यों तकको भी खबर नहीं की. जब आयु शेष होती है तो मनुष्य व्याघ्रके मुखसे भी बच जाता है. भोजकी छठी अंगुली अनिष्टका कारण थी सो भोजने काट डाली, उसका अनिष्ट दूर हो गया, इस समय तो भोज बच ही गया परन्तु मन्त्रीके चित्तमें भय था. कदाचित् भोजकी बात खुल जाय तो मैं मारा जाऊंगा, क्योंकि राजाने भोजका मस्तक माँगा था। अब भोजका कटा हुआ मस्तक राजाको किसप्रकार दिखाऊं ? मन्त्रीको यह विचार हुआ, कुछ समयके पश्चात् एक युक्ति सोची, धारानगरीमें एक अत्यन्त चतुर शिल्प-

कार रहता था, वह शिल्पकार प्रत्येक मनुष्यकी साक्षात् वैसी ही मूर्ति पत्थर अथवा मिट्टीकी बना सकता था. मंत्रीने उसके पास जाकर भोजके मस्तकके सदृश मिट्टीका मस्तक उसी रात्रिमें ऐसा बनवाया कि प्रत्येक मनुष्य देखकर तत्काल कहदे कि यह भोजका ही मस्तक है, पश्चात् बकरेके रक्तमें मस्तकको भिगोकर उसे मुञ्जके पास ले गया; मुञ्जने उसे भोजका मस्तक जानकर मंत्रीसे कहा इसको ले जाओ. मंत्रीने वहांसे मस्तक लेजाकर तोड़ डाला. सभामें मुञ्जने भोजके मरनेकी सदृश अपनी शोकयुक्त चेष्टा दिखायी. सभाके लोग भी दुःखित हुए, भोजकी मृत्युके कारण सभा विसर्जन की, केवल राजा और मंत्री ही रहे. तब राजाने पूछा—वत्सराज! भोजने मरते समय हमें कुछ कहा था? इसके उत्तरमें मन्त्रीने भोजका लिखा हुआ पत्र राजाके हाथमें दिया, मन्त्रीको वहां ही छोड़ राजा एकान्त स्थानमें निश्चित होकर उसके पढ़नेको बैठा, पत्रमें उसने इस प्रकार पढ़ा कि—

"मांधाता च महीपतिः कृतयुगा-
लङ्कारभूतो गतः
सेतुर्येन महोदधौ विरचितः
क्वासौ दशास्यान्तकः॥
अन्ये चापि युधिष्ठिरप्रभृतयो
याता दिवं भूपते!

नैकेनापि समं गता वसुमती
नूनं त्वया यास्यति ॥ १ ॥"

अर्थात्-सत्ययुगमें इस पृथ्वीपर महाराज मांधाता हुए, वे भी इस पृथ्वीको त्यागकर चले गये और समुद्रका सेतु (पुल) बांधनेवाले तथा दशानन (रावण) का अन्त करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी कहां हैं? और ऐसे ही युधिष्ठिर आदि अनेक राजा हुए अर्थात् ये सब परलोकको चले गये, परन्तु यह पृथ्वी किसीके साथ नहीं गयी किन्तु जान पड़ता है कि, यह आपके साथ अवश्य जायगी ॥ १ ॥

इसको सुनतेही राजा मुञ्ज मूर्च्छित होकर गिर पड़ा, कुछ समयमें सुध हुई तब हाय भोज! हाय भोज!! इस प्रकार उसके मुखसे शब्द निकलने लगे और हृदय विदीर्ण कर रुदन करने लगा भोज कैसा और कितना चतुर था मैंने अभी जाना है, इस प्रकार अनेक प्रकारसे पश्चात्ताप करता था। मंत्री राजसेवक उसको अनेक प्रकारसे समझाते थे, परन्तु उसकी समझमें कुछ भी नहीं आता था, भोजको चिंतवन करते ही लोटपोट हो जाता था और अन्न जल भी त्याग दिया। इस प्रकार जब तीन दिन बिना भोजनके व्यतीत होगये तब मंत्रीको निश्चय हुआ कि, अब मुञ्ज भोजके वियोगसे अपना शरीर अवश्य त्याग करेगा इसके कारण किसी युक्तिसे भोजको इसके दृष्टिगोचर

करूं यह सोचकर मन्त्रीने समय पाकर हाथ जोड़ दुःखित राजासे कहा—महाराज! आज प्रातःकाल एक योगीसे मेरा वार्तालाप हुआ। वह योगी अद्भुत पराक्रमवान् ज्ञात होता है। मेरे विचारमें ऐसा आता है कि वह योगिराज मृतक मनुष्यको भी जीवित करसकता है, इससे उसके पास भोजकी बात करके भोजको जीवित करना स्वीकार कराऊँगा, यदि आप आज्ञा दें तो उन योगिराजको बुलाकर भोजको जीवित करनेकी युक्ति करूं। मन्त्रीके यह वचन सुनकर राजाके चित्तमें कुछ धैर्य आया और मन्त्रीको इस कार्यके करनेकी आज्ञा दी, मन्त्रीने राजबागमें मंडप तैयार कराया, बीचमें अग्निका कुंड बनाया, वत्सराजने प्रधान बुद्धिसागरको पहिले ही समझा रखा था, उसी प्रकार बुद्धिसागरको योगीका वेष धारण कराकर बागमें बैठा दिया, हवन करनेकी सब सामग्री मँगाई, हवनका समय रात्रिका रखा, रात्रिके होनेपर एक ओर राजाको बिठाया और उसके आगे एक चक्र बना रखा था, उसके देखनेको राजासे कहा भोजको वहां पहलेसेही छिपा रखा था, योगिराजने अब हवन करना आरंभ किया, हवनमें जब बहुत धुआं निकलने लगा तब झट भोजको दृष्टिगोचर कर दिया, परन्तु प्रथम योगिराज अपने आप गुप्त (गायब) हो गया. जब होमका धुआं निकल गया तब राजाने प्रथम योगिराजको पूछा. परन्तु मन्त्रीने अपना अनजान-

पन दिखाया, कोई भी योगिराजकी खबर बता नहीं सका, भोजको वस्त्राभूषण पहराकर राजा राजमंदिरमें ले आया, दूसरे दिन भोजके जीवित होनेकी खबर संपूर्ण नगरमें प्रसिद्ध हुई और लोगोंने हर्षोत्सव किया. मुञ्ज संसारसे विरक्त होगये और भोजको राज्याभिषेक किया, अपनी स्त्री आदिको त्याग कर वनमें गये और तप करके मोक्षमें पधारे. भोजने जिस प्रकारसे राज्य किया वह आप आगे चलकर पढ़कर देखिये ।

कला २.

(कालिदासका चरित्र.)

वंगदेशमें सत्यवान् नामक सत्यवादी राजा राज्य करता था, उसके चंपककलिका नामकी एक पुत्री थी. राजाके मुख्य मन्त्रीका चूड़ामणि नामक एक पुत्र था, राजकन्या और चूड़ामणिमें अत्यन्त मित्रता थी, वह दोनों बाल्यावस्थामें थे इसकारण एक ही स्थानमें क्रीडा करते रहते थे, एकदिन मूर्ख अवस्थामें विचरते चूड़ामणिने राजकन्यासे कहा कि, हे चंपककलिका ! तू मेरी स्त्री होगी ? जो तेरी इच्छा मेरी स्त्री होनेकी हो तो राजा तेरा जब विवाह करनेको कहे तब मेरे साथ विवाह करनेको कहना ।

यह सुन राजकन्या किंचित् क्रोधित होकर बोली हे चूड़ामणि ! तू प्रधानपुत्र हमारा सेवक होकर मेरे साथ विवाह करना चाहता है ? क्या मुझे कोई राज-

कुमार नहीं मिलेगा ? मेरे योग्य जो राजकुमार नहीं मिलेगा, तो अन्य मनुष्यके साथ मैं कदापि विवाह नहीं करूंगी यह तू निश्चय जान ।

राजकन्याके यह वाक्य सुन, प्रधानपुत्रने क्रोधित होकर कहा कि–हे राजकन्या ! सुन, जिस समय राजाजी तेरे लिये वर ढूंढनेकी इच्छा करेंगे उस समय मेरे पिताहीसे कहेंगे तब यह कार्य मैं अपने स्वाधीन लेलूंगा और तेरे लिये मूर्ख और दरिद्री नर ढूंढकर लाऊँगा, पीछे तू क्या करेगी ? यह सुन राजकन्या बोली, हे चूड़ामणि ! यह तेरे अथवा तेरे पिताके अधीन नहीं है यह तो केवल कर्मके अधीन है जैसा मुझको वर मिलेगा उसमें तू कुछ नहीं कर सकता ।

राजकन्याके यह शब्द सुनकर वह चित्तमें संतापित होकर वहांसे चला गया, यह वहीं रही । कुछ वर्ष बीत जानेपर राजकन्या और प्रधानपुत्र बड़े हो गये । राजकन्या यह बात बालपनेसे भूल गयी परन्तु प्रधानपुत्रने चित्तमें गुप्त रखी थी । चम्पककलिकाको विवाहयोग्य देखकर राजाने उसके विवाह करनेके लिये विचार किया पश्चात् राजाने प्रधानसे कहा–कन्या चम्पककलिका अब बड़ी हो गयी इस कारण इसके योग्य वर ढूंढना चाहिये । यह कार्य मैं तुम्हारे अधीन करता हूँ इस कारण कोई योग्य राजकुमार ढूँढ लाओ ।

प्रधान स्वीकार करके घर आया, राजकन्याके

विवाहकी बात उसने अपने पुत्रसे कही, उसने अपनी पहिली बात याद करके पितासे कहा–पिताजी! आप वृद्ध होनेके कारण मार्गमें दुःख होगा. कदाचित् आप दूर चले जावें और उस समय यहां कुछ राज्यमें विघ्न हो जावे तो पीछे आपके विना कौन निवारण करेगा? इस कारण राज्यकार्य प्रथम सँभालकर पीछे अन्य कार्य करना चाहिये। यह कार्य तो मेरे योग्य है इस कारण मुझे आज्ञा मिले तो मैं जाऊँ।

पुत्रका इस प्रकार कथन सुनकर प्रधानको अत्यानन्द हुआ, परन्तु राजाकी आज्ञाके विना नहीं भेज सका, उससे यह कह राजाकी आज्ञा लेनेको गया। राजाने प्रधानकी बात सुनकर कहा–हे प्रधान! जो यह इस कार्यको कर सके तो और इससे उत्तम क्या है? चम्पककलिका और तुह्मारे पुत्रसे अत्यन्त मित्रता थी वह परस्परमें बहन भाईके सदृश रहते थे इस कारण कन्याके योग्य वर वह ढूंढ़कर तो लावेगा ही इस कारण जाने दो।

राजाके यह वचन सुन प्रधान हर्षको प्राप्त हुआ, पुत्रके यात्रा करनेकी सब सामग्री तैयार करायी, साथमें कुछ मनुष्य और धन देकर बिदा किया. प्रधानका पुत्र वर ढूंढ़ने गया, राजकन्याको चूड़ामणिके जानेके पीछे खबर मिली। परन्तु प्रथम व्यतीत हुई बातका ध्यान भी नहीं था. चूड़ामणि अनेक देश देशान्तरोंमें

फिरा परन्तु जैसा वर उसको चाहिये वैसा कहीं भी न मिला. एक दिन एक वनमें जाते समय एक लड़केको वृक्षकी शाखापर बैठा देखा। वह शाखा पीछेसे हिलती थी, वह वहां क्या कर रहा है, यह उससे पूछनेके निमित्त अपनी पालकी रोकी और उसके समीप जाकर प्रधानपुत्रने कहा–अरे भाई! शाखा टूटकर तू नीचे गिरेगा इसका भी कुछ विचार किया?

उस लड़केने यह उत्तर दिया–सेठ साहब! जो तुम कहते हो यह बात सत्य है, परन्तु मैं इस वृक्षमें चढ़ते तो चढ़ गया किंतु अब मुझे पीछे उतरना नहीं आता इसलिये इसे हिला रहा हूँ, जब यह टूट पड़ेगी तो मैं भी इसके साथ नीचे आ जाऊँगा।

उस लड़केका यह कथन सुनकर चूड़ामणिको यह निश्चय हुआ कि, यह बालक देखनेमें सुन्दर बोलनेमें चतुर होनेपर भी मूर्ख है। मैंने अनेक मूर्ख देखे परन्तु इसके सदृश एक भी नहीं देखा, राजकन्याके योग्य तो यही वर है। तदनंतर अपने मनुष्योंसे कहा कि, इस लड़केको नीचे उतारो, उन्होंने उसको वृक्षसे नीचे उतारा। जाति और व्यवहार पूछनेके लिये उससे कहा–तू किसका पुत्र है और क्या कार्य करता है? लड़केने कोमलतासे उत्तर दिया कि–मैं ब्राह्मणका पुत्र हूँ, मुझे लिखना पढ़ना कुछ नहीं आता, मेरे माता पिता मुझे छोटासा

छोड़कर चले गये और अब समीपके ग्रामकी गाय भैंसें चराकर मैं अपना उदर भरता हूँ।

चूड़ामणिने कहा—हमारे राजाकी कन्याके साथ विवाह करनेकी तेरी इच्छा हो तो हमारे साथ चल। लड़का स्वीकार करके चल दिया, कहां आप और कहां राजाकी पुत्री, इसका उसने तो कुछ विचार न किया। फिर उसको नदीमें स्नान कराकर अपने साथ लाये हुए वस्त्र और आभूषण आदि पहनाकर पालकीमें बैठाल प्रधानपुत्र धूमधामसे नगरीमें चला। राजकन्याके होनेवाले भावी वरको एक मंदिरमें उतार दिया और अपने विश्वासी आदमी तथा पहेरदारोंको वहां नियत किया। लड़केसे कह दिया कि तू बहुत नहीं बोलना, पश्चात् चूड़ामणिने राजासे जाकर कहा—मगधदेशका एक राजपुत्र चम्पककलिकाके योग्य है इससे उसको लाया हूँ। राजकुँवरको देखनेके लिये अनेक मनुष्य आये, उन्होंने उसको अधिक रूपवान् देखा और उससे कुछ वार्त्तालापकर आनन्दयुक्त हो घरको चले गये। प्रधानने लग्नकी सामग्री जोडी, चार दिनतक लग्न समारंभ चलता रहा। सम्पूर्ण नगरको राजाने भोजन दिया। रात्रिके समय वर कन्या दोनों एक स्थानमें रहे राजकन्याने प्रथम उसको देखनेके लिये दासीको भेजा, दासीने कुँवरके घरमें जाकर देखा कि कुँवर सुवर्णमय शय्यापर शयन कर रहे हैं। पीछेसे राजकन्या

चम्पककलिका हाथमें पंचारती लेकर आयी, उसने पतिको निद्रायुक्त देखकर जागृत करनेके लिये पांवोंकी झांझन झनझनाई, परन्तु वह नहीं जागा। तब राजकन्याने इसको अधिक निद्रा आयी हुई जानकर उसकी नाकपर सुगन्धित पुष्प रक्खा तो भी वह नहीं जागा, पश्चात् राजकन्याने गुलाबजलमें चन्दनादि सुगन्धित पदार्थ मिश्रित कर उसके शरीरपर छिडके परंतु उसको कुछ भी खबर नहीं "इसको अधिकतर निद्रा आयी है और बड़े स्वरसे श्वास लेता है" ऐसा जानकर राजकन्या निरुपाय हुई, अन्तमें हाथसे हिलाकर जगानेका निश्चय किया, इस प्रकार करनेसे भी वह नहीं जागा, वह उसी प्रकार उच्चस्वरसे श्वास लेता रहा "उसको उत्तम सुगन्धित कोमल शय्यापर सोना कहाँ मिला होगा। इसको इसी कारण अधिक निद्रा आयी है"। यह जानकर उसने समझा कि, यह राजकुलका कुँवर नहीं है बरन् कोई मूर्ख है ऐसा विचार आते ही चूड़ामणिके बाल्यावस्थाके वाक्य याद आगये और चित्तमें दुःखित हुई। अन्तमें राजकन्याने उसका हाथ पकड़कर जोरसे बैठा दिया, अब एक साथ जागृत हो गया। वह राजकन्याका स्वरूप चन्द्रके सदृश शोभायमान देखकर शय्यासे नीचे उतर पड़ा और दोनों हाथ जोड़कर विनती की कि, हे राजपुत्री! मुझे यह खबर न थी कि, यह शय्या आपकी है

परंतु आपके सेवकोंने ही मुझे इसके ऊपर सोनेकी आज्ञा दी है, इससे मैं इसके ऊपर सोता था, अब मेरा अपराध क्षमा करो, मैं आपकी शरण हूँ।

राजकन्याको और भी निश्चय हुआ कि, यह मूर्ख है, इसको किसी प्रकारका भी ज्ञान नहीं है परंतु उच्च-वर्ण है या नीचवर्ण, धनहीन है या धनवान्, इसके निश्चय करनेकी इसकी इच्छा हुई. राजकन्याने भवनके कितने ही चमत्कारिक द्रव्य इसको दिखाये परंतु उनमेंसे उसकी देखी अथवा सुनी हो ऐसी एक भी कोई वस्तु नहीं थी। प्रत्येक वस्तु उसको नवीन ही ज्ञात होती थी इस कारण राजकन्याने जाना कि; ठीक यह धनहीनका पुत्र है पश्चात् उसको चित्र-शालामें ले गयी, वहां अनेक प्रकारके चित्र लग रहे थे, परन्तु उसकी दृष्टि किसीपर भी स्थिर न हुई. देखते देखते अन्तमें वृन्दावन देखा, वहां अनेक प्रकारके बड़े बड़े वृक्ष लग रहे थे, उन वृक्षोंमें श्रीकृष्ण ग्वालियोंके साथ कितनी गायें चरा रहे थे, यह चरना देखकर एक क्षण वहां ठहरकर बोला—यह कैसा बैलोंका झुण्ड है, कितने ग्वालियें गाय चरा रहे हैं यह स्थान कैसा रमणीक है?

उसका यह कहना सुनकर राजकन्या मनमें समझ गयी कि, यह अवश्य ग्वालिया है, इस मूर्खके साथमें अवस्था पूर्ण नहीं हो सकेगी, इसको देख २ कर

अधिकतर क्लेश ही होगा इस कारण इसका शिरश्छेदन करके बाहर फेंक देना उत्तम होगा। यह विचार, राजकन्या उसकी ओर देखकर बोली—तू मेरे योग्य नहीं है इस कारण तेरा मस्तक काटकर फेंक दूं। राजकन्याके क्रोधयुक्त वचनोंको सुनकर वह भयभीत होकर बोला कि मेरा मस्तक काटनेसे क्या लाभ होगा? वह राजकन्या बोली—तेरी मृत्यु हो जानेपर जन्मपर्यंतका दुःख दूर जायगा। उसको सुनकर प्रथम वह अधिक भयभीत होकर विचारने लगा कि—इसकी मैंने कुछ हानि नहीं की फिर मुझे क्यों मारना चाहती है? यह तो विचार कर ही रहा था, परन्तु इतनेमें राजकन्या बोली—तू मूर्ख है इस कारण तेरे साथ संसारमें रहनेसे विधवा होकर रहना अत्यन्त श्रेष्ठ है। मूर्ख मित्र करनेसे विना मित्र रहना उत्तम है। इस कारण मैं तुझे मारती हूँ।

उसने पूँछा—मैं मूर्ख क्यों हुआ?

राजकन्याने उत्तर दिया—पूर्वजन्ममें तूने सुकृत कर्म्म नहीं किये इससे तू मूर्ख है।

ब्राह्मणने पूँछा—अब मैं क्या करूं?

राजकन्याने कहा—इस नगरके बाहर कल दिन कालीचन्द्र नामक ऋषि आकर ठहरे हैं उनके समीप जाकर उनसे पूँछ।

यह कह हाथमें नग्न खड्ग लेकर राजकन्याने मस्तक

काटनेको चाहा, ब्राह्मण अपना जीव बचानेके लिये विनययुक्त बोला—मुझे जीवदान दो, आजसे मैं इस नगरमें कदापि नहीं आऊँगा। राजकन्याने यह सुनकर विचारा कि पतिका घात करना भी अच्छा नहीं है इस कारण इसको छोड़ दूँ।

पश्चात् ब्राह्मण वहांसे छूटकर नगरके बाहर पहुँचा और ढूंढ़ता २ ऋषिके निकट गया और ऋषिको देखतेही किंचित् ज्ञान हुआ और चित्तमें विचारा कि अरे रे! मेरी स्त्री मुझे मारनेको तत्पर हुई थी, धिक्कार है! मैं मूर्ख रहा। फिर ऋषिराजको प्रणाम करके पूछा कि हे मुनिराज! मैं अत्यंत मूर्ख रहा, इसी कारणसे मेरी स्त्रीने मुझे निकाल दिया, अब क्या करूँ?

उन्होंने देखकर कहा-अरे बालक! तू तो महापंडित संसारमें अद्वितीय होगा, धैर्य धर भय मत कर। तू रविव्रत धारण कर और तीन दिन मेरे समीप रहकर इस मन्त्रका जप कर तब तू पूर्ण विद्वान् हो जायगा।

उसने स्वीकार करके मन्त्रका जप करना प्रारंभ किया। राजमंदिरमेंसे उसके निकल जानेपर राजकन्याका चित्त शांत हुआ और उसने देशमें आये हुए मुनिराजको सुनकर दूसरे दिन प्रातःकाल उनके दर्शनका निश्चय किया, प्रातःकाल होते ही राजकन्या उनके निकट गयी और सम्मुख ऋषिराजके किसी पुरुषको बैठा देखा, उसको जतानेके वास्ते राजकन्याने

पांवोंकी झांझन झनझनाई, परंतु वह एकाग्रचित्त होकर मन्त्रका जप करता था इस कारण किंचिन्मात्र भी न हिला तब राजकन्याने अपनी सखीके प्रति इस प्रकार कहा—

"अनिलस्यागमो नास्ति द्विपदो नैव दृश्यते।
जलमध्ये स्थितं पद्मं कम्पितं केन हेतुना॥"

अर्थात्—इस समय वायुका वेग नहीं और पक्षी अथवा कोई मनुष्य भी नहीं दीखता तो किस कारण जलमें कमल कांपता है? ॥ १ ॥ इस ब्राह्मणको जप करते करते तीन दिन व्यतीत हो गये थे और यह पूर्ण विद्वान् होकर संसारमें अद्वितीय हो गया था, तदनन्तर इसके कर्णमें इस श्लोककी ध्वनि पहुँची तब उसको चेत हुआ पीछे फिरकर देखा कि, अपनी एक समयकी विवाहिता स्त्री है. उसका इस प्रकार प्रश्न सुनकर कहा—

"पावकोच्छिष्टवर्णस्य शर्वर्या बन्धनं कृतम्।
मोक्षं न लभते कान्ते कम्पितं तेन हेतुना १॥"

अर्थात्—हे कान्ते! पावक अर्थात् अग्निका जो उच्छिष्ट अर्थात् कालावर्ण, यह वर्ण ही है रूप जिसका ऐसा भौंरा रात्रि होनेसे प्रथम बाहर नहीं निकल सका, इस कारण कमल कांपता हुआ दीखता है ॥१॥

इस प्रकार उत्तर सुनकर राजकन्या बोली—ऐसा मुझे

उत्तर देनेवाला कौन है? समीपमें जाकर देखा तो उस रात्रिको मूर्ख जानकर गृहसे निकाला हुआ अपना पति ही देखा। मूर्ख जानकर मैंने तो इसको त्याग दिया था, परन्तु यह तो अत्यन्त गुणवान् ज्ञात होता है. क्योंकि इसने मेरे कहे हुए प्रश्नका पूर्ण उत्तर दिया, वह दिखाई हुई मूर्खता तो केवल मेरी परीक्षा करनेको ही थी, यह विचार कर राजकन्या सम्मुख आयी और प्रथम ऋषिराज कालीचन्द्रको प्रणाम करके इस ब्राह्मण पुत्रकी विनती करने लगी और कहा-हे नाथ! मेरा जो अपराध हुआ है वह क्षमा कीजिये, मैं मूर्ख हूँ आपको दुःख देनेमें मैंने कोई न्यूनता नहीं रक्खी।

यह सुनकर उसने कहा-हे राजकन्या! इसमें तेरा अपराध कुछ भी नहीं, जो कुछ हुआ वह केवल प्रारब्धके अनुसार ही हुआ है, यह कह यहांका सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया और उससे कहा कि, मैं तेरा कदापि उपकार नहीं भूल सकता, क्योंकि तेरे अनुग्रहसे मुझे कालीचन्द्र ऋषिराजका दर्शन हुआ और इनका मार्ग तूने मुझे बताया इस कारण तू मेरी गुरु हुई, अब परस्पर पतिपत्नीका सम्बन्ध नहीं रहा और मैं आजसे "कालिदास" हुआ।

इस प्रकार उसको अधिक समझाकर शांत किया और पीछे उन मुनिराजको प्रणाम करके वहांसे चल दिया। कितने दिनोंके पश्चात् भोजराजाकी कीर्ति सुन-

कर धारानगरीमें आया, भोजराजाने इसकी अपूर्व विद्वत्ता देखकर सभामें मुख्य पंडित नियत किया।

कला ३.

(गोविन्द ब्राह्मण)

राजाभोज एकसमय बागमें बुद्धिसागर प्रधानके साथ भ्रमण कर रहा था उस समय सम्मुखसे एक ब्राह्मणको आता हुआ देखा। वह ब्राह्मण राजाके सामने बराबर नेत्र बंद करके चला आता था, जब समीप आया तब राजाने पूछा—महाराज ! तुम मुझे आशीर्वाद नहीं देते और नेत्र बन्द करके चले जाते हो इसका क्या कारण?

ब्राह्मणने कहा—तुम राजा होकर किसी विद्वान् ब्राह्मणको कुछ भी नहीं देते तो वृथा आशीर्वाद देनेसे क्या फल ? तुम लोभी हो इस कारण लोभीका मुख प्रातःकाल देखनेसे सम्पूर्ण दिन किसी स्थानमें भी लाभ नहीं होता।

राजाने पूछा—आपका नाम क्या है ?

ब्राह्मणको "अपना नाम अपने मुखसे नहीं लेना शास्त्रमें लिखा है" इस कारण पृथ्वीके ऊपर लिखता हूँ ऐसा कह लिखा—"गोविन्द"

राजाको निश्चय हुआ कि यह मनुष्य विद्वान् है, पश्चात् उसको एक लक्ष रुपया देकर प्रतिदिन सभामें आनेको और साथमें अन्य विद्वानोंको लानेको कहा।

कला ४.

(मार्गमें कन्या)

एक समय राजा भोज मृगयाके अर्थ वनमें जाते जाते अधिक दूर निकल गये, वहां सूर्यकी किरणोंसे अत्यन्त सन्तापित होनेके कारण घोर तृषा लगी, तृषासे अत्यन्त व्याकुल हुए राजा एक वृक्षके नीचे पृथ्वीमें बैठ गये । उसी समय सम्पूर्ण सुन्दर अंगों करके युक्त अत्यन्त रूपवती एक कन्या अपने कोमल कर-कमलोंमें पकड़े हुए और शिरपर रक्खे हुए छाँछके कुम्भको लेकर धारानगरीको जाती थी, उसको देख-कर राजाने तृषाके कारण विचार किया कि–इसके पास कोई पीनेकी वस्तु है, इससे अवश्य मेरी तृषा शांत हो जायगी । पश्चात् उससे पूछा–हे तरुणी ! इस कुंभ (घडे) में क्या वस्तु है ?

वह कन्या राजाको तृषित जानकर अपने मुखकी कांतिको फैलाती हुई बोली–

" हिमकुन्दशशिप्रभशङ्खनिभं
परिपक्वकपित्थसुगंधरसम् ।
युवतीकरपल्लवनिर्मथितं
पिब हे नृपराज रुजापहरम् ॥ १ ॥ "

अर्थात्–हे नृपराज ! हिम (बर्फ) कुन्द तथा शंखसा श्वेत कांतिवाला, पके हुए कैथकी सदृश सुगं-

धित रसयुक्त, युवती स्त्रीके करपल्लवोंसे मथा हुआ और सर्व रोगोंको नष्ट करनेवाले ऐसा जो यह पदार्थ है इसको पीजिये ।

इस प्रकार राजाने उसके वचन सुनकर उस छांछको पीलिया और प्रसन्न होकर बोला—हे सुन्दरी ! तू क्या चाहती है ? लज्जाके कारण नमगयी है दृष्टि जिसकी ऐसी नवयौवनयुक्ता मोहसे व्याकुल होकर वह कन्या बोली—

इन्दुं कैरविणीव कोकपटलीवाम्भोजिनीवल्लभं
मेघं चातकमण्डलीव मधुपश्रेणीव पुष्पव्रजम् ।
माकन्दं पिकसुन्दरीव रमणीवात्मेश्वरं प्रोषितं
चेतोवृत्तिरियं सदा नृपवर त्वां द्रष्टुमुत्कण्ठते १

अर्थात्—हे नृपवर ! जिस प्रकार कुमुदिनी चन्द्रको, चकवोंका समूह सूर्यको, चातकगण मेघको, भ्रमरगण पुष्पोंको, कोयल आम्रको और स्त्री अधिक दिनसे बिछुडे स्वामीको देखनेकी इच्छा करती है उसी प्रकार मेरे चित्तकी वृत्ति सदा आपको देखनेके लिये उत्कण्ठित रहती है ।

यह सुनकर राजा विस्मित होकर कहने लगा—हे युवती ! मैं तुझको लीलादेवीकी आज्ञा विना स्वीकार नहीं कर सकता. तब यह कन्या राजाके साथ साथ धारा नगरीको आयी और राजासे विनययुक्त कहने लगी कि, हे राजन् ! अब मुझको क्या आज्ञा है ?

तब राजाने लीलादेवीसे पूछकर उसके कहे अनुसार स्वीकार किया ।

कला ५.

(आओ मूर्ख)

एक दिन राजा भोज अपनी पटरानीके भवनमें गया, वहां रानी और उसकी सखी एकान्तमें वार्तालाप कर रही थीं, राजा एकसाथ वहां चला गया. उसको देखकर रानी बोली–" आओ मूर्ख " यह सुनकर राजा विचार करने लगा–मुझसे कोई भी मूर्खता नहीं हुई, आजपर्यन्त रानीने मुझे अपशब्द भी नहीं कहा, यहां आज मैंने कौनसा मूर्खताका कार्य किया वह कुछ याद नहीं आता, कदाचित् इसका कोई और प्रयोजन हो यह विचार कर राजा वहांसे आकर एक साथ राजसिंहासनपर आ बैठा ।

राजा भोजकी सभामें चौदहसौ पंडित थे, उस समय जो कोई पंडित सभामें आवे उससे राजाने " आओ मूर्ख " यह कहना प्रारम्भ किया, पंडितोंने चित्तमें विचारा कि, हमें मूर्ख कहनेमें राजाका क्या हेतु है ? विना जाने पंडित विस्मयमें होकर चुप हो रहे, सबसे पश्चात् कालिदास आये उनसे भी राजाने उसी प्रकार प्रश्न किया, कालिदासने तत्काल ही उत्तर दियाः–

" खादन्न गच्छामि हसन्न जल्पे
गतं न शोचामि कृतं न मन्ये ।

द्वाभ्यां तृतीयो न भवामि राजन्
किं कारणं भोज भवामि मूर्खः ॥ १ ॥"

अर्थात्—मैं खाता हुआ मार्गमें नहीं चलता, अधिक हँसता हुआ बोलता नहीं, गयी वस्तुका शोक नहीं करता, अपने कियेका अभिमान नहीं करता और जहां दो जने वार्तालाप करते हों वहां मैं तीसरा गया नहीं, इन पाँचोंमेंसे मुझसे एक भी मूर्खता नहीं हुई फिर हे राजन्! मुझे मूर्ख किस प्रकार कहा? इसका उत्तर सुनकर राजा मनमें समझा कि दो जने वार्तालाप करते थे वहां मैं गया इससे मूर्ख हुआ. पश्चात् कालिदाससे वह सब कथा कह दी।

कला ६.

(शतंजय कवि और कालिदास)

कोई पण्डित अथवा कोई मनुष्य नवीन श्लोक बनाकर लाता था उसको भोज राजा एक लक्ष रुपया देता था इस कारण उसकी कीर्ति देशदेशान्तरोंमें फैल गयी थी. एक दिन शतंजय कविने एक श्लोक लिखकर उसको अपने शिष्यके हाथ भोजकी सभामें भेजा वह श्लोक इस प्रकार था—

"अपशब्दशतं माघे भारवौ च शतत्रयम्।
कालिदासे न गण्यन्ते कविरेकः शतंजयः॥ १"

अर्थात्—माघकाव्यमें एकसौ अपशब्द हैं, भारविमें

तीन सौ हैं और कालिदासमें अर्थात् इनके काव्योंमें इतने अपशब्द हैं कि उनकी गिनती नहीं है, परन्तु कवि एक शतंजय ही है।

दैवयोगसे मार्गमें उस शिष्यको कालिदास मिल गये, कालिदासने शिष्यके हाथमें कागद देखकर उससे पूछा–तू कौन है? कहांसे आया है? कहां जाता है? शिष्यने उत्तर दिया–मैं शतंजयकविका शिष्य हूँ, इन्होंने यह श्लोक लिखा है, इसको महाराज भोजकी सभामें लेकर जाता हूँ। कालिदासने वह श्लोक देखनेको मांगा, शिष्यने दिया, कालिदासने उसमें अपनी निन्दा देखकर शिष्यसे कहा–भाई तेरे गुरुने यह श्लोक तो अति उत्तम बनाया है परंतु इसमें भूलसे एक अशुद्धि रहगयी है, यदि वह ठीक होजाय तो राजा भोज बहुत ही प्रसन्न होगा।

उस भोले शिष्यने हाथ जोड़कर कहा कि–हे महाराज! जो तुम इसको ठीक करदो तो मेरे ऊपर और मेरे गुरुके ऊपर महान् उपकार होगा।

कालिदास तो यह चाहता ही था उसने पहला 'अ' के पास 'ा' ऐसी लकीर खींच दी, इस कारण श्लोकका अर्थ ही बदलगया (पाठकोंको जानना चाहिये कि, यह शिष्य कालिदासको जानता नहीं था केवल नाम ही सुना था और इसी कारण कालिदासको अधिक सुगमता होगयी थी)

पश्चात् उस शिष्यने सभामें आकर कहा कि, यह नवीन श्लोक मेरे गुरु शतंजय कविने दिया है। राजाने कहा सुनाओ कैसा श्लोक है तब शिष्यने निम्नलिखित श्लोक पढ़ा—

आपशब्दशतं माघे भारवौ च शतत्रयम्।
कालिदासे न गण्यन्ते कविरेकश्शतंजयः॥ १॥

अर्थात्—आप अर्थात् जलके सौ नाम तो माघकविको ज्ञात हैं तीन सौ भारविको ज्ञात हैं और कालिदासको कितने हैं, सो गिनती ही नहीं परन्तु मुझ शतंजय कविको तो एक केवल "आप" ही शब्द ज्ञात है इसके अतिरिक्त अन्य नाम ही नहीं जानता।

यह श्लोक सुनकर बहुत पंडित शतंजय कविका हास्य करने लगे, इस कारण वह शिष्य लज्जायुक्त हो वहांसे चल दिया, उसने अपने गुरुसे मार्गमें तथा सभामें हुई समस्त वार्ता कही, मार्गमें मिलनेवाला मनुष्य कालिदास ही था इस प्रकार शतंजय कविको निश्चय हुआ वह लज्जित होकर उस नगरसे निकलकर अन्य देशको चला गया।

कला ७.

(सम्पूर्ण सुख)

एक समय मुख्य मन्त्रीने राजाको अत्यंत व्यय करते देखकर राजाके शयन स्थानमें एक कागजपर निम्नलिखित श्लोकका एक चरण लिखकर चिपका दिया कि—

१ च०—" आपदर्थं धनं रक्षेत् "

अर्थात्—आपत्तिके अर्थ धनकी रक्षा करनी चाहिये। राजा जब शयनसे उठा तब उसने उसको पढ़ा और पढ़कर चित्तमें अत्यन्त हँसा पश्चात् उसी कागज-पर राजाने दूसरा चरण लिख दिया।

२ च०—" श्रीमतामापदः कुतः ? "

अर्थात्— श्रीमानोंको आपत्ति कहां ?

दूसरे दिन मन्त्रीने दूसरे चरणको लिखा देखकर निम्नलिखित तीसरा चरण लिख दिया।

३ च०—" सा चेदपगता लक्ष्मीः "

अर्थात्—वह लक्ष्मी चली जावेगी तब। फिर राजाने तीसरे चरणको देखकर चौथा चरण लिख दिया।

४ च०—"संचितार्थो विनश्यति॥ १ ॥"

अर्थात्—तब एकत्र किया हुआ भी सब नष्ट हो जायगा।

मंत्री इस चरणको देखकर राजाके चरणोंमें गिर गया और कहा—हे राजन्! मेरा अपराध क्षमा कीजिये।

पश्चात् राजा अपने भवनमें जाकर रानियोंसे अनेक प्रकारकी वार्त्तालाप करके शयनभवनमें सो गया।

उसी रात्रिमें अवसर पाकर एक और ब्राह्मण सुरंग लगाकर राजाके शयनभवनमें चोरीके लिये आया और वहां मोती रत्न आदिसे जडे हुए अनेक भूषण चोरी

करके ले जानेका विचार कर रहा था, इतनेमें राजाकी आंखे खुलीं और विचारकर निम्नलिखित श्लोकके तीन पाद बनाकर बारंबार कहने लगा—

३ च०—" चेतोहरा युवतयः सुहृदोऽनुकूलाः
सद्बान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भृत्याः।
गर्जन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गाः "

अर्थात्—चित्तको हरनेवाली मेरी युवती स्त्रियें हैं, मित्र मेरे अनुकूल हैं, बांधवजन श्रेष्ठ हैं, सेवकजन नम्रतासे बोलनेवाले हैं, गर्जनेवाले हाथी हैं और अत्यंत चञ्चल घोडे हैं। इस प्रकार तीन चरण कहकर सम्पूर्ण सुख वर्णन कर रहा था परन्तु चौथा चरण ठीक २ न बनता था और श्लोक पूर्ण न होनेके कारण बारंबार इन तीनों चरणोंको कह रहा था वह चोर सुनते सुनते बोल उठा कि—

"संमीलने नयनयोर्न हि किंचिदस्ति ॥ ३ ॥"

अर्थात्-हे राजन्! जब नेत्र मिच जायँगे (मृत्यु हो जायगी) तब कुछ भी नहीं है।

राजा इस चरणको सुनकर चमत्कृत हुआ कि— "यहां इस समय यह कौन मनुष्य" जब देखा तो एक चोर खड़ा है तब चोर राजाको अपनी ओर आता देखकर हाथ जोड़कर कहने लगा महाराज! मैं चोर हूँ मुझे क्षमा कीजिये। राजा अपना श्लोक पूर्ण हुआ जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उस चोरको वह सब आभूषण देकर सन्तुष्ट किया।

पश्चात् वह धनहीन चोर (ब्राह्मण) बाजारमें उत्तम उत्तम वस्त्रादि और बहुमूल्यवान् आभूषण धारण किये विचर रहा था, राजाके मनुष्य उस ब्राह्मणको इतने आभूषण वस्त्रादि सहित देखकर विस्मित हुए और उसको राजाके समीप ले गये।

राजाने उसका पूरा हाल सुनकर कहा—हे ब्राह्मण! तुम इतने धनहीन थे परंतु अब यह वस्त्र आभूषणादि कहांसे लाये? तब ब्राह्मण बोला—

"भेकैः कोटरशायिभिर्मृतमिव
क्ष्मान्तर्गतं कच्छपैः
पाठीनैः पृथुपङ्कपीठलुठना-
द्यस्मिन्मुहुर्मूर्च्छितम्।
तस्मिन्शुष्कसरस्यकालजलदे-
नागत्य तच्चेष्टितं
यत्राकुम्भनिमग्नवन्यकरिणां
यूथैः पयः पीयते॥"

अर्थात्—जहां मेंडक मृतकोंकी सदृश खखोड़लोंमें पड़े थे, कछुए पृथ्वीमें पड़े थे, मछलियें जलरहित कीचमें लोटती मूर्च्छित हो रही थीं ऐसे सूखे सरोवरमें अकाल मेघने आकर वर्षा की, तब वह सब क्रीडा करने लग गये और वनके हस्तियोंका समूह स्नान कर जल पीने लगा।

इस प्रकार ब्राह्मणके वचन सुनकर राजा अत्यंत प्रसन्न हुआ और इसको अत्यंत विद्वान् अपराधरहित रात्रिका चोर समझकर भी लक्ष रुपये प्रदान किया।

कला ९.

(कालिदासका गुरु)

भोजराजकी सभामें एक विष्णुशर्मा नामक पंडित था, उससे कालिदासकी अनबन थी, वह किसी प्रकारसे कालिदासका अपमान करना चाहता था, एक दिन धारा नगरीमें एक अविद्वान् ब्राह्मण आया उसने विष्णु-शर्मासे मिलकर कहा–महाराज ! मुझे कोई विद्या वा कला नहीं आती, मैं निर्धन हूँ इस कारण कोई उपाय करके मुझे धन दिलाओ तो मेरे ऊपर महा अनुग्रह होगा। इस प्रकार उस ब्राह्मणके दीन वचन सुन विष्णु-शर्माको दया आयी, परन्तु उस समय अपनी ओर कालिदासकी बात याद आगयी, बदला लेनेकी कोई युक्ति सोचने लगा सो एक युक्ति बहुत ठीक बैठी, उसने उस ब्राह्मणसे कहा–तुझको कोई भी विद्या नहीं आती इस कारण तुझसे राजसभामें जाकर विवाद भी नहीं हो सकता परन्तु तुझको एक युक्ति बताऊं, इस प्रकारसे करे तो तेरा कार्य होगा. वह युक्ति यह है कि नगरीसे बाहर जाकर साधुका वेष धारण करके बैठ जा, तेरी सेवाके वास्ते चार शिष्य मैं दूँगा. वहां आते जाते मनुष्योंसे तू "कालिदासके गुरु हैं" ऐसा चेलोंसे

कहलाना परंतु किसीके साथ कुछ बोलना नहीं, क्योंकि बोलनेसे मनुष्यकी परीक्षा तत्काल हो जाती है।

वह ब्राह्मण हर्षपूर्वक स्वीकार करके नगरसे बाहर साधुका वेष बनाकर जा बैठा, विष्णुशर्माने अपने चार विश्वासी मनुष्योंको शिष्य बनाकर बैठाया, आने जानेवाले मनुष्योंने पूछा कि, यह कौन हैं? तब शिष्योंने उत्तर दिया कि, यह कालिदासके गुरु हैं, यह बात सम्पूर्ण नगरमें फैल गयी. कालिदासने यह बात सुनी और विचारा तो यह निश्चय हुआ कि, यह कार्य विष्णुशर्माका है। राजाने सुनकर कालिदाससे पूछा कि—कालिदास! तुम्हारे गुरुजी पधारे हैं उनके निकट तुम जाते हो या नहीं ?

कालिदासने उत्तर दिया—महाराज! मेरे गुरुजी पधारे हैं और उनके दर्शन करनेको न जाऊँ यह क्यों?

पश्चात् कालिदास रात्रिको गुरुजीके समीप गये, उन शिष्योंसे कहा कि—हम गुरुके साथ बात करेंगे इस कारण तुम बाहर जाओ यह कह उनको बाहर निकाला. तदनन्तर कालिदासने उस ब्राह्मणसे पूछा—अरे ब्राह्मण! तू मेरे गुरुका नाम धारण करके तो बैठा है परन्तु उसका फल क्या होगा इसका भी कुछ विचार किया या नहीं ?

"कालिदास सम्मुख आकर बैठा है यह न जाने क्या करेगा" इस कारण वह ब्राह्मण मनमें भयभीत हुआ और हाथ जोड़कर बोला—महाराज ! यह वेष

मैंने विष्णुशर्माके कथनसे किया है इस कारण मेरा अपराध क्षमा करो, मुझे उदर पोषणका कुछ साधन न होनेपर मैंने विष्णुशर्माकी सहायता मांगी. तब उसने मुझे इस स्थानपर लाकर बैठाया है, ये मनुष्य भी उसके ही हैं. उस ब्राह्मणको भयभीत देखकर कालिदासने कहा-यह भेष तूने धनप्राप्ति करनेके निमित्त किया है, इसलिये कुछ चिन्ता नहीं, मैं तुझे धन दिलवाऊँगा परन्तु एक कार्य यह करना कि राजा जब तुझे बुलावें तब राजसभामें तो आना परन्तु वह तुझसे कोई प्रश्न करैं तो तू मेरी ओर अंगुली कर देना और कुछभी न बोलना।

यह कह कालिदास वहांसे चला गया, दूसरे दिन राजाने कालिदासके गुरुको पालकीमें बुलाया और सभामें उसको योग्य आसनपर बैठाकर नमस्कार करके पश्चात् राजाने कालिदाससे कहा-गुरुजीके साथ वार्तालाप करना चाहिये यह मेरी इच्छा है ।

कालिदासने उत्तर दिया कि,-वह समर्थ हैं ?

राजाने गुरुजीसे कहा-महाराज ! लंकाधीश जो दशानन है उसको कोई 'रावन' कहते हैं और कोई 'रावण' कहते हैं इन दोनोंमें कौनसा ठीक है ?

राजाका यह प्रश्न सुनकर आपने कभी राजसभा तो देखी न थी न राजाके साथ कभी वार्ता ही की थी इस कारण वह ब्राह्मण घबड़ा गया, उस समय कालिदासकी

ओर अंगुली करना तो भूल गया और एक साथ 'राभण' ऐसा बोल उठा. उसका यह शब्द सुनकर राजसभा विस्मित हुई. राजाने उससे पूछा कि, तुमने 'राभण' कैसे कहा? इसको सुनकर वह और भी घबरा गया अन्तमें तत्काल कालिदासकी ओर अंगुली उठा दी उसको देखकर कालिदासने तत्काल यह श्लोक कहा—

"भकारः कुम्भकर्णे च भकारश्च विभीषणे।
तयोर्ज्येष्ठे कुलश्रेष्ठे भकारः किं न विद्यते॥ १॥"

अर्थात्—कुम्भकर्णके नाममें भकार है और बिभीषणके नाममें भकार है, तब इन दोनोंसे बडा और कुलमें श्रेष्ठ जो भाई है उसके नाममें भकार क्यों न होना चाहिये?

यह सुनकर राजाने कालिदासके गुरुको एक लक्ष रुपया दिया, कालिदासका यह कर्त्तव्य जानकर विष्णुशर्मा मनमें अति लज्जित हुआ।

कला ९.

(पुत्रहोम)

एक समय राजाभोज वेष बदलकर रात्रिको नगरकी चर्चा और वृत्त सुनने देखनेके लिये गये, फिरते फिरते वह एक ब्राह्मणके घरपर जाकर खड़े हो गये. वहां यह चमत्कार देखा कि—एक ब्राह्मणकी स्त्री अपने पतिकी सेवामें तत्पर थी अर्थात् अपनी जंघापर शिर रखकर सोयेहुए स्वामीको हवा कर रही थी. इतनेमेंही उसका पुत्र

(बालक) अग्निसे प्रज्वलित झँझरीमें गिर गया. वह बालक अग्निमें पड़ा था तो भी उसको कुछ अग्नि नहीं लगी, बल्कि अग्निमें पड़ा पड़ा हँसने लगा, उसकी माता पतिव्रता थी इस कारण उसको अग्निमेंसे बाहर निकालनेके बदले उसमें ही पड़ा रहने दिया और हँस हँसकर बातें करने लगी, यह नवीन चमत्कार देखकर राजा अपने घर आया दूसरे दिन सभामें पंडितोंसे उसने यह प्रश्न किया-

समस्या-" हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः "

यह श्लोकका चौथा पाद है, इस कारण इसके तीन चरण कहो?

इसको सुनकर सब पण्डित चुप हो गये, परन्तु कालिदासने उत्तर दिया-

" सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके
न बोधयामास पतिं पतिव्रता ॥
पतिव्रताशापभयेन पीडितो
हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥ १ ॥ "

अर्थात्-"अपना पुत्र अग्निमें पड़ा है" यह जानकर भी उस पतिव्रता स्त्रीने अपने स्वामीको नहीं जगाया अर्थात् उठी नहीं और अपने पतिकी सेवामें निमग्न ही रही, उसके पुत्रको अग्निसे कुछ भी पीड़ा नहीं हुई. क्योंकि, अग्निको पतिव्रताके शापका भय था इस कारण अग्नि चन्दनकी सदृश शीतल हो गयी।

इस प्रकार कालिदासका श्लोक सुनकर राजा भोज मनमें विचार करने लगा कि-यह चमत्कार मैंने ही देखा, मेरे अतिरिक्त और किसीको भी इसकी खबर न थी, परंतु कालिदासने वैसा ही कह सुनाया इस कारण इसको कोई मन्त्र सिद्ध है। ऐसा चित्तमें विचार कर राजा अपने भवनमें गया।

कला १०.

(कालिदासका मच्छ)

एक दिन राजा भोजसे किसी पंडितने कहा-महाराज! आपकी सभामें कालिदासकी सदृश किसीको भी मान नहीं और वह अत्यन्त उत्तम जातिका ब्राह्मण है, वह उत्तम होनेपर भी मच्छाहार करता है सो उसको यह कदापि उचित नहीं है।

पंडितके इस प्रकार वचन सुनकर भोजको आश्चर्य हुआ और कहने लगा कि-यह बात सम्भव नहीं हो सकती. क्योंकि ऐसा अधर्मका कार्य कालिदाससे कदापि नहीं होसकता और न हुआ।

दूसरा पंडित जो कालिदाससे द्वेष करता था, उसने इस बातको पुष्ट करके कहा, जो यह बात आपको प्रत्यक्ष करके दिखा दें तब तो इसको सत्य मानोगे या नहीं?

राजाने यह बात स्वीकार की. तब उस पंडितने कालिदासके पीछे गुप्तभावसे मनुष्य रक्खे सो इस बातकी

खबर कालिदासको भी होगयी, उसने विचारा कि, इन लोगोंने मेरे विषयमें नाना प्रकारकी बातें राजासे कही हैं इस कारण इनको उचित शिक्षा देनी चाहिये।

यह विचारकर वह दूसरे दिनही नदीपर स्नान करने गया, वहांसे एक महत् मच्छ पकड़कर कपडेके भीतर रख लिया. यह बात उस पंडितके गुप्त मनुष्यने देखी, उसने जाकर तत्काल पंडितोंसे कहा. पंडितोंने तुरंत ही राजासे जाकर कहा कि, कालिदास नदीपरसे स्नान करके आते हैं उनको इधरसे इधरही बुलालो और देखो कि, उनके पास मच्छ है या नहीं? उन्होंने अब ही एक मच्छ पकड़कर कपड़ेमें लपेट रक्खा है, जब घर आवेंगे तब ले आवेंगे इस कारण युक्तिसे कालिदासको यहां बुला लीजिये, तब हमारी बातका भी आपको पूरा २ विश्वास हो जायगा।

तब भोजराजाने मनमें विचार किया कि, यह बात यदि सत्य है, तो अत्यंत बुरा होगा. पश्चात् उन पंडितोंसे कहा—तुम कहते हो तो आवश्यकीय है परन्तु जो यह बात असत्य हुई तो नगरसे बाहर कर दूँगा। यह बात तुमको स्वीकार हो तो मैं कालिदासको बुलाऊँ।

पंडितोंको निश्चय था ही इस कारण उन्होंने ऐसा करना झट स्वीकार करलिया, राजाने कोतवालको आज्ञा दी कि, कालिदास नदीपर स्नान करने गया है उसको किसीसे बात विना कियेही और उसके साथ जो वस्तु हो उसके सहित यहां ले आओ।

यह आज्ञा सुनते ही कोतवालने कालिदासको नदी-परसे लाकर राजाके समीप उपस्थित किया, कालिदासकी बगलमें कपडेसे लिपटा हुआ मच्छ था, उसको देखकर राजाने पूछा-

राजा-'कक्षे किम्' (बगलमें क्या है?)

कालिदास-'मम पुस्तकम्' (मेरी पुस्तक है.)

राजा-'किमुदकम्' (इसमें जल कैसा है?)

कालिदास-'काव्येषु सारोदकम्' (काव्यमें जो सार है वही जल है.)

राजा-'गन्धः किम्' (इसमें गन्ध कैसा है?)

कालिदास-'ननु रामरावणवधात्संग्रामगन्धोत्कटः' (राम रावणके युद्धमें जिनकी मृत्यु हो गयी थी उनकी दुर्गन्ध है.)

राजा-'जीवः किम्' (यह पुस्तक जीवित क्यों है?)

कालिदास-'मम गौडमन्त्रलिखितात्संजीवनं पुस्तकम्' (यह पुस्तक मेरे गौडमन्त्रसे लिखी हुई है इससे जीवित है.)

राजा-'पुच्छः किम्' (इसके पूंछ क्यों है?)

कालिदास-'खलु तालपत्रलिखितम्' (यह पुस्तक ताड़के पत्तोंपर लिखी है इससे.)

राजा-'हाहा गुणाढ्यो भवान्' (हाहा यह हँसनेका अनुकरण है, कालिदास! तुम बड़े गुणवान् हो.)

अर्थात् हँसते हुए और यह पिछला वाक्य कहते हुए राजाने तत्काल कालिदासकी बगलमेंसे वस्त्रमें लिपटा हुआ मच्छ खींच लिया और उसे खोला तो मन्त्रके प्रसादसे पत्तोंपर लिखी हुई पुस्तक है। पुस्तकको देखते ही पंडित भयभीत हो गये। राजाने पंडितोंकी समस्त बात कालिदाससे कही, पश्चात् कोतवालको आज्ञा दी कि, इन सब पंडितोंका घर छीनकर इनको देशसे बाहर निकाल दो. यह आज्ञा सुनकर कालिदासने राजाको विनती की कि, हे महाराज! देशमें उत्तम मनुष्य भी होते हैं उसी प्रकार दुष्ट भी होते हैं, बड़े मनुष्यको सबके ऊपर एकसी ही दृष्टि रखनी चाहिये। जैसे वट आदि वृक्ष अपने पोषणकर्त्ताको और नष्टकर्त्ताको एकसी ही छाया करते हैं तैसे ही आप हमारे वृक्ष हैं और हम आपकी छायामें बैठे हैं, इस कारण इन सब पंडितोंके ऊपर कृपा करके इनका अपराध क्षमा कर दीजिये।

कालिदासके यह वचन सुनकर राजाने उनको मुक्त करके कहा—हे कवियोंमें श्रेष्ठ कालिदास! तुम्हारी समानता करनेमें इस पृथ्वीपर कोई भी शक्तिमान् नहीं. क्योंकि, जो तुमसे द्वेष करते हैं उनके ऊपर भी तुम उपकार ही करते हो इसलिये तुमको धन्य है?

सब पंडित भी कालिदासके इस महा उपकारसे उनका यश गाने लगे, तदनंतर कालिदास राजाकी आज्ञा लेकर अपने घर गया।

कला ११.

(कालिदासका मुण्डन)

धारानगरीमें एक अत्यन्त चतुर रूप और यौवन-सम्पन्न वेश्या रहती थी, उसके यहां कालिदास जाता था और राजा भोज भी उसके यहां गुप्त भावसे जाते थे, वह वेश्या महाचतुरा थी, इस कारण अपने घरमें राजा भोजका और कालिदासका मेल नहीं होने देती थी. परंतु एक दूसरेकी बात जानते थे, उसके यहां प्रतिदिन दोनों आते थे तो भी कालिदास राजा भोजको न मिलता था. तब राजाने कहा—कोई युक्ति शोचनी चाहिये; राजाने एक युक्ति विचारकर उस वेश्यासे कहा—'जब कालिदास तेरे पास आवे तब उससे कहना कि, जो तुम मुंडन कराकर आओ तो मैं तुम्हारे वशमें रहूं और राजा भोजका आना बंदकर दूं' वेश्याने इसी प्रकार कराना स्वीकार किया। दूसरे दिन कालिदास आये तब वेश्याने उसी प्रकार कहा, कालिदास मनमें समझ गये कि; यह काम राजाका है परन्तु राजाका हास्य करना निश्चय करके उसने मुंडन कराया, पश्चात् वेश्याको मुंडन किया हुआ मस्तक दिखाकर कहा—आज जब राजा भोज आवें तब तू अप्रसन्न होजाना, राजा जब तुम्हें मनाने आवें तब तू राजासे कहना कि—पहिले गधेकी बोली बोलदो पश्चात् तुम्हारा मनोरंजन

करूंगी। यह कहकर कालिदास वहांही दूसरे घरमें छिप रहा. कुछ समयके पश्चात् राजा आया उस समय यह वेश्या अप्रसन्न होकर बैठ गयी, राजाने उसका कारण पूछा परंतु उसने उत्तर न दिया। तदनंतर राजाने उसको मनाया, तब वेश्याने कहा–हे राजाजी! जो तुम गधेकी बोली बोलदो तो तुमसे बोलूँगी, राजा विषयांध होकर विचारने लगा कि यहां मुझे कौन देखता है मैं गधेके सदृश बोलूं यह बात किसीको भी ज्ञात न होगी।

यह विचारकर राजा तीन बार गधेकी बोली बोला, तदनन्तर वेश्याने राजाको नृत्य गायन आदिसे मोहित कर बिदा किया, राजाके जानेपर कालिदास भी वहांसे चला गया। दूसरे दिन राजा सभामें आकर बैठा और कालिदासकी मूँछ आदि सब केश मुँडे देखकर राजाने कहा–

कालिदास कविश्रेष्ठ कस्मिन्पर्वणि मुण्डनम्।

अर्थात्–हे कवियोंमें श्रेष्ठ कालिदास! आज किस पर्वको मानकर मुंडन कराया है?

इसको सुनकर कालिदासने तत्काल उत्तर दिया कि–

राजानो गर्दभायन्ते तत्र पर्वणि मुण्डनम्।

अर्थात्–जहां राजालोग गधेके सदृश बोलते हैं अर्थात् आप बोले थे तब उसी पर्वमें मुंडन कराया

है । राजा और कालिदासके अतिरिक्त इन दोनों वाक्योंका अर्थ कोई भी न समझा ।

कालिदासकी बुद्धिसे राजा आश्चर्यको प्राप्त हो अपने भवनमें गया ।

कला १२.

(गुणनिधि पंडित)

राजा भोजकी सभामें कालिदास महाविद्वान् हैं इस कारण उसके साथ वादविवाद करना चाहिये यह निश्चय करके मदनपुरनिवासी गुणनिधिनामक पंडित धारानगरीमें आकर एक धर्मशालामें ठहरा, उसके चित्तमें ऐसा विचार था कि, कालिदासको जीतकर सभामें श्रेष्ठ पदवी प्राप्त करूंगा ।

वह प्रतिदिन भाड़ेकी पालकीमें बैठकर बड़ी धूमधामसे नगरमें विचरता था, इस बातकी कालिदासको भी खबर होगयी, कालिदास धीमर (पालकी उठानेवाले) का वेष धारण करके जहां गुणनिधि ठहरा था उस स्थानके निकट जाकर बैठ गया, कुछ समयके पीछे गुणनिधिके सेवकने बाहर आकर पुकारा कि—कोई धीमर है ?

तब कालिदासने आकर कहा—हां महाराज ! क्या आज्ञा है ?

उस सेवकने कहा—जा तीन धीमर और ले आ ।

कालिदास तीन धीमर और ले आया, पश्चात्

पालकी तैयार करके गुणानिधिसे कहा-महाराज ! पालकी तय्यार है ।

गुणानिधि अभिमानपूर्वक पालकीमें बैठ गया और आज्ञा दी कि, बड़े बाजारमें होकर राजमन्दिरके आगे होते हुए पीछे यहां ही आ जाना ।

आज्ञा होते ही कालिदास और अन्य धीमरोंने पालकी उठायी और उसकी इच्छानुसार नगरमें फिराकर पीछे वहीं लाकर उतार दिया. गुणानिधि पालकीसे उतरकर धीमररूप कालिदाससे बोला-

श्लोकपूर्वार्ध-"अयमान्दोलिकादण्डः
स्कन्धं किं तव बाधति ।"

अर्थात्-हे पालकीवाले ! क्या इस पालकीका दण्ड (डण्डा) तुम्हारे कन्धेको बड़ा दुःख देता है ?

इस स्थानमें गुणानिधि व्याकरणके नियमके विरुद्ध 'बाधते' के स्थानमें 'बाधति' बोला, इसको सुनकर धीमरवेषधारी कालिदासने झट निम्नलिखित आधा श्लोक अर्थात् उत्तरार्ध कहा-

"न बाधते तथा मां स यथा बाधति बाधते"

अर्थात्-तुमने जो व्याकरणविरुद्ध 'बाधते' के स्थानमें 'बाधति' कहा है वह 'बाधति' जितना बाधित करता है उतना पालकीका दंड बाधित नहीं करता ।

यह सुनकर आश्चर्यको प्राप्त हो गुणनिधिने कहा-इतना ज्ञान तुझे कैसे हुआ?

धीमरवेषधारी कालिदासने कहा-तुम्हारे सदृश पंडितोंके समागमसे मैं कुछ समझता हूँ।

पंडितने पूछा-किसका समागम है?

उसने उत्तर दिया कि इस नगरमें कालिदास नामके पंडित रहते हैं, उनके यहां मैं जाता हूँ और उनकी संगतिसे ही कुछ समझता हूँ।

धीमरका यह कथन सुनकर गुणनिधिने मनमें विचार किया कि-कालिदासका धीमर जो इतना विद्वान् है, तो उसको कौन जाने कितना विद्वान् हो, ऐसे विद्वान्को किस प्रकार पराजित कर सकूँगा, परन्तु धन खर्च करके यहांतक आया हूँ तो कालिदास कैसे हैं, यह तो देखूँ और जो अत्यन्त विद्वान् देखूँगा तो उनके साथ वादविवाद न करके और अपना नाम तथा आनेका प्रयोजन गुप्त रखकर पश्चात् लौट जाऊँगा।

यह निश्चय करके वह कालिदासके घर जानेको तैयार हुआ कालिदास वहांसे निकलकर अपने घर आया और दासीका वेष धारण करके आङ्गन झाड़ने लगा, इतनेमें गुणनिधिने आकर दासीरूप कालिदाससे पूछा-हे दासी! कालिदास कहां हैं?

दासीने उत्तर दिया--

मुखलीनखलीनलीलया
नमयन्नुन्नमयन्नवं हयम् ।
निरगादुरगारिरंहसा
पुरगारुत्मतगोपुराद्बहिः ॥ १ ॥

अर्थात्–घोड़ेकी लगामको थाम उसके ऊपर सवार होकर घोड़ेको कुदाते हुए कालिदास गरुड़के समान अत्यन्त वेगसे नीलमणियोंके पुरदरवाजोंसे बाहर गये हैं।

दासीका यह कथन सुनकर उसकी विद्वत्ता देखनेका निश्चय करके फिर उससे पूछा--हे स्त्री ! तू कालिदासकी दासी कहाती है परन्तु तेरे शरीरपर आभूषण क्यों नहीं ? दासीने उत्तर दिया–

हस्तस्य भूषणं दानं
सत्यं कण्ठस्य भूषणम् ।
श्रोत्रस्य भूषणं शास्त्रं
भूषणैः किं प्रयोजनम् ॥ १ ॥

अर्थात्--दान करना हाथका भूषण है, सत्य बोलना कंठका भूषण है, शास्त्र सुनना कानका भूषण है, तो अन्य भूषणोंका क्या प्रयोजन है ?

यह सुनकर गुणनिधिने पूछा–हे स्त्री ! तुम कौनसे देवकी पूजा करती हो ? उसने उत्तर दिया–

विहंगो वाहनं यस्य
त्रिकचा यत्र भूषणम् ।

सालपा वामभागे च
ते देवाः शरणं मम ॥ १ ॥

अर्थात्–वि अर्थात् गरुड, हं अर्थात् हंस और गो अर्थात् बैल, यह तीन जिनके वाहन हैं और त्रि अर्थात् त्रिशूल, क कमंडलु और च अर्थात् चक्र यह तीन जिनके हाथोंमें हैं और सा अर्थात् सावित्री, ल अर्थात् लक्ष्मी और पा अर्थात् पार्वती यह तीन जिनके वाम ओर हैं ऐसे देव मेरे शरण रक्षा करनेवाले हैं अर्थात् उन्हीकी पूजा करती हूं।

यह सुनकर गुणनिधि वहांसे बाहर निकलकर विचारने लगा कि, यह दासी होनेपर भी इतनी गुणवती है तो मेरा नाम गुणनिधि अर्थात् गुणका भंडार है ऐसा होनेपर भी मैं खाली हूँ जिस कालिदासकी दासी ही जीतनी अशक्य है तो कालिदासको जीतना बिलकुल असंभव है, यह विचार धारानगरी त्यागकर चल दिया।

कला १३.

(त्रिपीडास्तु दिने दिने)

एकदिन राजा भोज सभामें बैठे थे, उस समय एक ब्राह्मणने आकर राजाको नीचे लिखे अनुसार आशीर्वाद दिया–

" त्रिपीडास्तु दिने दिने। "

अर्थात्–तुम्हें तीन पीड़ा प्रतिदिन हों।

ब्राह्मणका ऐसा कथन सुनकर राजा अत्यन्त क्रोधित हुआ और सेवकोंको आज्ञा देकर उसको बाहर निकलवा दिया. वह ब्राह्मण इस प्रकार अपना अपमान देखकर घरको लौट चला, मार्गमें जाते हुए उसको कालिदास मिले उनसे इस ब्राह्मणने यह सब बात कही, तब ब्राह्मणका अपमान समझकर उसको धैर्य देकर कहा—तू अपने घरमें निश्चिंत होकर बैठ; मैं अब सभामें जाकर उसी बातका यत्न करता हूँ। यह कहकर कालिदास सभामें गया, जब कालिदास आया तब राजाने वही प्रश्न किया—

"त्रिपीडास्तु दिने दिने।"

यह सुनकर कालिदासने तत्काल उत्तर दिया—

प्रदाने विप्रपीडास्तु पुत्रपीडास्तु भोजने।
शयने पतिपीडास्तु त्रिपीडास्तु दिनेदिने॥ १॥

अर्थात्—दान देते समय ब्राह्मणको दान किस प्रकार दूँ यह पीडा होती है, भोजन करते समय पुत्रको किस प्रकार सन्तोषित करूँ यह पीडा होती है, शयन करते समय पत्नीके साथ विलास करनेकी पीड़ा होती है। हे राजा! इस प्रकार तीन पीड़ा तुम्हें प्रतिदिन होगी।

कालिदासका श्लोक सुनकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उस ब्राह्मणको सभामें बुलाकर क्षमा मांगी और धन देकर प्रसन्न किया।

कला १४.

(विलोचन कविका कुटुम्ब)

एक समय विलोचन कवि अपने कुटुम्बसहित सभामें आकर चुप खड़ा रहा उसको खड़ा हुआ देखकर राजा बोला कि-

"क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे"

अर्थात्-महान् पुरुषोंके कार्यकी सिद्धि शरीरहीमें होती है सामग्रीमें नहीं होती? वह कवि अत्यन्त चतुर था वह यह समस्या सुनकर तत्काल बोल उठा-

घटो जन्मस्थानं मृगपरिजनो भूर्जवसनं
वने वासः कन्दादिकमशनमेवंविधगुणः।
अगस्त्यः पाथोधिं यदकृत करांभोजकुहरे
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे १

अर्थात्-जिसका जन्मस्थान तो कुम्भ है, मृग आदिक कुटुंब हैं, भोजपत्र वस्त्र हैं, वनमें वास है, कंद आदि भोजन है ऐसे गुणवाले अगस्त्यमुनि समुद्रका आचमन करगये, इस कारण बडोंकी क्रियासिद्धि शरीरमें ही होती है, सामग्रीसे नहीं। इस समस्यापूर्तिको राजा सुनकर अत्यन्त प्रसंन्न हुआ और बहुमूल्यवान् सोलह रत्न देकर उसको संतुष्ट किया, पश्चात् उसकी स्त्रीसे कहा हे मातः! तुम भी कहो। यह सुनकर वह भी तत्काल बोल उठी-

रथस्यैकं चक्रं भुजगनमिताः सप्त तुरगा
निरालम्बो मार्गश्चरणविकलः सारथिरपि ।
रविर्यात्येवान्तं प्रतिदिनमपारस्य नभसः
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

अर्थात्–सूर्यके रथका चक्र तो एक है और सात घोडे हैं वह भी सर्पोंसे बँधे हुए हैं, आकाशमें मार्ग है और सारथि पंगुला है इस प्रकार होनेपर भी सूर्य प्रतिदिन· अपार आकाशका अन्त कर देता है इस कारण बडोंकी क्रियासिद्धि शरीरमें ही होती है, सामग्रीसे नहीं ।

इसको सुनकर तो राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और इसको बहुमूल्यवान् बत्तीस रत्न देकर संतुष्ट किया । पश्चात् इसके पुत्रसे कहा–हे विप्रपुत्र ! तुम भी कुछ कहो. यह सुनकर वह भी तत्काल कहने लगा–

न जेतव्या लंका चरणतरणीयो जलनिधि-
र्विपक्षः पौलस्त्यो रणभुवि सहायाश्च कपयः ।
पदातिर्मर्त्योऽसौ[1] सकलमवधीद्राक्षसकुलं
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

अर्थात्–लंकापुरी न जीतने योग्य थी. न समुद्र ही चरणोंसे तरने योग्य था फिर भी पुलस्त्यऋषिका पौत्र 'रावण' शत्रु था और वहां रणभूमिमें केवल वानर ही

---

१ रामचन्द्रः ।

सहायक थे और रामचन्द्र पैदल चलनेवाले मनुष्य ही थे तब भी उन्होंने सम्पूर्ण राक्षसोंके कुलको नष्ट कर दिया, इस कारणसे यही सिद्ध होता है कि महान् पुरुषोंके कार्यकी सिद्धि शरीरहीसे होती है, सामग्रीसे नहीं।

यह सुनकर राजा अतिशय प्रसन्न हुआ और इसको चौंसठ बहुमूल्य रत्न देकर संतुष्ट किया। तदनन्तर कोमल करकमलोंवाली सम्पूर्ण सुन्दर अंगके अवयवोंसे शोभित शृङ्गाररससे उत्पन्न हुई मूर्तिकी सदृश, अपनी लज्जासे मूर्तिधारिणी लज्जाको भी लजानेवाली उस त्रिलोचनकविकी पुत्रवधूसे भी कहा—हे मातः! तुम भी कुछ कहो-इसको सुनकर वह भी तत्काल कहने लगी-

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी चञ्चलदृशां
दृशां कोणो बाणः सुहृदपि जडात्मा हिमकरः।
स्वयं चैकोऽनङ्गः सकलभुवनं व्याकुलयति
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे १॥

अर्थात्—जिसके पुष्प तो धनुष है, भौंरारूप प्रत्यंचा है, चंचल नेत्रोंवाली स्त्रियोंके नेत्रकोण ही जिसके बाण हैं, जड़ात्मा चन्द्रमा जिसका मित्र और स्वयं अंगरहित है, ऐसा अकेला ही कामदेव सम्पूर्ण लोकको व्याकुल करदेता है इस कारण बड़ोंके कार्यकी सिद्धि प्रतापसे ही होती है, सामग्रीसे नहीं। इसकी कविता सुनकर तो राजा सहित सम्पूर्ण सभा चमत्कृत हो गयी।

और राजाने अत्यन्त प्रसन्न होकर अपनी लीलावती रानीके सम्पूर्ण मोती रत्न जड़ित आभूषण देकर हर्ष प्रगट किया और इन सबको अत्यन्त चतुर जानकर अपने नगरमें ही रक्खा।

कला १५.

(कालिदासकी अवज्ञा)

एक दिन राजा भोज कालिदासको साथ लिये बागमें विचर रहे थे उस समय भद्रमणि नामक महान् पंडित वहां आया, राजाको बीचमें लेकर कालिदासको दाहिने हाथ लिया और आप वाम ओर होकर विचरने लगा। राजा वाम ओर था इस कारण उसने अपना यश बढ़ानेके लिये एक श्लोकके तीन चरण रचकर राजा तथा कालिदासको सुनाये-

गृह्णात्येष रिपोः शिरः प्रतिजवं
कर्षत्यसौ वाजिनं
धृत्वा चर्म धनुः प्रयाति सततं
संग्रामभूमावपि ॥
द्यूतं चौर्यमथ स्त्रियं च शपथं
जानाति नायं करो-

अर्थात्-जो यह वाम हाथ है, वह दक्षिण हाथसे आगे होकर बड़े बड़े कार्य करता है, संग्राममें जब जाता है तब प्रथम वाम हाथसे शत्रुका मस्तक पकड़े पीछे

दक्षिण हाथसे खड्ग लेकर शत्रुका मस्तक काटते हैं, प्रथम ढाल अथवा धनुष वाम हाथमें पकड़कर पीछे दक्षिण हाथसे खड्ग उठाते हैं, अथवा धनुषकी डोरी खैंचते हैं, दूसरे वाम हस्तसे निंदा करने योग्य काम ठीक नहीं होता है, जैसे कि—जूआ खेलना, चोरी करना, परस्त्रीका स्पर्श करना तथा सत्य असत्य शपथ खाकर वचन देना यह चार काम वाम हाथसे नहीं होते।

अब इस श्लोकका चौथा चरण कालिदासको पूरा करना चाहिये। यह सुनकर कालिदासने कहा—इस श्लोकका चौथा चरण यह है—

दानानुद्यततां विलोक्य विधिना
शौचाधिकारी कृतः ॥ १ ॥

अर्थात्—वाम हाथसे दान कभी नहीं दिया जाता इससे ब्रह्माने उसको गुद प्रक्षालन करनेका काम सौंप कर शौचाधिकारी किया है।

यह सुनकर भद्रमणि अत्यन्त लज्जित हुआ, उसने राजाकी आज्ञा ली और उस दिनसे किसी दिन भी कालिदाससे श्रेष्ठ होनेकी इच्छा नहीं की। यह निश्चय करके चल दिया।

कला १६.

(मणिभद्र और सुशर्मा)

एक दिन कालिदास कार्यवश अन्य देशमें गये थे उनके पीछे धारानगरीमें एक आश्चर्यकारक विकट वार्ता

ऐसी हुई कि, मणिभद्र और सुशर्मा ब्राह्मणके दो पुत्र विद्याभ्यास करने काशीमें गये थे, मणिभद्रका यह नियम था कि, प्रातःकाल उठकर स्नानादि नित्य कर्म करके पश्चात् विद्याभ्यास करने बैठता था। परन्तु सुशर्माका नियम इसके विरुद्ध था अर्थात् प्रातःकाल उठकर स्नानादि कुछ भी न करके वैसेही पढ़ने बैठ जाता था। इस प्रकार कुछ समयान्तरमें दोनोंने गुरुके सम्मुख हाथ जोड़कर कहा—गुरुजी ! अब हमको आज्ञा दो तो हम स्वदेशको जावें। गुरुने उनको आज्ञा दी, इससे दोनों जने धारानगरीको चले. चलते चलते एक रमणीय वनमें आये वहां एक नदी बहती थी और उसके निकट उत्तम उत्तम वृक्षोंकी छाया हो रही थी, मणिभद्रने नदी देखकर उसमें स्नान करनेकी इच्छा की।

सुशर्माने कहा—आप यहां स्नान करके क्या करोगे? यह सुनकर मणिभद्रने कहा—यहां भोजन करके निश्चिन्त हो जावें, सुशर्माको भी यह बात उत्तम लगी। दोनों जने स्नान करनेको उतरे, स्नान करके बाहर आनेपर सुशर्माने कहा आपके पास सीधेका सामान तो है, परन्तु अग्नि कहांसे मिलेगी? मणिभद्रने कहा तू सामग्री तो तय्यार कर मैं अग्नि ले आऊँगा। सुशर्माने भोजनकी सामग्री तय्यार करके मणिभद्रसे कहा अब अग्नि ले आओ। मणिभद्रने अग्निका मन्त्र पढ़कर अग्नि उत्पन्न कर दी।

यह देखकर सुशर्माने विचार किया कि, हम दोनोंने

एकसाथ अभ्यास किया, परन्तु मेरे मन्त्रसे कुछ भी सिद्धि नहीं होती यह मणिभद्र प्रत्येक मन्त्रका उपयोग कर सकता है। हम दोनों घर जायँगे तो इसकी विद्या विख्यात होगी और मैं छोटा रहूँगा, इस कारण उसको यहां मारकर पीछे मैं घर जाऊँ। यह विचारकर उसने भोजन बनाया भोजन करनेके पश्चात् दोनों जने विश्राम लेनेके लिये सो रहे, मणिभद्र निर्भय होकर सोता था परन्तु सुशर्माको नींद न आई, मणिभद्रको पूर्ण निद्रामें जानकर सुशर्मा मारनेके लिये उसके हृदयपर चढ़ बैठा तब मणिभद्र तत्काल ही जाग उठा वह अपनेको मारनेके अर्थ हाथमें खड्ग लिये सुशर्माको देखकर अपना जीव बचानेके लिये हाहाकार करने लगा, परंतु सुशर्माने दृढ़ निश्चय किया था इससे उसकी कुछ भी न सुनी। मणिभद्रने देखा कि, यह किसी प्रकार भी नहीं मानता तब अपने पिताको चार अक्षर लिख देनेको कहा, सुशर्माने स्वीकार किया. तब उसने बड़के पत्रपर " अ, प्र, शि, ख, " यह चार अक्षर लिखे पश्चात् सुशर्माने उसके हृदयपर पांव रख कर एक हाथमें चोटी पकड़ी थी और दूसरे हाथमें खड्ग लिया था, उस खड्गसे मणिभद्रका मस्तक काट डाला। अनंतर अपना और उसका सामान लेकर सुशर्मा अपने घर आया. सुशर्माको अकेला आया देखकर मणिभद्रके पिताने अपने पुत्रका हाल पूछा, तब उसने

कहा—मणिभद्रका अभ्यास अभी पूर्ण नहीं हुआ है इस कारण वह काशीहीमें रहगया मेरा अभ्यास पूर्ण हो गया इससे मैं गुरुजीकी आज्ञा लेकर आया हूँ। जो पत्र तुम्हारे पुत्रने मुझे दिया है यह लो. यह कह वह बड़का पत्र दिया, मणिभद्रके पिताने यह चार अक्षर देखे. परन्तु कुछ समझा नहीं. वह बड़े बड़े विद्वानोंके पास गया परंतु कोई भी उसका अर्थ न कर सका, इस कारण मणिभद्रका पिता राजा भोजकी सभामें गया, राजाको आशीर्वाद देकर वह पत्र राजाके सम्मुख रक्खा और सुशर्माकी कही हुई बात सुनाकर कहा—महाराज! आपकी सभामें बड़े बड़े पंडित हैं इससे इन चार अक्षरोंका क्या अर्थ होता है? वह कृपा करके मुझसे कहिये। राजाने उन चार अक्षरोंका अर्थ पंडितोंसे पूछा परंतु कोई पंडित उसका उत्तर न दे सका, जब पंडितोंने कुछ भी उत्तर न दिया तब राजा भोजने क्रोधित होकर कहा—मेरे पास इतने पंडित होनेपर भी जो इन अक्षरोंका अर्थ न हो सका तो मेरा महान् अपयश होगा आजसे बत्तीस दिनके भीतर इसका उत्तर मुझे दे देना चाहिये, जो उतने दिनोंमें भी मुझे उत्तर न मिलेगा तो सबको मृत्युकी शरण लेनी पड़ेगी।

यह कहकर राजाने सभा विसर्जित की, सब पंडित अपने अपने घर गये उस दिनसे सब पंडित इन चार अक्षरोंका क्या अर्थ होता है इस विषयमें विचार करने लगे

परंतु कुछ भी समझमें न आया । इस प्रकार करते करते इकतीस दिन व्यतीत होगये आयुका केवल एक दिन शेष रह गया, पंडित सम्पूर्ण आशा छोड़ बैठे कि, कल जो उत्तर नहीं दिया तो मृत्यु होगी. यह सबके चित्तमें विचार था, अब दैवेच्छा देखिये कि, एक पंडितका पुत्र अपने घरके मनुष्योंसे अप्रसन्न होकर अपने पास जो दूसरा ग्राम था वहांको चला, मार्गमें रात्रि होनेपर पशुओंके भयसे बड़के वृक्षपर चढ़ बैठा उस वृक्षके नीचे प्रतिदिन रात्रिको वेतालोंके साथमें भूत पिशाचोंकी सभा होती थी प्रथम कितने एक पिशाचोंने वह स्थान स्वच्छ कर रक्खा पश्चात् वेताल आकर मट्टीके ऊपर बैठा, उस पंडितका पुत्र वड़के वृक्षपर बैठा सब देख रहा था, भयके कारण उसको निद्रा नहीं आयी थी. वेतालने उस दिनके चरित्रकी अपने मंत्री आदिसे खबर पूछी और प्रत्येक जनको एक एक कार्य सौंपकर सभा विसर्जन करनेको उद्यत था, इतनेमें सब भूत प्रेतोंने विनती की, हे महाराज ! आज बहुत दिन हुए हमें खानेको नहीं मिला इस कारण हमारे लिये भी कुछ यत्न करना चाहिये ।

यह सुन वेतालने कहा—राजा भोजकी सभामें एक ब्राह्मण "अ, प्र, शि, ख इन" चार अक्षरोंका प्रश्न लाया है. (अब वह ब्राह्मणका पुत्र ध्यान देकर सुनने लगा) उसका अर्थ पंडित बत्तीस दिनोंमें न कहेंगे तो भोजराजा

उनका शिरश्छेदन करेगा। इसका अर्थ कहनेकी किसी पण्डितको भी सामर्थ्य नहीं और कालिदास अन्य देश गया है वह थोड़े दिनोंमें भी नहीं आसकता इस कारण कल बत्तीस दिन पूरे होंगे, राजा प्रत्येक पंडितका जीव लेगा तब तुमको जरूर भक्ष्य मिलेगा, उन भूतोंने कहा-क्यों जी! उन चार अक्षरोंका ऐसा क्या अर्थ होता है? वह कृपा करके हमसे भी तो कहिये.

वेतालने कहा-वह चार अक्षर एक श्लोकके चारों चरणोंके पहिलेके एक एक अक्षर हैं, वह श्लोक इसप्रकार है-

अनेन तव पुत्रस्य प्रसुप्तस्य वनान्तरे।
शिखामादाय हस्तेन खड्गेनापहृतं शिरः॥ १॥

अर्थात्-"तेरा पुत्र वनमें सोता था उस समय इसने हाथसे चोटी पकड़कर खड्गसे मस्तक काट डाला" इन बातोंकी किसी पंडितको खबर नहीं है यह बात कहकर सभा विसर्जित की। कुछ समयमें प्रातःकाल हुआ और वह ब्राह्मणका पुत्र बड़के वृक्षसे नीचे उतरकर अपने घर आया और प्रथम स्नानादि करके पश्चात् अपने पितासे कहा-पिताजी! आपका मुख मुरझायासा दीखता है इसका क्या कारण है, तुम्हें ऐसी क्या चिंता है? सो कृपा करके कहिये।

उस पंडितने अपने पुत्रसे वह सब वार्ता कही, उसके पुत्रने कहा-तुम क्यों चिन्ता करते हो, आज मुझे सभामें

ले चलिये, उन चार अक्षरोंका उत्तर मैं दूँगा। अपने पुत्रका यह कहना प्रथम तो पिताने नहीं माना, परंतु जब पुत्रने अधिक हठ किया तब इसने सभामें साथ ले चलना स्वीकार किया. पश्चात् भोजन करने बैठा परन्तु भोजन विशेष चिन्ताके कारण अच्छा न लगा. इसने कुछ खाया और कुछ न खाया और उठ खड़ा हुआ किन्तु पुत्रने पूर्ण भोजन किया. पश्चात् वह पंडित घरके सब मनुष्योंसे मिलकर अपने पुत्रके साथ राजसभामें गया. कुछ समयसे सब पण्डित एकत्र हुए. राजाने कहा-क्यों ? उन चार अक्षरोंका क्या उत्तर लाये ? किसीने भी कुछ उत्तर न दिया, राजाने तीन बार वह प्रश्न पूछा, पश्चात् किसीको उत्तर न देता देख वह बालक खड़ा हुआ और कहने लगा कि, उन चार अक्षरोंका अर्थ मैं कहता हूँ वह सुनो, यह कह वेतालका कहा हुआ श्लोक सुनाया और कहा कि, इस श्लोकके प्रत्येक चरणके प्रथमाक्षर तुम्हारे यह चार अक्षर हैं।

चतुर्दश वर्षकी आयुवाले बालकका यह शब्द सुनकर राजा भोज तथा अन्य सब पंडित आश्चर्य पाकर मनमें विचार करने लगे कि-यह बालक कुछ पढ़ा नहीं है इतना होनेपर भी यह ऐसा विद्वान् है इस कारण निःसंदेह यह कोई महापुरुष है, परन्तु राजाके मनमें संदेह हुआ कि, यह अर्थ ठीक है इसका प्रमाण क्या ? यह विचार कर राजाने उस बालकसे पूछा-यह अर्थ ठीक है इसका प्रमाण क्या ?

उस पंडितपुत्रने कहा-जिसने यह चार अक्षर लाकर दिये हैं उसको सभामें बुलाकर पूछे तब निश्चय होगा ।

राजाने उस सुशर्माको बुलाकर पूछा, सुशर्माका मुख तो कुँभला गया, परन्तु स्वीकार न किया, उसका मुख मुरझाया हुआ देखकर राजा भोजको कुछ निश्चय हुआ पश्चात् सेवकोंको आज्ञा दी कि, इसको रस्सीसे मारो, यह कहते ही सुशर्माने स्वीकार कर लिया, तब राजाने उसको यथायोग्य शिक्षा दी और उस पंडित पुत्रको अपनी सभामें पंडितपद दिया. सब पंडितोंने उसका उपकार माना और उसके मित्र हुए ।

अब यहां वनमें क्या हुआ वह देखो-सब भूत प्रेत मांसका भोजन करनेकी आशासे मध्यरात्रितक बैठ रहे परन्तु कुछ लाभ न हुआ, रात्रिमें जब सभा भरी तब भूतोंने वेतालसे विनती की कि, हमें आपकी आज्ञानुसार आज सम्पूर्ण दिन बाट देखते देखते हो गया परन्तु कुछ खानेको न मिला ।

वेतालने कहा-हमारी कही हुई युक्तिमें एक विघ्न हो गया, वह यह है कि, कल रातको जिस समय हम बातें कर रहे थे उस समय इस वृक्षपर एक पंडितका पुत्र बैठा था उसने मेरा कहा हुआ वृत्तान्त सुनकर राजासे उन चार अक्षरोंका अर्थ कह दिया, इस कारण अपनी युक्ति ठीक नहीं हुई यह कहकर सभा विसर्जित की ।

कला १७.

(फाँसीकी शिक्षा)

एक समय राजा भोज कालिदासपर अत्यन्त क्रोधित हुए, तब राजाने मारनेवालोंको आज्ञा दी कि, इसको वनमें ले जाकर मार डालो, राजाकी आज्ञानुसार वह कालिदासको वनमें ले गये, पश्चात् उन्होंने कालिदाससे राजाकी आज्ञा कही, यह भयंकर शब्द सुनते ही कालिदास विचार करने लगा कि, मैंने राजाका क्या अपराध किया है, जो राजाने मुझे फाँसीकी शिक्षा दी. जो होना होगा वह तो होहीगा, परन्तु जहांतक हो सके जीव बचानेका उपाय करना ही चाहिये, इस कारण मारनेवालोंको टाल टूल दूं, जो इन लोगोंको कदाचित् दया आवेगी तो जीवित रहूँगा नहीं तो आयु पूरी हो ही गयी है ।

पश्चात् मनमें एक मन्त्र स्मरण करके मारनेवालोंसे कहा–कुछ भी अपराध न करनेपर मुझे राजाने मारनेकी आज्ञा दी है, अब मुझे जीव देना तुम्हारे हाथमें है।

मारनेवाले कालिदासको उत्तर न देकर परस्परमें विचार करने लगे कि, इस ब्राह्मणका कुछ अपराध न होनेपर भी राजाने मूर्खतासे इसको मारनेकी आज्ञा दी है, हम इसको जीवित छोड़ दें और राजासे कह देंगे कि मारडाला तो हमारा क्या होगा ?

यह विचार कर उन्होंने कालिदाससे कहा–भाई! हम तुमको छोड़ तो देंगे, परन्तु जो तुम पीछे नगरमें आये और 'जीवित है' ऐसा राजाको ज्ञात हो गया तो राजा हमको परिवारसहित कोल्हूमें पिलवा देगा, इसका विचार कर लो।

कालिदासने कहा–वेष बदलकर दूर देशमें मैं चला जाऊँगा और अपना नाम किसीको भी न बताऊंगा।

यह सुन मारनेवालोंने कालिदासको छोड़ दिया और राजासे जाकर कहा–महाराजकी आज्ञानुसार हमने उन ब्राह्मणको अत्यंत घोर वनमें ले जाकर मार डाला।

वहांसे वेष बदलकर कालिदास दूर देशमें चला गया, राजाको हर समय उसकी आवश्यकता होने लगी, परन्तु जब आवश्यकता हुई तब राजाको चिंता हुई और पश्चात्ताप करने लगा. राजकार्यकी भी कुछ सुधि न रही, निरंतर कालिदासको याद करके रोने लगा, परन्तु रोनेसे क्या, कालिदास फिर जीवित होकर आ सकता है?

एक दिन राजाको सूझा कि कालिदासकी रक्षक काली है उसके मारनेको कौन समर्थ है? वह कालिदास मरा तो नहीं होगा, मारनेवालोंको बुलाकर ठीक हाल पूछना चाहिये।

पश्चात् राजाने मारनेवालोंको बुलाकर पूछा कि–जिस ब्राह्मणको तुम्हे दो महिने पहिले मारनेकी आज्ञा

दी थी उसे किस प्रकार मारा? ठीक ठीक कहो। यह सुनकर वे मारनेवाले व्याकुल हो गये कि, कहीं राजाको उसके जीवित रहनेको खबर मिली होगी? यह विचार करने लगे कुछ हो, परन्तु स्वीकार नहीं करना चाहिये यह विचार उन्होंने कहा—अन्नदाताके विपरीत हम किस प्रकार चल सकते हैं? आपकी आज्ञानुसार हमने उसी समय उसका वध कर डाला।

राजाके शब्द सुनकर प्रथम वे कुछ सकुचाये थे इससे राजाको सन्देह हुआ और बोला—तुम किसका वध करने गये थे सो तुम्हें मालूम है? वह तो कालिदास था, उसको मंत्रकी सिद्धि है, इससे उसके मारनेको कोई भी समर्थ नहीं है। अब तुम ठीक कहो तुमको अभय वचन देता हूँ।

उन मारनेवालोंने जब कालिदासका नाम सुना और राजाने अभय वचन दिया, तब सत्य कहनेको उद्यत हुए। उन्होंने कालिदासको जिस प्रकार जीवित छोड दिया था वह राजासे कहा, यह सुनकर राजाको अपार आनन्द हुआ, उन मारनेवालोंको राजाने पारितोषिक देकर वहांसे बिदा किया। पश्चात् खोजनेवालोंको बुलाकर कालिदासके ढूँढनेकी आज्ञा दी। उसको सब स्थानोंमें देखा, परंतु कहीं कालिदासका पता नहीं लगा। अन्तमें राजाने एक युक्ति सोचकर सबमें खबर कर दी कि, जो कोई नवीन श्लोक रचकर लावेगा उसको

राजाकी ओरसे एक लक्ष रुपया भेटमें दिया जावेगा. यह बात फैलते फैलते देश देशमें फैल गयी । यहां राजाने ऐसी युक्ति कर रक्खी कि अपनी सभामें एकपाठी द्विपाठी त्रिपाठी आदि पंडितोंको क्रमवार नियत किया. जब कोई नवीन श्लोक लाकर पढ़े तब ही एकपाठी उसको पढ़ देता था और कहता था कि, श्लोक तो प्राचीन है, क्योंकि मुझे याद है, उसको सुनकर द्विपाठी बोलता था कि, यह तो हमें भी याद है और यही त्रिपाठी पढ़ता था इस प्रकार सबके कहनेपर वह श्लोक नवीन नहीं ठहरता था और लानेवाला निराश होकर चला जाता था। एक दिन जिस ग्राममें कालिदास रहता था, उस ग्रामका एक ब्राह्मण नवीन श्लोक रचकर धारानगरीमें ले गया; परन्तु निराश होकर आया; आकर कालिदाससे जान पहँचान होनेके कारण सभाका सब वृत्तान्त कहा कि भाई ! क्या कहूं मैं उत्तम नवीन श्लोक रचकर लेगया था परन्तु राजा भोजकी सभाने उसे प्राचीन कह दिया, धारानगरीतक जाना आना पड़ा ही परन्तु वहां जाकर अपमान हुआ वह विशेषतामें है । परन्तु वह यह नहीं जानता था कि यह (कालिदास) कौन है ?

कालिदास मनमें समझ गया कि, राजाने मेरे ढूँढनेकी यह युक्ति निकाली है, इस कारण अब युक्तिसे प्रकट होना चाहिये । पश्चात उस ब्राह्मणसे कहा मैं तुझे एक

नवीन श्लोक देता हूँ जो तू राजाके सम्मुख लेजायगा तो राजा तुझे एक लक्ष रुपया अवश्य देगा । ब्राह्मणने स्वीकार किया और कालिदाससे श्लोक ले जाकर धारानगरीमें आया । राजसभामें जाकर मैं नवीन श्लोक लाया हूं ऐसा प्रकट कर खडा रहा. राजाकी आज्ञा होनेपर इसने इस प्रकार श्लोक पढ़ा—

"स्वस्ति श्रीभोजराज त्रिभुवनविदितो धार्मिकस्ते पिताऽभूत्पित्रा ते वै गृहीता नवनवतिमिता रत्नकोटयो मदीयाः । ता मे देहीति राजन् सकलबुधजनैर्ज्ञायते सत्यमेतन्नो वा जानन्ति ते तन्मम कृतिमथवा देहि लक्षं ततो मे ॥ १ ॥"

अर्थात् हे राजा भोज ! आपके पिता धार्मिक और सत्यवक्ता हुए हैं यह तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध है इस कारण कहता हूँ कि, तुम्हारे पिताने मुझसे ९९००००००० (निन्यानबे करोड़) रत्न लिये थे, वे मुझे देने चाहियें, यह बात आपकी सभाके पंडितोंको भी ज्ञात है, यदि कदाचित् ज्ञात न हो तो इस श्लोकको नवीन गिनकर मुझे एक लक्ष रुपया देना चाहिये ।

यह श्लोक सुनकर एकपाठी द्विपाठी आदि कोई भी पंडित नहीं बोले । यदि श्लोक पुराना है यह कहें तो राजा

भोजके पिता निन्यानबे करोड़ रत्नके कर्जदार ठहरे और इस श्लोकको नवीन कहें तो एक लक्ष रुपया देना पड़ता है इस कारण चुप हो गये ।

यह श्लोक सुनकर राजा भोजके चित्तमें और ही विचार हुआ कि, अबतक नवीन श्लोक लेकर बहुत मेरे पास आये, परन्तु इनमेंसे कोई भी लक्ष रुपया लेकर न गया परन्तु आज यह अवश्य लेगा । ज्ञात होता है कि, यह श्लोक कालिदासका रचा हुआ है, इसको कालिदास मिल गया मालूम होता है । यह विचार कर उस ब्राह्मणसे पूछा-कहो महाराज ! तुम्हें कालिदास पंडित कहां मिले और अब वह कहां हैं ? उस ब्राह्मणने उत्तर दिया-महाराजाधिराज ! आपके पास प्रथम मैं एक श्लोक लेकर आया था, परन्तु वह सभामें प्राचीन ठहरा. इससे मैं निराश होकर अपने घरको गया । वहां मेरा कालिदाससे परिचय था इससे उनके पास आपकी सभाकी बात कही, इस कारण उन्होंने मुझे यह श्लोक रचकर दिया है और कालिदास गोदावरीके समीप पैठन नगरमें हैं । राजाने उसको एक लक्ष रुपया दिया तथा वस्त्रालंकार देकर हर्षित किया, पश्चात् राजा अपने प्रधान सहित उस नगरमें जाकर कालिदाससे मिला । राजाने अपने अपराधकी क्षमा माँगी और बड़े सत्कारसे उसको धारानगरीमें ले आया ।

कला १९.

(राजा भोजके पूर्वजन्मका वृत्तान्त)

एक समय राजा भोजके मनमें यह इच्छा हुई कि यह मनुष्यदेह और उसमें भी उत्तमवर्ण मिला है इस कारण मैं प्रथम कौन था यह बात मालूम करनी चाहिये। तदनन्तर कालिदासके आनेपर राजाने पूछा हे कालिदास ! मैं तुमसे जो कुछ पूछता हूँ उसका तुम बराबर उत्तर देते हो. अब यह कहो कि, पहले जन्ममें मैं कौन था ?

कालिदासने उत्तर दिया महाराज ! आप पूर्वजन्मका वृत्तान्त पूछते हो सो किसी शास्त्रमें लिखा हुआ तो है ही नहीं इस कारण इसका क्या उत्तर दूं ? भोजने कहा—लिखा हो या न हो मुझे पूर्वजन्म जानना है, इस कारण छः मासके भीतर तुम किसी प्रकार खोज कर बताओ नहीं तो अपने दिन अशुभ जानना ।

यह सुनकर कालिदास उदास होकर अपने घरको गया और उस दिनसे कभी कभी सभामें आता था, शेष दिन घरमें ही पड़ा रहता था। इस बातकी प्रायः सबको ही खबर हो गयी इससे उसके कितने हितचिंतक उसके पास आकर समझाने लगे कि, राजाको प्रिय लगे ऐसी सत्य असत्य बात समझा दोगे तो वही मान लेगा, परन्तु कालिदासने उत्तर दिया कि, असत्य तो

जीव जानेपर भी न बोलूंगा, पश्चात् यदि राजाको ज्ञात हो गया तो मेरी जीवित त्वचा उतरवा लेगा. इस कारण भाइयो ! कृपा करके मुझसे ऐसी बात मत कहो. मित्रवर्गोंने बहुत समझाया परन्तु वह एकसे दूसरा नहीं हुआ. अन्तमें सबने समझाना छोड़ दिया, ऐसे करते करते पांच मास व्यतीत होगये. एक दिन कालिदास भोजन करने बैठा उस समय उसने विचार किया, अल्पकालमें छः मास पूर्ण हो जायँगे, जब समय आ जावेगा तब राजा कदाचित् मेरा जीव नहीं लेगा तो अपमान तो अवश्य ही करेगा, यह अपमान मुझसे सहन नहीं होगा तो जीव देना होगा. इस कारण उस समयके अपमानसे इस समय विष खाकर मरना उत्तम है। इस प्रकार चिंता करता हुआ पूर्ण भोजन किये विना ही हाथ मुख धोकर उठ बैठा. कालिदासकी स्त्री तथा पुत्र मर गये थे, परन्तु घरमें केवल विधवा पुत्रवधू थी. ससुरको पूर्ण भोजन किया न जानकर तथा मुख उदास देखकर पुत्रवधू समझ गयी। कालिदास जब वस्त्रादिक धारण करके बाहरको जाने लगा तब वह पुत्रवधू लज्जा त्यागकर उसके सम्मुख आ खड़ी हुई, इसको देखकर कालिदास आश्चर्ययुक्त हुआ। वह बोली—हे ससुरजी ! आपसे आज पर्यन्त किसी दिन भी नहीं बोली, मैं आज बोलती हूँ यह मेरा अपराध क्षमा कीजिये. आज चार पांच मास हुए आप उदास दीखते हो और आज भोजन करते

समय पूर्ण भोनज भी नहीं किया, इसका सत्य कारण अवश्य मुझसे कहिये।

कालिदासने शोकयुक्त शब्दोंसे कहा कि, हे पुत्रवधू! यह बात तेरे जानने योग्य नहीं है, इस कारण मैं तुझसे कह नहीं सकता, मुझको जाने दे। वधूने कहा ससुरजी! यदि इस समय जो सासूजी अथवा आपके पुत्र जीवित होते तो उनसे आप बात कहते कि नहीं? इसलिये मुझे अपनी पुत्री जानकर सत्य सत्य कहिये।

वधूके यह शब्द सुनकर कालिदास बालककी भाँति रोने लगे, ससुरजीको कोई अधिक दुःख है यह जानकर वह बोली-ससुरजी! ऐसा तुम्हें क्या दुःख है, जो बालककी भाँति रोते हो जो आप नहीं कहते तो अब मैं लज्जा त्यागती हूँ यह कह नेत्रोंकी लज्जा त्यागकर कहा—मैं तुम्हारी पुत्री हूं और तुम मेरे पिता हो, अब आप सविस्तार मुझसे कहिये। बहुत गुप्त रखना उत्तम न समझकर कालिदासने कहा—हे पुत्री! आज पांच मास हुये कि राजाने अपने पूर्वजन्मकी बात बूझी थी यह बात शास्त्रमें मैंने कहीं नहीं देखी मैंने जब उत्तर नहीं दिया तब राजाने छःमहीनेकी अवधि दी है अब इन छः मासके भीतर जो यह बात नहीं मालूम हुई तो राजा मेरा अत्यन्त अपमान करेगा मरनेसे भयभीत नहीं होता; परन्तु अपमान मुझसे सहन नहीं हो सकेगा। अपमानसे इस समय विष खाकर मरना श्रेष्ठ है. भोजन करते मुझे यह विचार

सूझा इससे आज ही विष खाकर मरनेका निश्चय किया और अब मैं विष लेनेको जाता हूं।

यह शब्द सुनकर वधूने हर्षयुक्त कहा-पिताजी! इसमें क्या है? यह तो मैं जरा देरमें बतला दूं। कालिदासने आश्चर्यके साथ कहा-वधू! तुम किस प्रकार कह सकती हो? वधूने कहा जब राजा पूछे कि मेरे पूर्व जन्मका वृत्तान्त मिला? तब कहियेगा कि-हे राजा! मैं तो क्या? मेरी विधवा पुत्रवधूही कह देगी! पश्चात् जब राजा मुझसे पूछेगा तब मैं उत्तर दूँगी. अब आप पूर्ण भोजन कर सभामें जाकर आनन्दयुक्त बैठो किसी बातकी चिंता मत करो.

पुत्रवधूके कहनेपर विश्वास रखकर कालिदासने भोजन किया पश्चात् सभामें प्रफुल्लित होकर जा बैठा पांच महीनेसे वह उदास रहता था और आज कालिदासको आनन्दयुक्त देखा इससे राजाने पूछा क्यों कालिदास, वह बात मिल गयी क्या?

कालिदासने दृढ़तासे कहा-राजाजी! मैं तो क्या परंतु मेरी विधवा पुत्रवधू भी यह बात जानती है।

राजाने विचार किया कि-जब इसकी पुत्रवधू यहबात जानती है तो न जाने वह कितनी विदुषी होगी, यह बात तो इसकी पुत्रवधूके मुखसे ही सुननी चाहिये।

राजाने अपने वृद्ध प्रधानसे कहा कि-कालिदासकी विधवा पुत्रवधूको सम्मानपूर्वक बुला लाओ. राजाकी आज्ञा सुनकर वह तत्काल वधूको लानेके लिये गया।

वधूने कहा-भोज मेरे पिताकी सदृश हैं ऐसा मैं मानती हूं इस कारण वे मेरे घर आवेंगे, तो मेरी बात सुनेंगे।

प्रधानने जाकर राजासे वधूकी बात कही, राजा कालिदास तथा वृद्ध प्रधानको साथ लेकर कालिदासके घर आये. वधूने राजाको अत्यन्त सत्कारपूर्वक बैठाकर कहा—हे राजाधिराज ! आपके पूर्व जन्मका वृत्तान्त पूर्ण सुनाऊँ या अपूर्ण ?

राजाने उत्तर दिया कि, सुनाओ तो पूर्ण सुनाओ, अपूर्ण सुननेसे क्या प्रयोजन ? वधूने कहा—जो बात आपको पूर्ण सुननी हो तो यहांसे उत्तर दिशाकी ओर अमुक ग्राम है उस ग्राममें एक किसान नौकर है उसकी आयु २० वर्षकी है जिस दिन आप वहां जा पहुँचेंगे उसी दिन उस किसानकी गायें चोरी जायँगी, तब उस किसानका पुत्र चोरोंके पीछे भागेगा परन्तु चोर उसको काट डालेंगे, आप उस समय उसकी ओरसे उसको बचाना अर्थात् तब वह आपके पूर्वजन्मकी सब बात कहेगा।

इतना सुनकर राजा वहांसे उठकर अपने भवनमें आये. राजकाज प्रधानको सौंप साधारण वस्त्र पहनकर अकेले किसीसे भी न कहकर उत्तरकी ओर चल दिये, जब आधी दूर पहुँच गये तब याद आयी कि उस लड़केका नाम बूझना तो भूल ही गया, परन्तु अब पीछे

फिरूं यह भी ठीक नहीं, वह आगेको ही चले । छठे दिन सन्ध्यासमय एक छोटेसे ग्राममें आ पहुँचे, रात्रिमें वास कहाँ करूं इस विचारमें खड़े थे इतनेमें एक किसानका लड़का गायें चराता हुआ दृष्टि पड़ा. राजाको देखतेही उसने कहा—क्यों राजा भोज ! आओ ! आओ ! राजाने कहा—भाई ! मैं तो तुमको पहँचानता नहीं कि तू कौन है मुझे तू किस प्रकार जानता है ?

किसानने उतर दिया—कालिदासकी विधवा पुत्रवधू तुम्हें जिसके पास भेजा है मैं वही हूं ।

जिस स्थानमें अपना राज्य नहीं और मैं पहिले कभी आया भी नहीं फिर किस प्रकार इसने पहिचाना मुझको बड़ा आश्चर्य होता है । विचारा कि अच्छा हुआ जो यह लड़का यहां मिल गया, नहीं तो इसको मैं किस प्रकार ढूँढ़ता और रात्रिमें कहाँ रहता ।

उस लड़केने राजासे कहा—मेरे घरको चलो ।

राजाने कहा—जिस कामके लिये मैं आया हूँ उसको कह ।

उस लड़केने कहा—यह बात तो मैं तुमसे पीछे कहूंगा अब तो मेरे साथ घर चलकर विश्राम करो, आज आधी रात होनेपर हमारे सेठकी गायें चुरानेकी धूम पड़ेगी उस समय मैं पीछे जाऊँगा, चोर लोक मुझे मार डालेंगे, परन्तु मेरा जीव दश घड़ी दिन चढ़ेतक रहेगा तुम वहां आना तब तुमसे कहूँगा ।

पश्चात् राजा उसके साथ ग्राममें आगया, उसके घर जाकर भोजन किया रात्रि होनेपर सब सोगये परन्तु राजाको निद्रा न आयी. आधी रात होनेपर गायें चुराने की धूम पड़ी. वह किसानका पुत्र खड्ग लेकर चोरोंके पीछे भागा। राजा उसके पीछे जाने लगा तब किसानने उसका हाथ पकड़कर कहा भाई! तुम परदेशी हो तुम इस समयमें कहाँ जाते हो? प्रातःकाल होनेपर जाना; अकेले मार्ग भूलजाओगे। यह कह राजाको रोका जब नौ घड़ी दिन चढ़ गया तब राजाको जाने दिया, राजा वहां ही गया जहां वह लड़का कटा पड़ा था, राजाको देखकर उस लडकेने कहा—हे राजा! इतनी देरसे क्यों आये! अब मेरा जीव जानेका समय आगया है इस कारण मुझसे अधिक नहीं बोला जाता, अब यहांसे एक महीनेके मार्गपर पाटन नगर है वहांपर तुम आना उस ग्राममें नगर सेठके वहां मैं जन्म लूँगा, मुझे तुमको चालीस हजार रुपये देने हैं वह दिलवाकर दूध पीकर फिर नहीं पीऊँगा, यदि तुम महीनेके भीतर उस नगरमें न आओगे तो तुम्हें ब्रह्महत्या, बालहत्या और स्त्रीहत्याका पाप होगा. इतना कहनेपर उसका जीव निकल गया. राजा वहांसे चल दिया चलते चलते एक मासमें उस पाटन नगरके पास पहुँचा, सन्ध्या होने लगी थी, नगर थोड़ी दूर था, वहां एक कुटीमें भील और भीलनी रहते थे, राजाको देखकर भीलनी बोली—आओ राजा भोज! तुम यहां कहां?

राजा यह सुनकर आश्चर्ययुक्त होकर बोला—हे स्त्री! इस ग्राममें न तो मेरा राज्य है और न कभी मैं यहां आया. तब तूने मुझे किस प्रकार पहँचाना? भीलनीने कहा—पतिव्रतपनके प्रतापसे। पश्चात् कुछ समयके बाद भीलनीने भोजसे कहा कि अब रात्रि होगी उसका क्या विचार किया? इस वनमें जीवोंका भय अधिक है अंधकार होनेपर व्याघ्र सिंहादि निकल पड़ते हैं इस कारण आजकी रात्रि तो यहां ही ठहर जाओ।

राजाने भी स्वीकार किया—भीलनीने राजाको भोजन करानेके पश्चात् कहा—इस कुटीके बाहर जो तुम सोओगे तो सिंह तुम्हे और तुम्हारे घोड़ेको खा जायगा इस कारण तुम कुटीके भीतर सो रहना, मेरा पति धनुष लिये तुम्हारे घोड़ेकी रक्षा करता हुआ सम्पूर्ण रात बैठा रहेगा।

राजा और भीलनी कुटीके भीतर सोते थे, भील धनुष बाण लिये रक्षा करता हुआ बाहर बैठा था. यह भील सदा एक दो सिंह अथवा उनके बच्चोंको मारता था उसको रात्रिके समय बैठा देखकर सिंह उसके आसपास इकट्ठे हुए, परन्तु भीलके हाथमें शस्त्र देखकर दूर दूरही विचरते रहे। जब आधी रात व्यतीत हुई तब भीलको नींदका झोंका आया और धनुषबाण उसके हाथसे नीचे गिर पड़ा, पश्चात् सिंह एक साथ उसके ऊपर आ चढ़ा उसको वहांसे दूर ले जाकर मार डाला और टुकड़ा

टुकड़ा बांट लिया, ऐसा जानकर भीलनी चिल्ला पड़ी कि राजा उठो ! मेरे पतिको सिंहने मार डाला।

राजा शस्त्र सँभाल उठकर देखते हैं तो सिंह भीलको खा रहे हैं प्रातःकाल होनेपर भीलनीने कहा-अब मैं सती होती हूँ इस कारण वनमें लकडी इकट्ठी करके चिता बना दो।

राजाने बडी दीनतासे कहा-हे स्त्री ! अब समय थोड़ा है इस कारण मुझे जाने दे।

भीलनीने कहा-राजा तुम्हे काम है वह मैं जानती हूं परन्तु जो तुम मेरा कहना नहीं मानोगे तो मैं तुम्हें शाप दूंगी।

राजा विचारने लगा कि-एक ओरसे हिंसा होती है और दूसरी ओरसे शाप लगता है फिर विचारा कि हिंसा लगती है वह लगेगी, परन्तु इसका शाप तो तत्काल ही लगेगा।

राजाने लकड़ी एकत्र की, चिता बनाकर कहा-अब मुझे आज्ञा है ? भीलनीने दृढ़तासे कहा-नहीं अभी तुम नहीं जा सकोगे, तीन दिनतक मेरी चिता बलने दो पश्चात् चौथे दिन प्रातःकाल उठकर तुम्हें जहां जाना हो वहां जाना।

राजाने बहाना किया कि, यह तो सब ठीक है परंतु रात्रिको सिंह आकर मुझे और मेरे घोड़को खा जायँगे।

भीलनीने उत्तर दिया कि रात्रिके समय मैं तुम्हारी रक्षा करूंगी. राजा निरुपाय हुआ. पश्चात् भीलनी चिताके ऊपर बैठी और राजाने उसे प्रज्वलित किया, चिता चारों ओरसे जलती थी, भीतर भीलनी हर्षयुक्त बैठी थी, इस प्रकार संपूर्ण दिन भीलनीको विना अग्नि आये देखकर राजा आश्चर्यको प्राप्त हुआ और रात्रि होनेपर कुटीकी टट्टी बन्द करके भीतर बैठ गया, परंतु छेदमेंसे देखता है, तो भिलनी हाथमें धनुषबाण लिये पहरा दे रही है इसको देखकर तो राजा और भी आश्चर्ययुक्त हुआ।

इस प्रकार तीन दिन और तीन रात आश्चर्यकारक वार्ता राजाके देखनेमें आयी. सतीका सतीत्व देखकर राजाको अद्भुत आश्चर्य हुआ कि तीनदिनतक अग्निमें बैठकर जिस भीलनीको किंचित् भी अग्नि न आयी, वह भीलनी चौथे दिनके प्रथम पहरमें बलती देखी और थोड़ी देरमें जलकर भस्म हो गयी. राजाने चिताके ऊपर पानी डालकर और कुटीका ताला लगा कुञ्जी ऊपर रखकर चल दिया। यहां ही राजा अपने वस्त्रादिक उतार और भस्म लगाकर बाबाजी बन गया, राजाके रूपसे उसको कोई महान् योगी जानकर लोग सम्मान करने लगे। इतनेमें नगरसेठके सेवककी उसके ऊपर दृष्टि पड़ी, सेवकने कहा—महाराज योगिराज! हमारे सेठ इस ग्रामके नगरसेठ हैं उनको वृद्धावस्थामें

आज ३ दिन हुए पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है परंतु वह बालक तीन दिनसे दूध नहीं पीता, हमारे सेठने सब उपाय किये परन्तु कुछ लाभ नहीं हुआ. अब आप यहां आइये और कुछ उपाय हो सके तो करिये।

योगीरूप राजाने कहा—उपाय तो मैं जानता हूँ परन्तु परिश्रमका एक लक्ष रुपया लूँगा।

सेवकने कहा महाराज ! एक लक्ष तो बहुत होते हैं कुछ कमती ले लो. राजाने पूछा—तेरे सेठकी देनेकी क्या इच्छा है ?

सेवकने कहा—योगिराज ! हमारा सेठ तो तीसहजार रुपया देगा। राजाने कहा—मैं चालीस हजार रुपया लूँगा। इससे कुछ भी कम नहीं लूँगा।

बहुत वार्तालाप होकर अन्तमें चालीस हजार रुपया देना ठहराया और राजाको वह सेवक अपने सेठके पास ले गया और उत्तम स्थानपर बैठाया. बाद सेठने कहा—महाराज ! मेरा पुत्र दूध नहीं पीता इसका उपाय कर दोगे ?

राजाने कहा—कर देंगे।

राजाकी हां सुनकर सेठने सेवकसे पूछा योगिराज तुम्हें कहां मिले थे और इनसे क्या बात हो गयी है ?

सेवकने कहा—मैं एक कामके वास्ते बाहर जाता था यह मुझे मार्गमें मिल गये, मैंने इनको देखकर विचारा कि, इनसे अपना काम हो जाय तो हो ही जाय। महापुरुष जानकर मैंने कहा कि, हमारे सेठका पुत्र तीन

दिन हुए दूध नहीं पीता उसका उपाय कर सकोगे? इनकी हां सुनकर मैं आपके पास ले आया हूँ, पुत्र अच्छा होनेपर इसको चालीस हजार रुपया ठहरा है।

सेठने राजाकी ओर फिरकर कहा—महाराज! मेरे पुत्रको अच्छा कर दोगे तो आपको चालीसके बदलेमें पचास हजार रुपया दूंगा।

बाबाजीने कहा—मुझे तुम्हारे पाससे रुपया लेकर कुछ रखना नहीं है यह तो उसी दिन ब्राह्मणको भोजन देकर समाप्त कर दूंगा, अब अपने पुत्रको एकांत कोठरीमें ले चलो और मैं भी चलता हूँ। धाय उस लड़केको कोठरीमें ले गयी, बाबाजीने सबको बाहर निकालकर द्वार बंद कर लिया, द्वार बंद होते ही वह लड़का बोल उठा कि, हे दुष्ट राजा! आज तीन दिन हुए मेरे खाने पीनेका भी कुछ ध्यान किया?

राजाने वनमें हुई सब बात बिगतवार कहकर उससे क्षमा माँगी और उससे कहा कि, अब मुझसे वह सब वृत्तान्त कह।

लड़केने कहा—हे भले मनुष्य! कुछ तो विचार कर, आज तीन दिन हुए मैं भूँखसे व्याकुल हूँ, पहले मेरे दूध पीनेकी युक्ति करो।

राजाने स्वीकार कर द्वार खोला, नगरसेठ तथा धायको बुलाकर कहा जाओ इसकी माताको दे दो, यह दूध पीता है कि नहीं।

लड़केको ले जाकर माताको दिया, माताने हृदयसे लगाया तो दूध पीने लगा। सेठने अपने पुत्रको इस प्रकार जब दूध पीता हुआ देखा उसको अपार हर्ष हुआ। योगीके बारबार चरणोंमें पड़ने लगा, जो वृद्धावस्थामें पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई थी उसके दूध न पीनेसे सेठको बड़ा दुःख था, जब दूध पीने लगा तब उसके हर्षका क्या कहना?

सेठकी आज्ञानुसार राजाको सेठके मनुष्योंने उष्ण जलसे भले प्रकार स्नान कराया और शरीरपर चन्दनादि सुगन्धित पदार्थ लगाये, पीताम्बर वस्त्र पहनाये सेठ और उसके घरके मनुष्योंने राजाका ईश्वरके सदृश मान किया। सुवर्णमय भाजनोंमें भोजन कराकर पश्चात् इलायची पान आदि पदार्थ समीप रखे. सेठ सम्मुख हाथ जोड़कर बैठा. सेठने योगिराजका नाम धाम पूछा, तब राजाने कहा-मुझे परमानन्द कहते हैं और उज्जयिनीका रहनेवाला हूँ, विशेष यह है कि, जहां रात्रि हो गयी वहां मेरा स्थान है। इस प्रकार योगी उस सेठके घर १५ दिनतक रहा, पन्द्रहवें दिन उस लड़केने फिर दूध नहीं पिया पश्चात् धाय उस लड़केको योगीके पास ले आयी. राजाने सब मनुष्योंको बाहर निकाल द्वार बंद कर धीरे धीरे लड़केसे कहा क्यों फिर दूध पीना बंद हो गया?

लड़केने उत्तर दिया,-राजा! यह तो मैं तुम्हारी प्रतिष्ठा बढ़ाता हूँ।

राजाने कहा—यह तो सब ठीक, परन्तु अब बात कह.

लड़केने कहा—मेरे दूध पीते रहनेपर जब तुम्हारे पास लावेंगे तब तुम्हारी बात कहूँगा अब तो मेरे दूध पीनेकी युक्ति करो।

राजाने धायको बुलाकर लड़केको दे दिया, फिर लड़केने दूध पिया, सेठ अत्यन्त हर्षित हो गया। पश्चात् लड़का ३६ दिनतक अच्छा रहा पीछे उसको राजाके पास लाये, सब लोगोंके बाहर जानेपर लड़केने कहा—राजा! अब तुम वे चालीस हजार रुपये लेकर यहाँसे जाओ, मेरी आयु पूर्ण होती है।

राजाने कहा—तू मुझसे वह बात कहता था सो कह.

उसने उत्तर दिया इस समयमें वह बात नहीं कहूँगा, परन्तु आजसे चौथे दिन प्रातःकाल मैं मर जाऊँगा, उस समय मुझे इस ग्रामके श्मशानमें गाड़ देंगे वहां तुम आना, गाड़नेवालोंके जानेपर तुम मुझे गड्ढेमेंसे निकाल लेना, तब मैं तुमसे सब वृत्तान्त कहूँगा।

राजाने लड़का धायको सौंपा, वह फिर पहलेकी तरह दूध पीने लगा. दूसरे दिन उठतेही समय राजाने कहा—अब अधिक समय मैं नहीं रह सकता इस कारण मेरी दक्षिणा दो अर्थात् मैं ब्राह्मणोंको भोजन कराकर अन्य देशको जाऊं।

सेठने कहा—महाराज! आजके दिन कुछ बन नहीं

सकता, इस कारण कलदिन ब्राह्मण जिमाकर परसोंको जाना ।

राजाने कहा—ठीक है, यह उत्तर देकर दूसरे दिन ब्राह्मण जिमानेकी सम्पूर्ण तैयारी करायी, सब रुपया उसमें खर्च कर दिया और ब्राह्मण जिमाकर उत्तम दक्षिणा दी, उनके पास आये हुए सम्पूर्ण रुपये खर्च कर दिये, यह देखकर सेठके मनमें निश्चय हुआ कि, यह योगिराज मेरे कोई पूर्वजन्मके पुण्यसे ही आमिले ।

राजा जानता था कि—कलको तो लड़का मर ही जायगा इस कारण आज ही सेठसे कहा सेठने दूसरे दिन जानेको अनेक बार कहा परन्तु वह किसी प्रकार भी नहीं रुका, राजाके जानेपर दो कोशतक सेठ और उसके सेवक पहुँचाने आये; पश्चात् राजाने उसको लौटनेको कहा, सेठने और सब मनुष्योंने लौटते समय राजाके चरणोंका स्पर्श किया और सेठने कहा—महाराज ! आप पधारे तो मेरा पुत्र जीवित रहा नहीं तो हमें कहाँ दीखता ।

राजा सबको आशीर्वाद देकर आगे चला, सबके जानेपर राजाने अपना योगीका वेष बदलकर वही साधारण वस्त्र धारण किये और पीछे उस नगरमें आकर एक कुम्हारीके यहाँ ठहरा, दूसरे दिन वह कुम्हारी प्रातःकाल बाहर जानेवाली थी, उसने राजाको एक हांडी देकर

कहा—इसमें तुम खिचडी बनाकर भोजन कर लो, मैं किंचित् कालमें आती हूँ।

राजाने पूछा—हे कुम्हारी! तू कहाँ जाती है?

कुम्हारीने कहा—हमारे ग्रामके नगरसेठका पुत्र मर गया है, वहाँ सम्पूर्ण ग्रामके लोग गये, इस कारण मैं भी जाती हूँ।

यह कहकर कुम्हारी तो चली गयी, पश्चात् राजा अपने कपडोंकी गठरी बाँध भूमि खोदनेके लिये शस्त्र (फावड़ा) लेकर एक ओर श्मशानमें जा बैठा, उस लड़केको लोग गाड़कर पीछे चले, तब राजाने गड्ढेमें डाली हुई मिट्टीको खोदकर लड़केको बाहर निकाल लिया। लड़केने राजाको देखकर कहा तुम्हें जो यह बात अधूरी सुननी हो तो सुनो और पूरी सुननी हो तो यहांसे छः दिन मार्ग चलनेपर कनकपुर नामका नगर है वहाँ एक भंगन रहती है वह तुमसे सम्पूर्ण बात कहेगी इससे मुझे गड्ढेमें रखकर ऊपरसे मिट्टी डालकर जाओ। यह सुनकर फिर उसे गड्ढेमें गाड़कर चल दिया। चलते चलते कनकपुरमें आ पहुँचा. उस भंगनको किस प्रकार ढूँढें यह विचार करता था इतनेमें एक भंगन सम्मुख आती देखी. धीरे धीरे आकर भंगनने कहा—क्यों राजा भोज! तुम आगये?

राजाने आश्चर्ययुक्त होकर कहा—तू कौन है? मैं तुझे नहीं जानता, तू मुझे क्योंकर जानती है?

भंगनने कहा—उस लडकेने तुम्हें जिसके पास भेजा है मैं वही हूँ।

राजाने कहा—जो तू वही है तो मुझसे वही समस्त बात कह।

भंगनने उत्तर दिया—मार्गसे तुम अभी चले आते हो इस कारण विश्राम करके पीछे यह बात पूछना।

राजाने कहा—तेरे यहां मैं कैसे ठहरूं?

भंगन बोली—मैं तो इस गांवकी भंगन हूँ इससे दीवानके यहां चलो मैं वहां तुम्हारे खाने पीनेका भी प्रबन्ध करवा दूंगी।

यह कह भंगन आगे आगे चली, राजा घोडेपर सवार होकर उसके पीछे पीछे दीवानके यहां गया, दीवान अपने दरवाजेमें ही खड़ा था, दीवानके आगे हाथ जोड़कर भंगनने कहा—माता पिता! यह सेठ मेरे अतिथि हैं इस कारण मेरे हिसाबमें इनको उत्तम भोजन कराओ और आजकी रात इनको तुम्हारे यहां ठहराती हूँ।

दीवानने राजाकी मुखमुद्रा देखकर किसी उत्तम कुलका पुत्र जानकर कहा—हे स्त्री! तेरे अतिथि सो मेरे अतिथि, स्त्रीसे यह कह दीवान राजाको हाथ पकडकर घरमें ले गया।

दीवानने नवीन अतिथिको भोजन कराया, पश्चात्

रात्रि होनेपर फिर भोजनके लिये बिठाया, दीवानका पुत्र पिताके पास बैठा था, उसने अपने पिताके कानमें कहा—हे पिता ! इस मनुष्यको तुम भंगनका अतिथि नहीं जानना, यह तो कोई राजवंशी मालूम होता है ।

दीवानने कहा—हे पुत्र ! तूने कैसे जाना ? दीवानके पुत्रने उत्तर दिया कि, वह दीपकके सामने बैठा है और दीपकके प्रकाशसे इसका मस्तक दीपककी भांति चमकता है । दीवानने कहा—होगा, हमें इससे क्या प्रयोजन ?

राजा भोजनके पश्चात् तांबूलादि खाकर वार्ता करने बैठा. निद्राका समय हुआ और राजाके लिये सोनेका प्रबन्ध किया. राजा उस रात्रिको निश्चिंत होकर सो रहा।

दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर नित्यक्रियासे निश्चिंत होकर राजाने राजवंशी वस्त्रादिक धारण किये, यह देखकर पुत्रने पितासे कहा—देखो पिता ! रात जो बात मैंने तुमसे कही थी वह ठीक है या नहीं ?

दीवानने राजाकी ओर देखकर विचारा कि, यह तो राजा भोजकी सदृश दीखता है. पश्चात् राजाकी ओर फिरकर कहा—हे राजा ! आप कहां पधारेंगे ?

राजा भोजने उत्तर दिया—तुम्हारा नगर देखने जाता हूँ। पश्चात् राजा घोड़ेपर सवार होकर भंगनके घरकी ओर चला । भंगनने राजाको आता देखकर अपने

स्वामीसे कहा—देखो वह राजा भोज आता है, उसके बैठनेको आसन लाओ, यह कहकर भंगन घरके भीतर गयी और कुर्सी लाकर भोजको बैठाया, कुछ समय पीछे भंगन भी राजाके सम्मुख बैठी और कहा—राजा ! कहती हूँ, चित्त देकर सुनो ।

(राजा भोजके पूर्व जन्मका वृत्तान्त भंगन कहती है और राजा सुनता है) हे राजा ! पूर्वजन्ममें तुम लकड-हारे (लकडी बेचनेवाले) थे. मैं तुम्हारी स्त्री थी, किसा-नका लड़का जो मर गया वह आपका पुत्र था और कालिदासकी विधवा वधू तुम्हारी पुत्रवधू थी, तुम दोनों पिता पुत्र मजदूरी करके हम चारोंका उदर पोषण करते थे, इतनेमें बारह वर्षका महादुर्भिक्ष पडा, तब कठिनतासे हमारी आजीविका होती थी, दुर्भिक्षके दश वर्ष तो बीत गये, एक दिन हम चारों एक रोटी लेकर खाते थे, उस समय एक यती माँगने आया, उसको क्षुधासे अत्यन्त व्याकुल देखकर तुम्हें दया आयी,तुमने अपनी रोटीमेंसे आधी रोटी उसको दे दी. वह रोटी खाकर बोला—कि मैं दश दिनका भूखा हूँ इस कारण यदि तेरी शक्ति हो तो कुछ और दे । तब तुमने पुत्रकी रोटीमेंसे आधी रोटी और दे दी, उसने फिरभी, मांगी, तुमने पुत्रवधूकी रोटीका आधा भाग दे दिया । पश्चात् मेरीमेंसे भी आधा भाग दे देंगे यह मैं जान गयी और अपनी रोटी लेकर दूर चली गयी. वधूकी आधी रोटी खाकर यतीने

फिर मांगी तब तुमने अपनी शेष रही रोटी दे दी पुत्र और वधूने विचारा कि. हमारी शेष रोटी यह दे देंगे इससे वह भी दूर भाग गये मैं सब रोटी खा गयी और पुत्र तथा वधू भी आधी आधी रोटी खा गये।

अब और नहीं मिलेगी यह जानकर यती चला गया. पश्चात् कुछ समयमें मजदूरी न मिलने कारण भोजन नहीं मिला इससे हम सब दुर्बल हो गये, अन्तमें अन्न न मिलनेके कारण मर गये। हे राजा! तुमने उस भूँखे यतीको सब रोटी दी थी इससे तुम राजा हुए और सम्पूर्ण मनुष्यभावका सुख भोगा. तुम्हारा पुत्र जिसने आधी रोटी दी थी उसने आधा सुख भोगा अर्थात् वह बीस वर्षकी अवस्थामें ही मर गया. पुत्रवधू जो कालिदासकी पुत्रवधू कहलाती है यह भी युवावस्थामें विधवा हो गयी और मैंने जो सर्व प्रकारसे पेटको ही उत्तम समझा था इस कारण मैं चाण्डाल योनिमें उत्पन्न हुई और सम्पूर्ण भवका दुःख देखा।

यह सुनकर भोजने पश्चात्ताप किया. खैर! जो होनहार था सो हुआ, अब इस भङ्गनको सुखी करना चाहिये यह विचार भंगनकी ओर फिरकर बोला—हे स्त्री! अब तू और तेरा स्वामी दोनों मनुष्य मेरे नगरमें चलो, वहां मैं तुमको एक घर दूँगा उसमें सुखसे रहना। भंगनने प्रथम तो स्वीकार न किया, परन्तु पीछे अपने स्वामीसे वार्तालाप करके स्वीकार किया। राजा उनको धारानगरीमें ले आया और कालिदासकी विधवा वधूसे पूछा

हे पुत्री ! हमारे पूर्वजन्मका वृत्तान्त तीन जनोंको ज्ञात था और मुझे मालूम नहीं था इसका क्या कारण ?

वधूने उत्तर दिया--हमें पूर्वजन्मकी याद है इसका कारण यही है कि, उसे सुनाकर इस जन्ममें हम सब भलीभांति रहें ।

प्रिय पाठकगण ! देखो दानका फल कितना उत्तम है ! जो भलीभांति दान देते हैं उनको सर्वोत्कृष्ट पद प्राप्त होता है ॥

कला १९.

(सरस्वतीकुटुम्ब)

अमरावती नगरीमें एक बड़ा विद्वान् और अत्यन्त धनहीन सरस्वतीकुटुम्ब रहता था, इस कुटुम्बमें चार मनुष्य थे, एक ज्योतिषी, दूसरी उसकी स्त्री, तीसरा पुत्र और चौथी पुत्रवधू । स्वदेशमें उदर पोषण न होनेसे उसने अन्य देशमें जानेका विचार किया. राजा भोजकी कीर्ति उसने अधिक सुनी थी कि, राजा भोज विद्या-शोधक है और विद्वानोंको आश्रय देता है इस कारण यह धनहीन कुटुम्ब वहांको चला और चलते चलते वह धारानगरीके समीप पहुंचा, नगरके निकट एक ब्राह्मण मिला. उसने पूछा ज्योतिषी ! कहां जाते हो ?

उसने उत्तर दिया-

श्लोकपूर्वार्ध-" गच्छाम्यहंश्रुतिपुराणसमग्र-शास्त्रपारंगतं कलयितुं किल भोजभूपम् । "

अर्थात्–श्रुति, पुराण और सम्पूर्ण शास्त्रयुक्त भोज राजासे मिलनेको जाता हूँ।

ज्योतिषीका यह शब्द सुनकर वह ब्राह्मण बोला–

श्लोकउत्तरार्ध–"वेत्त्यक्षराणि नहि वाचयितुं स राजा मह्यं ललाटलिखितादधिकं ददौ यः ॥ १ ॥"

अर्थात्–अरे ! भोजराजा तो एक अक्षर भी स्पष्ट नहीं पढ़ सकता, मेरे भाग्यमें जो लिखा था उससे यह अधिक द्रव्य मुझे दिया है। यहां 'व्याजस्तुति' अलंकार है अर्थात् ब्रह्माके लिखनेसे भी अधिक दिया इसलिये ऐसा दानवीर और कौन है ?

वह ब्राह्मण इतना कहकर चला गया इसको सुनकर ज्योतिषी और उसका कुटुंब आनन्दको प्राप्त हुआ और धारानगरीमें हमारा भलीभांति सत्कार होगा ऐसा उनको सूझा. धारानगरीके पास एक सुन्दर वटवृक्षके नीचे ठहरकर राजासे पूछनेको भेजा कि, एक सरस्वती-कुटुंब तुम्हारे नगरके पास आया है, आपकी आज्ञा हो तो नगरमें रहनेको आवे।

सरस्वती-कुटुंब नाम सुनते ही राजाने विचारा कि नाम तो सरस्वती-कुटुंब है परन्तु वह कितना चतुर है इसकी परीक्षा तो करूँ ?

राजाने एक दूधका लोटा ऊपरतक भरकर अपने

विश्वासी मनुष्यके हाथ वहां भेजा, वह मनुष्य सरस्वती-कुटुंबके स्थानपर आया और ज्योतिषीके हाथमें लोटा देकर कहा—भोजराजाने यह तुम्हारे लिये भेजा है। यह सरस्वती-कुटुम्ब राजाकी चतुराई जान गया. राजाने यह प्रयोजन निकाला था कि, जिस प्रकार यह लोटा दूधसे भरा हुआ है और इसमें कुछ भी नहीं आसकता राजाका यह प्रयोजन समझ ज्योतिषीने उस दूधमें ही खांड डाल दी और जो मनुष्य दूधका लोटा लेकर आया था वह यह सब देखता था पश्चात् उसी मनुष्यको लोटा देकर लौटा दिया. ज्योतिषीने खांड डालकर यह उत्तर दिया कि जिसप्रकार इस दूधमें खांड समा गयी वैसे ही हम भी प्रजाको दुःख न देकर इस नगरमें समा जायँगे।

राजाके सम्मुख उस मनुष्यने यह सब बात कही, यह सुनकर राजाको निश्चय हुआ कि नामके अनुसार ही यह सरस्वती-कुटुम्ब चतुर भी है, अब दूसरी और कोई परीक्षा करनी चाहिये इस प्रकार विचारकर राजा वेष बदलकर सरस्वती-कुटुंबके पास आया वहां दो स्त्रियें थीं उन्होंने सूचना दी कि, ज्योतिषी और उनका पुत्र तालावपर सन्ध्या करने गये हैं यह सुनकर वह वहां गया. पुत्रकी ओर देखकर राजाने अंजलीभर जलपान किया. राजाने यह दिखाया कि तुम ब्राह्मण हो और तुम्हारे मान्य अगस्त्य ऋषिने एक आचमनसे संपूर्ण समुद्रका पान किया था, तो तुम इतने ही तालाबका पान करो तो तुमको उत्तम ब्राह्मण मानूँ।

वह तत्काल राजाका प्रयोजन समझ गया. लड़केने पत्थरकी एक छोटीसी कंकरी तालाबमें फेंकी, यह देखकर राजा हर्षित हुआ और घरको चला गया. कंकरी फेंककर राजाको लड़केने यह बात बतलायी कि, तुम क्षत्रिय हो और तुम्हारे मान्य रामचन्द्र भी क्षत्रिय ही थे उन्होंने समुद्रमें पत्थरकी शिला तारी थी और तुम ऐसी छोटी कंकरी तार सको तो तुम्हें उत्तम क्षत्रिय मानूँ।

राजाके मनमें यह आया कि, जैसा ब्राह्मण है वैसा ही मैं क्षत्रिय हूँ यह विचारकर हर्षित हो वहांसे चला गया परन्तु भवनमें राजाको चैन नहीं पड़ी, इस सरस्वती-कुटुम्बके साथ वार्तालाप करनेकी इच्छा हुई. राजा तत्काल लकड़हारेका वेष धारण करके उस सरस्वती-कुटुम्बके पास आया, इस समय नगरके द्वार बंद होनेका समय होगया था, राजाने उनके पास आकर कहा-वनमें मैं लकड़ी काटता रह गया, अब इस नगरके द्वार बन्द हो गये तुम्हारे पास लकड़ी बिक जायँगी इस आशासे मैं यहां आया हूँ अब तुम लो तो बड़ी कृपा होगी।

लकड़हारेके यह शब्द सुनकर उन्होंने लकड़ी मोल ले ली और पैसे दे दिये, लेकर लकड़हारारूप राजाने कहा-ब्रह्मदेव! अब द्वार बंद हो गया है इस कारण तुम आज्ञा दो तो मैं भी एक ओर यहां ही रहूँ।

ज्योतिषीने कहा-भला भाई ! निवास करो हमारा इसमें क्या है ? राजा वहां ही सोने लगा, उन चारोंने

विचार किया कि, हम एक एक प्रहर तक नहीं जागें तो इस जंगलमें हमें कोई लूट लेगा ।

ज्योतिषी वृद्ध था इस कारण उसका प्रथम प्रहर नियत किया, ज्योतिषी जागता रहा और तीनों जन निद्रा लेने लगे ।

राजाने ज्योतिषीकी परीक्षा लेनेके लिये कहा-

श्लोकपूर्वार्ध-" असारे खलु संसारे सारमेतत्त्रयं स्मृतम् । "

अर्थात्-इस असार संसारमें तीन वस्तु सार हैं । यह सुन ज्योतिषीने उत्तर दिया कि-

श्लोकोत्तरार्ध-" काश्यां वासः सतां सेवा मुरारेः स्मरणं तथा ॥ १ ॥"

अर्थात्-काशीका वास, संतोंकी सेवा और ईश्वरका स्मरण. यह सुनकर राजा अत्यन्त हर्षित हुआ । एक प्रहर व्यतीत हो गया और उसकी स्त्रीके जागनेकी बारी आयी इससे वह जागने लगी और सब सो गये. फिर राजाने कहा-

श्लोकपूर्वार्ध-" असारे खलु संसारे सारमेतद्द्वयं स्मृतम् ॥"

अर्थात्-इस असार संसारमें दो ही वस्तु सार हैं ।

उस स्त्रीने तुरंत ही उत्तर दिया-

श्लोकोत्तरार्ध-" कसारः शर्करायुक्तः कंसारिचरणद्वयम् ॥ १ ॥ "

अर्थात्-एक तो बूरायुक्त कसार और कंसके शत्रुके दोनों चरणारविंद । यह सुनकर राजा अत्यंत हर्षित हुआ और दूसरा प्रहर पूर्ण होनेपर तीसरा प्रहर आरंभ हुआ । और पुत्रकी बारी आयी. राजा फिर बोला-

श्लोकपूर्वार्ध-" असारे खलु संसारे सारं श्वशुरमन्दिरम् ॥ "

अर्थात्-इस असार संसारमें केवल श्वशुरका मंदिर ही सार है. यह सुनकर उसने उत्तर दिया-

श्लोकोत्तरार्ध-" हरः शेते हिमगिरौ हरिः शेते पयोनिधौ ॥ १ ॥ "

अर्थात् दोहार्ध-"हिमपर्वतपर हर बसे, रत्नाकर हरिवास " हर अर्थात् शंकर हिमालय (श्वशुरगृहके आंगन) में और हरि अर्थात् विष्णु क्षीरसमुद्रमें (श्वशुरके यहां) सोते हैं (विष्णु लक्ष्मीके पति हैं और समुद्र लक्ष्मीका पिता है) ।

यह सुनकर राजा भोज अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ. इस प्रकार रात्रिके तीन प्रहर व्यतीत हुए अर्थात् पुत्र सो गया और उसकी स्त्रीके जागनेकी बारी आयी. ब्रह्मपुत्रके सोनेपर पुत्रवधूसे कहा-

श्लोकपूर्वार्ध–"असारे खलु संसारे सारं सारंगलोचना ॥"

अर्थात्–इस असार संसारमें एक मृगनयनी स्त्री ही सार है. यह शब्द सुनकर पुत्रवधू जो अत्यन्त चतुर थी वह समझ गयी कि यह लकड़हारा नहीं यह तो निश्चय राजा भोज है यह विचार कर बोली:–

श्लोक उत्तरार्ध–" यस्याः कुक्षौ समुत्पन्नो भोजराज भवादृशः ॥ १ ॥ "

अर्थात् सारंगलोचना सार क्यों न हो, जिसकी कुक्षिसे हे राजा भोज ! आपके समान भाग्यवान् पुत्र उत्पन्न हो ।

"ब्राह्मण–पुत्रवधूने पहचान लिया" यह जानकर भोजराजा वहांसे द्वार खोलनेपर ही चल दिया । पश्चात् बड़ी धूमसे सरस्वती-कुटुम्बको नगरमें बुलाया और उनका भलीभांति आदर कर निवास करनेको उत्तम स्थान दिया और मासिक नियत किया ॥

कला २०.

(कपट संन्यास)

राजा भोजकी सभामें चौदह सौ पंडित थे. उनमें कालिदास सबमें श्रेष्ठ था. इस कारण राजा कालिदासपर अधिक प्रेम रखता था. उन पंडितोंके कुछ पुत्र अधिक विद्वान् थे परन्तु कालिदासकी विद्वत्ताके सामने उनकी

मान्यता अधिक नहीं थी इसलिये वे निरन्तर चित्तमें जलते थे. एक दिन सबने एकत्रित होकर विचारा कि, कालिदासके सामने हमारी मान्यता नहीं होती तो हमारे परिश्रम करनेका क्या फल हुआ ? इस कारण कोई उपाय करके कालिदासको धारानगरीसे निकलवा दें तो हमारी मान्यता होगी और संसारमें प्रसिद्ध भी हो जायँगे ऐसा कोई उपाय ढूंढ़ना चाहिये ।

एक पंडित बोला-हम सब मिलकर चौदह सौ पंडित कहलाते हैं इनमें कितनेक वृद्ध हो गये हैं उन वृद्धोंको समझाओ कि, तुम कालिदासको साथ लेकर काशीमें जाकर संन्यास लो, इससे उन वृद्धोंका भी कल्याण होगा और यहांसे कालिदासके जानेपर अपना कार्य भी सिद्ध होगा ।

यह युक्ति सबको उत्तम लगी, उन्होंने वृद्ध पंडितोंसे अपनी यह युक्ति कही, उन्होंने भी स्वीकार की; उन सबने विचार कर ऐसा ठहराव किया कि हम कालिदासको साथ ले यहांसे काशीमें जाकर संन्यास लें इससे हमारे देहका कल्याण होगा और हमारे पुत्रोंका कार्य सिद्ध होगा । उनमेंसे दश पंडित मिलकर कालिदासके निकट गये और वहां जाकर वेदांतविषयकी चर्चा करने लगे और कहने लगे कि हम विचार कर आपके पास आये हैं, इस अनित्य संसारमें रहकर व्यर्थ दिन व्यतीत करनेसे सब मिलकर काशीको चलें और वहां जाकर

मुक्तिका साधन करें, हमारा तो यह विचार है. अब आपका क्या विचार है सो कहो। यदि तुम्हारी भी सम्मति हो तो महाराजकी आज्ञा लेकर चलें ?

उनके अन्तरंग कपटको तो कालिदास अच्छे प्रकारसे जान गया परंतु अपने चित्तकी बात गुप्त रखी और बाहरसे अत्यन्त हर्ष प्रकट कर स्वीकार किया।

पश्चात् सब पंडित राजाके पास गये, वहां जाकर राजासे अपने चित्तकी बात कही, राजा वह सुनकर आनन्दपूर्वक बोला—अत्यंत हर्षकी बात है कि, आपने अच्छा विचार किया, यह आपके करने ही योग्य है और तुम्हारे पुत्र तुम्हारी जगह यहां सभाका कार्य कर ही लेंगे इसलिये आप अवश्य काशीजीको जाइये।

यह सुनकर पंडित आनन्दको प्राप्त होकर अपने घर गये, कुछ समयके पीछे जानेका प्रबन्ध किया, जानेसे पहिले दिन कालिदासके पास आये और दूसरे दिन जानेका विचार कहा। कालिदासने कहा—कि मैं भी तैयार हूँ और उनके चले जानेपर अपने मनमें कहा—"कुछ चिन्ता नहीं, उन्होंने मुझे फँसानेकी युक्ति तो ठीक की है, यदी मैं न जाऊं तो इनका मेरे ऊपर कुछ जोर तो है ही नहीं, परन्तु मैं तो इनके साथ जाकर वहां इनको ही फँसाकर चला आऊंगा।"

दूसरे दिन सब एकचित्त होकर चल दिये, कुछ समय पीछे काशीमें पहुँचे. वहां नृसिंहभारती नामक महा-

पुरुषके आगे हाथ जोड़कर इस प्रकार कहा—महाराज ! कृपा करके हमारी विनय सुनोः—

श्लोक—"अत्रत्यपापमपि पुण्यसमं मदीय-
मत्रत्यदुःखमपि सर्वसुखास्पदं मे ।
अत्रत्यवृत्तिरपि वैषयिकी समाधिः
श्रीमन्नृसिंहगुरुदर्शनपूर्णलाभात् ॥ १ ॥"

अर्थात्—हमको श्रीमान् नृसिंहगुरुके दर्शनका लाभ हुआ इस कारण हम सुख दुःख तथा पाप पुण्यको समान गिनते हैं और अब समाधिमें निमग्न रहकर निरन्तर वास करनेकी इच्छा है ।

यह सुनकर नृसिंहाचार्यने पूछा—तुम्हारा अभिप्राय क्या है मुझसे कहो ?

पंडितोंने कहा—हमको संन्यास दे अपना शिष्य कर ले ।

गुरुने कहा—तुम्हारी इच्छा है वह तो करूंगा; परन्तु एक दिनमें सबको संन्यास नहीं दे सकता इस कारण क्रमसे एक एकको संन्यास दूंगा, कल प्रातःकालसे एक एक मनुष्य आओ तो उसकी इच्छा पूछकर संन्यास दूं ।

गुरुको नमस्कार कर उसी ठहरनेके स्थानपर सब लौटकर चले आये, प्रथम संन्यास कौन लेगा इसका विचार करने बैठे. पंडितोंने अपना विचार सिद्ध करनेके प्रयोजनसे प्रथम कालिदासको संन्यास लेना होगा ऐसा

ठहराव किया, एक पंडित बोला–हम सबमें कालिदास श्रेष्ठ हैं इससे ये ही प्रथम संन्यास लें। यह सुनकर दूसरे पंडितने भी यही संमति दी, परन्तु कालिदासने कहा–यह तो कदापि योग्य नहीं, तुम्हारी इच्छासे मैं आया हूँ इस कारण तुम सब ले लोगे तब पीछेसे मैं लूँगा।

पंडितोंने कहा, यह तो ठीक परन्तु हमारे संन्यास लेनेसे पीछे तुमने न लिया तो?

तब कालिदासने मनमें विश्वेश्वर और कालीका स्मरण करके कहा कि–जो तुम्हारे संन्यास लेनेपर मैं न लूं तो मेरा और मेरे पूर्वजनोंका एक कल्पपर्य्यन्त नरकमें वास रहे, कालिदासके इन शब्दोंसे सबको विश्वास आया और दूसरे दिन एक पंडितने नृसिंहगुरुके पास जाकर गुरुआज्ञासे संन्यास लेनेकी इच्छा प्रकट की और हाथ जोड़कर कहा–

"कदा वाराणास्याममरतटिनीरोधसि वसन्
वासनः कौपीनं शिरसि निदधानोऽञ्जलिपुटम्।
अये गौरीनाथ त्रिपुरहर शम्भो त्रिनयन प्रसी-
देत्याक्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान्॥"

अर्थात्–कब काशीविश्वनाथ पुरीमें जाकर गंगाजीके तटपर बसूंगा और कब कौपीन पहने मस्तकपर अंजलिपुट स्थापन करके हे गौरीनाथ! हे त्रिपुरहर! हे शंभो! हे त्रिनयन! प्रसन्न हो प्रसन्न हो इस प्रकार कहता हुआ दिनोंको निकालूँगा।

इस प्रकार उसके मनका विचार जानकर उसको संन्यास दिया। दूसरे दिन दूसरे पंडितने आकर विनती की कि, मुझे संन्यास दो. उसकी इच्छा पूछनेपर उसने इस प्रकार कहा—

"कदा वृन्दारण्ये विमलयमुनातीर-
पुलिने चरन्तं गोविंदं हलधरसुदामादि-
सहितम्। अये कृष्ण स्वामिन्मदन-
मुरलीवादन विभो प्रसीदेत्याक्रोशन्नि-
मिषमिव नेष्यामि दिवसान्॥ १॥"

अर्थात् कब वृन्दावनमें जाकर स्वच्छ यमुनाके तीरपर, कामदेवको मोहित करनेवाली मुरलीका शब्द करते हुए और बलभद्र सुदामादिक ग्वाल श्रीकृष्णके साथ रहकर बिचरते हुए ऐसे हे कृष्ण हे स्वामिन्! हे मुरलीधर! हे विभो! प्रसन्न हो प्रसन्न हो इस प्रकार विनती करता हुआ मैं दिनोंको बिताऊँगा।

इस पंडितको भी दीक्षा दी. तीसरे दिन तीसरा पंडित आया उसको पूछनेपर उसने यह उत्तर दिया—

"कदा वा साकेते विमलसरयूतीर पुलिने
चरन्तं श्रीरामं जनकतनयालक्ष्मण-
युतम्। अये राम स्वामिन् जनक-
तनयावल्लभ विभो प्रसीदेत्याक्रोशन्नि-
मिषमिव नेष्यामि दिवसान्॥ १॥"

अर्थात्—कब अयोध्यामें जाकर स्वच्छ सरयूके तीर-पर सीता और लक्ष्मणके साथ श्रीरामचन्द्रजीका चरित्र गानकर हे राम ! हे स्वामिन् ! हे जानकीवल्लभ ! प्रसन्न हो प्रसन्न हो इस प्रकार कहकर दिन व्यतीत करूँगा।

उसकी इच्छा पूर्ण होनेपर पश्चात् चौथे दिन चौथा पंडित संन्यास लेनेको आया। उसकी इच्छा पूछनेपर उसने कहा—

"कदा श्रीमन्नीरानरहरिपुरे सिंहवदनं हरिं पश्यन्नुच्चैर्मुदितमनसा दीनदयितम्। अये लक्ष्मीकान्त श्रितजनभयारे नरहरे प्रसीदेत्याक्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान्॥ १॥"

अर्थात्—कब नरहरिपुरमें रहनेवाले और सिंहके सदृश जिनका मुख है ऐसे तथा प्राणियोंपर दयाकरने-वाले नरहरिका दर्शन कर हे लक्ष्मीकान्त ! हे नरहरि ! प्रसन्न हो प्रसन्न हो ! इस प्रकार शब्द कहकर मेरे दिन व्यतीत होंगे।

उसको संन्यास देनेके पीछे पांचवें दिन पांचवां पंडित आया उसकी इच्छा पूछनेपर उसने इस प्रकार उत्तर दिया—

"कदा प्रेमोद्गारैः पुलकिततनुः साश्रुनयनः स्मरन्नुच्चैः प्रीत्या शिथिलहृदये गद्गदगिरा।

अये श्रीमन्विष्णो रघुवर यदूत्तंस नृहरे प्रसी-
देत्याक्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान् १"

अर्थात् कब प्रेमके उद्गारसे रोमांचित, नेत्रोंमें आँसू लाकर गद्गदस्वरसे तथा प्रीतियुक्त शिथिल हृदयसे हे विष्णो ! हे रघुवर ! हे यदुकुलश्रेष्ठ ! हे नरहरे ! प्रसन्न हो प्रसन्न हो इस प्रकार शब्द कर मेरे दिन व्यतीत होंगे॥

उसकी इच्छा पूर्ण होनेपर छठे दिन छठा पंडित आया उससे पूछनेपर उसने इस प्रकार कहा-

" कदा सीताशोकत्रिशिखजलदं चाञ्जनिसुतं
चिरंजीवं लोके भजकजनसंरक्षणकरम् । अये
वायोः सूनो रघुवरपदांभोजमधुप प्रसीदेत्या-
क्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान् ॥ १"

अर्थात् कब सीताके शोककी अग्निको मेघके समान शांत करनेवाले और चिरंजीवी ऐसे अंजनीके पुत्रको हे वायुसुत ! हे श्रीरामचंद्रजीके चरणरूपी कमलके भँवरे ! प्रसन्न हो प्रसन्न हो इस प्रकार कहकर दिन व्यतीत होंगे ।

उसको भी संन्यास दिया. इसी प्रकार दश बारमें सबने संन्यास ले लिया. अन्तमें कालिदासकी बारी आयी, उससे नृसिंहगुरुजीने पूछा बोल तेरी क्या इच्छा है ? तब कालिदासने यह उत्तर दिया-

" कदा कान्तागारे परिमलमिलत्पुष्पशयने शयानः श्यामायाः कुचयुगमहं वक्षसि वहन् । अये स्निग्धे मुग्धे चपलनयने चंद्रवदने प्रसीदेत्याक्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान् ॥ १ ॥ "

अर्थात् कब ऐसा हो कि स्त्रीके क्रीडाभवनमें सुगंधयुक्त फूलोंकी शय्यापर शयन करता होऊं और पासमें सोलह वर्षकी सुन्दर स्त्री सोती हो; उसका स्तनयुग हृदयपर धारण करके हे प्राणप्रिये! (हे प्यारी!) हे मुग्धे! (भोली भाली!) हे चपलनयने! हे चन्द्रवदने! प्रसन्न हो, प्रसन्न हो इस प्रकार कहकर मैं दिन व्यतीत करूंगा।

यह सुनकर नृसिंह यतीने कहा–तेरा चित्त अभीतक विषयवासनासे तृप्त नहीं हुआ, तेरे मनमें वैराग्य नहीं आया, तू संन्यास लेनेके योग्य नहीं, इससे तुझे मैं संन्यास नहीं दे सकता।

यह सुनकर कालिदासने कहा–महाराज! यह कैसे कहते हो? आपके पास संन्यास लेनेकी इन पंडितोंके पास मैं प्रथम ही सौगन्ध दे चुका हूँ, उसको अब कैसे करूं कोई मार्ग हो तो बताओ।

गुरुने कहा–मैं कुछ जानता नहीं, तुझे संन्यास लेना हो तो दूसरे किसी यतीके पास जाकर ले, कुपात्रोंको मैं

संन्यास नहीं देता। कालिदासने कहा-जब आप मुझे संन्यास नहीं देते तब अन्यके पास भी नहीं लूंगा, परन्तु मैं इन पंडितोंसे सौगन्ध खा चुका हूँ उसको कैसे करूं?

यतीने कहा-तू संन्यास लेता है और मैं नहीं देता तो इसका पाप तुझे नहीं लगेगा. यह सुन जैसे लाचार हो गया हो ऐसा भाव प्रकट कर प्रथम लिये हुए संन्यासी पंडितोंकी ओर फिरकर कहा-हे यतियो! इसमें अब मेरा कोई अपराध नहीं, गुरु मुझे संन्यास नहीं देते इससे यहां वृथा बैठकर मुझे क्या मिलेगा? अब सब महाशयोंकी आज्ञापूर्वक घरको जाता हूँ.

यह कहकर वहांसे धारानगरीकी ओर चला, कुछ दिनोंमें धारानगरीमें आपहुँचा और काशीका सब वृत्तान्त उसने राजाभोजसे कहा-राजा पीछे आया देखकर और उसका वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त ही हर्षित हुआ और वह युवा पंडित कालिदासके आनेकी खबर सुनकर बड़े खिन्न हुए. परन्तु अपने वृद्ध पिता काशीमें संन्यासी हो गये इस कारण उनकी खबर पूछनेको वहां आये।

कालिदासने उनका स्वागत करके कहा-तुम्हारे पिता मुझे फँसानेको ले गये थे, परन्तु वह आपही फँस गये, उन्होंने अपनी इच्छासे संन्यास लिया इससे उनका कल्याण होगा. मैं इस संसारमें दुःख उठानेको फिर आया हूँ। इत्यादिक उनको समझाकर शांत किया और उनके जानेके पश्चात् आप अपने कार्यमें लगा।

कला २१.

(कविका कृत्य)

एक समय राजा भोज कहींको जाता था, जब नदी-पर पहुँचा तब एक ब्राह्मणको शिरपर लकड़ी धरे आता देखा, जब समीप आगया तब राजाने कहा-

श्लोक प्रथम च०-" कियन्मात्रं जलं विप्र ?"

अर्थात्-हे ब्राह्मण ! जल कितना है? तब ब्राह्मण बोला-

श्लोक द्वितीय च०-"जानुदघ्नं नराधिप!"

अर्थात्-हे राजन् ! घुटनों प्रमाण है.

यह सुनकर राजा चमत्कृत हुआ और फिर कहा-

श्लोक तृतीय च०-"ईदृशी किमवस्था ते"

अर्थात् तुम्हारी ऐसी अवस्था क्यों है ? तब ब्राह्मणने कहा-

श्लोक चतुर्थ च०-"नहि सर्वे भवादृशाः"

अर्थात्-सब आपके सदृश नहीं हैं अर्थात् गुणज्ञ नहीं।

तब प्रसन्न होकर राजाने कहा-हे विद्वन् ! तुम कोशाध्यक्षके पास जाओ और लक्ष रुपये लेलो। तब ब्राह्मण तत्काल बोझ डालकर कोशाध्यक्षके पास गया और कहा कि महाराज ! मैं भोजका भेजा हुआ हूँ मुझे लक्ष रुपये दो।

कोशाध्यक्ष सुनकर हँसने लगा और कहा—हे ब्राह्मण! तुम लक्ष रुपयेके योग्य नहीं हो।

तब ब्राह्मण खेदित होकर फिर राजाके पास गया और कहने लगा--हे राजन्! कोशाध्यक्षने रुपया नहीं दिया।

राजाने फिर कहाः—जाओ अब दो लक्ष रुपये मांगो, वह देगा। ब्राह्मण फिर कोशाध्यक्षके पास आया और कहा कि, अब दो लक्ष रुपये देनेको कहा है।

कोशाध्यक्ष फिर हँसा और कहने लगा—तुम दो लक्ष रुपयोंके भी योग्य नहीं हो।

तब वह खेदित हुआ ब्राह्मण फिर राजाके पास जाकर कहने लगा--हे राजन्! वह मूर्ख कोशाध्यक्ष हँसता है और कहता है कि, तुम दो लक्षके भी योग्य नहीं हो।

राजाने आनन्दयुक्त होकर कहा—हे ब्राह्मण! अब तीन लक्ष रुपये मांगो वह अवश्य देगा।

फिर ब्राह्मण कोशाध्यक्षके पास गया और कोषाध्यक्षने फिर वही उत्तर दिया।

तब वह ब्राह्मण अत्यन्त खेदसे क्रोधित होकर कहने लगा—

राजन् कनकधाराभिस्त्वयि सर्वत्र वर्षति।
अभाग्यच्छत्रसंछन्ने मयि नायान्ति बिंदवः १

अर्थात् हे राजन् ! सुवर्णकी धारारूपसे आप सब स्थानोंमें वर्षते हैं, परन्तु अभाग्यरूप छत्रसे ढका हुआ जो मैं हूँ मेरे ऊपर एक बूँद भी नहीं आती ।

अन्यच्च–"त्वयि वर्षति पर्जन्ये सर्वे पल्लविता द्रुमाः । अस्माकमर्कवृक्षाणां पूर्वपत्रेषु संशयः ॥ १ ॥"

अर्थात् हे राजन् ! आपके दानरूप मेघोंकी वर्षा होनेसे सम्पूर्ण वृक्षोंपर नवीन पत्र आगये; परंतु हमारे आकके तो वृक्षोंमें पहले पत्र भी नष्ट हो गये अर्थात् धन मिलनेकी आशासे मैंने अपना पहिला लकड़ियोंका बोझ भी फेंक दिया ।

यह सुनकर राजाने विचारा कि, यह ब्राह्मण अपने चित्तमें अत्यन्त दुःखित हुआ है तब अपना सेवक ब्राह्मणके साथ कर दिया और उससे कहा कि इसको कोशाध्यक्षसे तीन लक्ष रुपये, दश हाथी और बीस घोडे दिलवादेना ।

उस सेवकने कोशाध्यक्षसे जाकर कहा–तब उसने उपरोक्त सम्पत्ति देकर संतुष्ट किया ।

कला २२.

(कवियोंकी कुटिलता)

एक समय कवि कालिदासकी अत्यन्त मान्यता देखकर पंडितोंने विचारा कि, कालिदासको यहांसे

निकलवानेको प्रयत्न करना चाहिये। उनमेंसे एकने कहा कि, दासीके द्वारा महाराज भोजको कालिदासके अवगुण प्रकाशित कराने चाहिये तो राजा भोज कालिदासको तत्काल निकाल देंगे। यह विचार सबको उत्तम मालूम हुआ और उसी समय दासीके पास गये, उस दासीको धनादि देकर कहा—हे सुभगे! यह कालिदास सबकी कीर्तिको खंडित करता है, इस कालिदासके समान हमारी मान्यता नहीं होती, इस कारण जिससे इसको राजा भोज निकाल दें ऐसी विधिसे अवगुण प्रकट करना।

दासीने कहा—ऐसा ही करूंगी. कुछ समयके पश्चात् एक दिन वह दासी राजाके पांव दाबकर कपटसे वहां ही सो रही, जब राजाकी किंचित् निद्रा भंग हुई जानी तबही दासी स्वप्नावस्थाके समान कहने लगी—मदनमालिनी! यह दुरात्मा कालिदास दासीका वेष बनाकर लीलादेवीके पास जाकर रमण करता है।

इतनेमेंही राजा विस्मित होकर बैठ गया और बोला—हे तरंगवती! क्या तू जागती है?

तब जैसे कोई निद्रामें मग्न होता है इस प्रकार वह श्वास लेने लगी और नहीं बोली, उसको निद्रामें मग्न हुई जानकर राजाने विचार किया कि, यह तो निद्रामें है इसके मुखसे जो कुछ निकल रहा है वह ठीक ही है, क्योंकि जो कुछ मदनमालिनीसे कहा होगा वही अब नींदमें कहती होगी. अवश्य कालिदास रानीके साथ

व्यभिचार करता है । दूसरे दिन राजा परीक्षाके लिये कपटका ज्वर बनाकर रनवासमें सो रहे, तब कालिदासको उसीके हाथ बुलवाया, पश्चात् लीलादेवीसे कहा– हे प्रिये ! मुझे किंचित् भूखकी इच्छा है, आज तुम ही स्वयं भोजन बनाकर लाओगी तब ही भोजन करूंगा।

राजाके कथनका स्वीकार करके रानीने मूँगकी खिचडी बना, तत्काल सुवर्णके पात्रमें राजाके समीप लायी।

राजाने उस खिचडीको देखकर कहा–

"मुद्गदाली गदव्याली कवीन्द्र वितुषा कथम्?"

अर्थात्–हे कवींद्र ! रोगके नष्ट करनेमें सर्पिणीरूप यह मूँगकी दाल छिलकोंरहित कैसे हो गयी ?

वहाँ रानी भी पास ही बैठी थी तब ही कालिदासने कहा–

श्लोकउत्तरार्ध–" अन्धोवल्लभसंयोगे जाता विगतकञ्चुकी ॥ १ ॥ "

अर्थात् भातके साथमें दालने अपनी कंचुकी खोल दी अर्थात् भात पति है और दाल स्त्री इस कारण पतिका संयोग होनेसे पत्नीने अपनी कंचुकी खोल दी। रानी उस श्लोकको देखकर किंचित् मुस्कुराने लगी । राजाने इस बातको देखकर विचार किया कि अवश्य कालिदाससे यह प्रेम करती है, इसी कारण कालिदासने

न कहनेके योग्य भी श्लोक कह दिया और उसको सुनकर यह मुस्कुराने लगी। स्त्रीके चरित्रको कौन जानता है ?

" राष्ट्रस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं मनोरथं दुष्टहृदन्तराणाम् । स्त्रियाश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः ॥ "

अर्थात् सर्व प्रजाओंका चित्त, कृपण मनुष्योंका धन, दुर्जन मनुष्योंका मनोरथ, स्त्रियोंका चरित्र और पुरुषोंका भाग्य इनको देवतातक भी नहीं जानते, मनुष्योंकी तो बात ही क्या है ?

कालिदास वास्तवमें अपराधी है, परन्तु मारने योग्य नहीं यह विचार राजाने कालिदाससे कहा—हे कालिदास ! तुम हमारे राज्यमेंसे इस समय चले जाओ और इसमें उत्तरकी भी आवश्यकता नहीं है ।

कालिदास तत्काल वहांसे उठकर अपनी वेश्याके यहां गया और वेश्यासे कहा—हे प्रिये ! मुझे अब जानेकी आज्ञा दो, क्योंकि—राजा भोजने अपने नगरसे निकलनेकी आज्ञा दी है, मुझे विश्वास है कि इन दुष्ट पंडितोंने ही राजाके कानमें कुछ डाल दिया है ।

विलासवती (वेश्या) बोली कि जो अपने सुख दुःखका साथी हो वही परम मित्र है, ऐसी अवस्थामें ही मित्रताकी परीक्षा होती है. हे प्रिय ! जबतक मैं विद्यमान

हूँ फिर राजासे क्या करना है, आप सुखपूर्वक मेरे घरमें वास करिये, किसी प्रकारकी शंका न करो।

यह सुनकर कालिदासने वहां रहनेका विचार किया, राजभवनसे जब कालिदास निकल आया तब लीला-देवीने कहा—हे देव ! कालिदासके संग तो आपकी परम मित्रता थी सो अब क्या कारण हुआ जो आपने देशसे भी निकलवा दिया ?

"शोकारातिभयत्राणं प्रीतिविश्रम्भभाजनम्।
केन रत्नमिदं सृष्टं मित्रमित्यक्षरद्वयम्॥ १॥"

शोकरूपी शत्रुसे रक्षा करनेवाला, प्रीति और विश्वासका पात्र जो 'मित्र' है यह दो अक्षरका रत्न किसने रचा है।

रानीके कथनको सुनकर राजा बोले कि—हे प्रिये ! मुझसे एक मनुष्यने कहा था कि, कालिदास दासीका वेष धारण करके रानीके पास जाता है और रमण करता है सो मैंने परीक्षाके लिये यह ज्वर बनाया था, कालिदासको अब मैंने भले प्रकार जान लिया, क्योंकि देखो उसने यह इस समय अनुचित श्लोक पढ़ा और उसको सुनकर तुम्हारा मुखकमल भी प्रफुल्लित हो गया, उसका बड़ा भारी अपराध होनेपर भी मैंने उसको केवल देश निकालनेका ही दंड दिया है और तुमको चतुर जानकर तुम्हारे अपराधको क्षमा किया है।

तत्पश्चात् हँसती हँसती रानी बोली कि हे देव ! मैं धन्य हूँ, क्योंकि मैं आपसरीखे बुद्धिमान्‌की स्त्री हूँ। मुझे बड़ा आश्चर्य होता है कि, मेरा स्वभाव आपका देखा हुआ है तो भी मेरा मन अन्य स्थानमें किस प्रकार जा सकता है ? मुझे बड़ा खेद है कि, जो आप विना शीलवती बनाये अथवा विना दुराचारिणी बनाये ही यहांसे जाते हो।

तब राजाने स्वीकार करके एक सर्प मँगवाया तथा अग्नि प्रज्वलित करायी और रानीसे कहा कि अब तुम अपने शीलका प्रभाव दिखलाओ। रानी उसी समय स्नान तथा अपने इष्टदेवताका ध्यान करके आयी और झट सर्पको उठा लिया, सर्पको हाथमें लेते ही उसका विष गल गया. और मृतकवत् हो गया, उसका स्वभाव और तेज सब जाता रहा, जब सर्पने रानीको नहीं काटा, तब रानीने उसको छोड़कर झट अग्निमें प्रवेश किया। अग्निमें घुसते ही वह प्रज्वलित अग्नि तत्काल शीतल जलके सदृश हो गयी और उसकी उष्णता बिलकुल नष्ट हो गयी, तब राजाको पूर्ण विश्वास हो गया कि, वास्तवमें मुझे भ्रम था और मैंने अपनी मूर्खतासे इसको दूषित समझा और कालिदासको निकाल दिया। अब मेरी चतुराई गंभीरता लज्जा क्या गोठिल हो गयी ? मैंने कुछ भी न समझकर जलके समान निर्मलस्वरूप, चंद्रके समान शांत और सूर्यके समान प्रकाशित अमूल्य रत्नको

अपने देशसे निकाल दिया ! जिस प्रकार चन्द्रमाकी चन्द्रिकारहित रात्रि शोभित नहीं होती उसी प्रकार विना कालिदासके सभा सुशोभित नहीं होती है। कवि कालिदासकी कुशलताने राजाके चित्तको विकलकर रक्खा था, राजा इसी विचारमें रहते थे कि किस प्रकार कालिदास आ जाय। एक समय भोज चंद्रमाकी निर्मल चांदनी-रात्रिमें रानीसहित क्रीड़ा कर रहे थे तब रानीके मुख-स्वरूप चंद्रबिंबके समान पूर्ण चंद्रमाको देखकर बोले—

"तुलणा अणु अणुसरइ, ग्लौ सो मुहचंद-स्स खु एदाये ॥"

अर्थात् यह चंद्रमा इस रानीके मुखरूपी चंद्रमाकी कुछ समता करता है ? प्रातःकाल होनेपर राजा सभामें आये और सब पंडितोंके सम्मुख इस श्लोकका आधा-चरण पढ़ कर कहा—हे पंडितो ! इस श्लोकको पूर्ण करके लाओ, यदि तुमसे यह श्लोक पूर्ण न हो तो यहांसे निकल जाओ, यह सुनकर कविलोग विस्मित हो गये और सब अपने अपने घरको गये, वहां बहुत समयतक विचारा, परंतु किसीको समझमें भी इसका अर्थ न आया, तब सब पंडित भयभीत होगये, सब बाणकविसे बोले—हे पंडितराज ! तुम राजासे आठ दिनकी अवधि ले आओ। बाणकवि स्वीकार करके राजाके पास गया और आठ दिनकी अवधि माँगी।

राजाने स्वीकार करके कहा—यदि आठ दिनमें यह श्लोक पूर्ण न हुआ तो नववें दिन सब पंडित यहांसे निकल जावें।

राजाकी स्वीकार की हुई बात सब पंडितोंसे कहकर बाणकवि अपने घर गया।

जब आठ दिन बीत गये तब रात्रिमें सब पंडित एकत्रित हुए और उनसे बाणकवि बोला—अहो कवियो! विद्या और प्रतिष्ठाके मदसे कालिदासको निकाल दिया ऐसे विषम स्थानमें तो कालिदासही सबकी मान्यता रखनेवाला था, कालिदासको निकालकर अब क्या तुम्हारी महत्ता होगी ? यदि कालिदास होता तो हम सबकी ऐसी गति क्यों होती ? जिस बुद्धिसे तुमने उसको निकाल दिया है उसका स्वाद तुमको पूर्ण रीतिसे मिल रहा है। पश्चात् मयूर कवि बोला कि—अब अवधि पूर्ण हो चुकी कालिदासके विना इसको पूर्ण कौन कर सके?—

"संग्रामेषु भटेन्द्राणां कवीनां कविमंडले।
दीप्तिर्वा दीप्तिहानिर्वा मुहूर्तेनैव जायते॥ १॥"

अर्थात् संग्राममें योद्धाओंकी और कविमंडलमें कवियोंकी जीत तथा हार एकही मुहूर्तमें जानीजाती है।

अब मेरी तुच्छ बुद्धिमें आता है कि आजही रात्रिको सम्पूर्ण सामान लेकर सब चुपकेसे यहांसे चल दें, यदि नहीं चलोगे तो कल राजा बलात्कारसे कुटुम्बसहित सबको निकाल देंगे और सबका धन धान्यादि लुटवा देंगे।

इस बातको सबने स्वीकार किया और सब अपने अपने घर आकर चलनेका सामानकरने लगे, जब तैयार होगये तब अपनी अपनी सामग्री लेकर सब चल दिये।

कालिदास वहांही विलासवतीके बागमें छिपा हुआ था, जब बहुत सामग्री तथा कुटुम्बसहित मनुष्योंको जाता हुआ देखा तब दासीको देखनेके लिये भेजा।

वह उसी समय जाकर देख आयी और आकर बोली आज सब कवि अपने कुटुम्बसहित कहींको जाते हैं, ऐसा ज्ञात होता है कि, राजाने जो श्लोक पूर्ण करनेकी सबको आज्ञा दी थी सो पूर्ण नहीं हुआ है, यह सुनकर कालिदासने कहा—हे प्रिये! मेरे वस्त्र अत्यन्त शीघ्र लाओ कि जिससे इन जाते हुए कवियोंकी रक्षा करके रोकूँ।

दासीने जब वस्त्र ला दिये, कालिदास वस्त्र धारण कर हाथमें खड्ग लेकर सबसे पहिले बहुत दूरपर जा बैठा, जब ये मार्गमें जाते हुए दीखे तब इसने कहा—हे विद्यासागरो! बृहस्पतिके समान तुम सबने कहां पधारनेकी इच्छा की है? कुशल तो है? मैं भी काशीसे कुछ धनकी इच्छा करके आ रहा हूँ।

यह कथन सुनकर सब कवि हास्य करते चले गये; परन्तु एक कवि इसको विद्वान् समझकर कहने लगा कि हे द्विजराज! राजाने हमको एक श्लोक पूर्ण करनेके वास्ते दिया था, परन्तु हमसे आठ दिनमें भी पूर्ण न हुआ, अब हमको देश छोड़ना पड़ा।

यह सुनकर कालिदासने कहा-राजाने आपको कौनसा श्लोक दिया था? इस भाँति सुनकर उसने वह श्लोक सुना दिया, कालिदास बोला-ठीक है, चन्द्रमाका पूर्णमण्डल देखकर राजाने यह श्लोक रचा है; सो इसका उत्तरार्द्ध यह होना चाहिये।

श्लोकउत्तरार्ध-"अणु इदि वणयदि कहं अ-,णुकिदि तस्स पडिपदि चंदस्स ॥"

इसको सुनकर सब कवि विस्मित हो गये, यह कह कालिदास तो वहांसे चला आया और सब कवि विचारने लगे कि-अहो! यह पुरुष है या सरस्वती ही पुरुषका रूप धारण करके आ गयी।

पश्चात् सब कवि लौटकर अपने २ घर आ गये और सब सामग्री उतारकर बोले प्रातःकाल ही सबको सभामें जाना चाहिये नहीं तो वह पंडित ही अर्द्ध श्लोक कहकर महत्त्व प्राप्त कर लेगा।

इस बातको सबने स्वीकार किया, फिर प्रातःकाल ही सबके सब एकत्र होकर सभामें गये और राजाको आशीर्वाद देकर बैठ गये। तदनन्तर बाणकवि बोला-हे देव! आपने जो कहा था उसको आप ही जान सकते हैं, हम उदर पोषण करनेवाले क्या जानेंगे, परन्तु फिर भी कुछ कहा जाता है।

"तुलना अणु अणुसरइ, ग्लौ सो मुहचन्दस्स खु एदाये। अणु इति वणयदिकहं अ-, णुकिदि तस्स पडिपदि॥ १॥

छायाश्लोक–तुलनामन्वनुसरति ग्लौः स मुखचन्द्रस्य खल्वेतस्याः। अन्विति वर्ण्यते कथम–,नुकृतिः तस्य प्रतिपदि चन्द्रस्य॥ १॥"

अर्थात् इस रानीके मुखचन्द्रकी निश्चय यह चन्द्रमा समानता करने योग्य है, परन्तु प्रतिपदाका चन्द्रमा उस मुखकी समानता कैसे कर सकता है? अर्थात् मुख तो सदा पूर्ण मण्डलके सदृश है और प्रतिपदाके दिन चन्द्रमाकी एक ही कला होती है तब किस प्रकार समानता कर सकता है?

इस प्रकार राजाको निश्चय हुआ कि अवश्य यह पद कालिदासका ही बनाया हुआ है। पश्चात् बाणकविको पन्द्रह लक्ष रुपये देकर सबको बिदा किया। वह सब धन लेकर बाण कवि अपने घरको चला गया।

तब सब पंडितोंने मिलकर कहा–कि, बाणकविने यह बहुत अनुचित किया, क्योंकि सबके सब साथ ही साथ थे सबको इसमें भाग चाहिये इस बातको राजाके सम्मुख कहना चाहिये।

सबके सब फिर राजाके पास गये और सब वृत्तान्त कह सुनाया।

यह सुनकर राजाने विचारा कि, अवश्य कालिदास यहां ही है, मेरे भयसे छिप रहा है. फिर राजाने सेनापतिको आज्ञा दी कि, अभी सब योद्धाओंको तैय्यार कराओ, कालिदासको ढूँढ़ने चलो, आज्ञा पाते ही सब योद्धा तैयार हो गये और सेनापतिने कहा—महाराज! सेना तैयार है. फिर सब पंडितों सहित राजा घोड़ेपर सवार होकर चल दिया और थोड़ीसी सेना साथ ले ली, पश्चात् वहाँ ही (जहां उन कवियोंको वह पंडित मिला था) पहुँचे, किन्तु वहां पता न लगा, तब खोजी (जो पांव पहचानते हैं) को आज्ञा दी कि पहँचानो कोई चोर रातको किधर गया है. यह कहकर राजा अपने मंदिरको चला गया। उन खोजियोंने ढूढ़ते ढूढ़ते सन्ध्याको पता लगाया कि यह पांववाला इस वेश्याके घरको ही गया है, उन्होंने आकर राजासे कहा—महाराज! उस चिह्नवाले पांवका मनुष्य विलासवती वेश्याके यहां गया है।

झपटकर राजाने उस विलासवतीका घर चारों ओरसे घेर लिया और मंत्रियोंसहित उसके यहां चलने लगा।

कालिदासने यह कोलाहल सुनते ही विलासवतीसे कहा—हे प्रिये! मेरे कारण ही तुम्हें यह कष्ट उठाना पड़ा है।

यह सुनकर विलासवती बोली—हे सुकवे! यदि राजा वचनसे आपका मानभंग करेंगे तो मुझसहित यह दासी-

समूह अग्निमें भस्म हो जायगा, मित्रकी परीक्षा विपत्तिमें ही होती है ।

यह सुनकर कालिदास बोला—हे प्रिये ! राजा मेरा कदापि अनादर न करेगा, वरन् आते ही अत्यन्त हर्षित होकर आलिंगन करेगा । इतनेहीमें राजा भीतर चला गया और झट कालिदाससे चिपट गया, दोनोंके नेत्रोंसे अश्रुपात होने लगे, फिर राजाने कहा—

"गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा ।
मा भून्मनः कदाचिन्मे त्वया विरहितं कवे १॥"

अर्थात्—हे कवे ! चलते, बैठते, जागते और सोते मेरा मन कभी तुमसे दूर न हो ।

राजा फिर वेश्यासे बोला—हे विलासवती ! तुझको धन्यवाद है, क्योंकि जिस प्रकार पक्षीको पींजरेमें मनुष्य बांध लेता है, उसी प्रकार इस गुणी कालिदासको तूने अपने गुणोंकरके बांध लिया है । पश्चात् राजाने हर्षित होकर बहुत द्रव्य प्रदान किया और कालिदासको अपने साथ ले आया ।

कला २३.

(मृत्युकी कविता)

एक दिन वार्त्तालाप करते करते राजा भोजने कालिदाससे कहा—हे कविराज ! मुझपर कृपा करके कुछ मेरी मृत्युकी कविता बनाओ ।

कालिदासने कहा—महाराज ! क्षमा करो यह कार्य मुझसे न होगा। भोजने हठ करके फिर कहा—नहीं कालिदास ! आज विना कहे तुम्हें नहीं छोडूंगा।

इस भाँति राजाका हठ देखकर कालिदास क्रोधित हो गया और वहांसे उठकर घरकी ओर चला आया, पश्चात् नगरीसे भी बाहर चल दिया। राजा कालिदासको क्रोधित होकर गया सुन दुःखित हुआ, कुछ दिन तो योंही बीते, परन्तु राजाको अन्तमें उसका वियोग सहन न हो सका इससे राजा अपना सब राज्य प्रधानोंको सौंपकर आप योगीका वेष धारण कर कालिदास जिधर गया था वहांको ही चल दिया।

कुछ दिनोंमें कालिदास मिला। कालिदासने राजाको नहीं पहँचाना। वार्त्तालाप करते समय कालिदासने पूछा—हे योगिराज ! आप किस देशके वासी हैं ?

योगीने उत्तर दिया—हे कविराज ! यह पृथ्वी ही मेरा देश है, जहां रहा वहीं मेरा वास है।

कालिदासने फिर पूछा--इस समय आप कहांसे आते हैं ? योगीने कहा--इस समय धारानगरीसे आ रहा हूँ, वहां एक महा उत्पात हुआ है।

कालिदासने आतुरताके साथ पूछा—क्या हुआ ? योगीने कहा--पृथ्वीपति महाराज भोज परलोकवासी हो गये। भोजकी मृत्यु सुनकर कालिदास मूर्च्छित हो

पृथ्वीपर गिर पड़ा। कुछ समयमें सावधान होकर विलाप करने लगा कि हे राजा! अब पंडितोंका मान कौन करेगा? मैं आपके विना जीवित रहकर अब क्या करूँगा, हाय! हाय!! हाय!!! धारानगरी पतिहीन हो गयी. कुछ देर चुप रहकर फिर बोला–

"अद्य धारा निराधारा निरालम्बा सरस्वती।
पण्डिताःखण्डिताःसर्वे भोजराजे दिवंगते १"

अर्थात् भोज राजाके परलोकवासी होनेपर धारानगरी निराधार होगयी, सरस्वतीका कोई आश्रय नहीं रहा और सब पंडित खंडित (निराश्रित) होगये।

जब कालिदासने यह श्लोक पढ़ा तब अपने ऊपर कालिदासकी इतनी प्रीति देखकर योगीरूप भोज मूर्च्छित हो गया।

उसको इस प्रकार पड़ा देखकर कालिदास चमका और धीरे धीरे पेखा तो पहिचाना कि, यह तो स्वयं भोज ही है, फिर राजाको सावधान करके कालिदासने कहा–महाराज! आपने मुझे पहिचाना, परन्तु यह श्लोक करनेमें अशुद्ध हो गया है सो अब शुद्ध कर कहता हूँ सुनो–

"अद्य धारा सदाधारा सदालम्बा सरस्वती।
पण्डिता मण्डिताः सर्वे भोजराजे भुवं गते १"

अर्थात् भोज राजाके इस पृथ्वीमें होनेसे धारा

नगरी उत्तम आधारवाली हुई है, सरस्वती आश्रयवाली हुई है और सब पंडित उनसे शोभा पा रहे हैं।

अपने ऊपर कालिदासकी इतनी प्रीति जानकर भोज अत्यन्त प्रसन्न हुआ और कालिदासको साथ लेकर चला और कुछ दिनोंमें धारानगरी आ पहुँचा।

कला २५.

(कड़ कड़ धप्प)

एक दिन भोजराज अपनी पटरानी लीलावतीके साथ रत्नजटित हिंडोलेमें बैठ झूल रहे थे उस समय सोनेकी संकलसे हिंडोलेकी कडी घिस गयी थी उसका किसीको भी ध्यान न था, झूलते झूलते कडी एकसाथ टूट पडी और टूटते समय "कड़कड़ धप्प" ऐसा शब्द हुआ. इस शब्दका राजाने एक चरण बनाया-

"कड़ी कड़क गइ कड़कड़ धप्प"

कुछ समयमें राजा सभामें आया, सभा भरनेमें कुछ देर थी इस कारण पंडित एक एक करके आ रहे थे। कुछ समयमें जब सब पंडित एकत्र हुए तब राजाने पूछा मेरे मनमें एक किसी कविताका एक चरण याद आया है, उसके तीन चरण कोई कहो ? यह कह वह चौथा चरण राजा बोला-

"कड़ी कड़क गइ कड़कड़ धप्प" .

सब पंडित इसके चरण विचारने लगे. कुछ समय तक उत्तर न मिलनेपर कालिदासने खडे होकर कहा, महाराज ! सुनो-

भाषा छंद-"भोज प्रेमभर भयो भुजंग, लिपटो लीलावतिके अंग॥ जब आनन्द भयो गड़गप्प, कडी कड़क गइ कड़कड़ धप्प॥"

उस समय कालिदास विद्यमान न था, तो भी उसने वही सब बात कही यह देखकर राजा और सभाके सब पंडित आश्चर्ययुक्त हुए और राजाने उसकी चतुरता देखकर अतुल द्रव्य दिया।

कला २५.

(कुलटा रानी)

भोजराजाकी एक रानी दुराचारिणी थी; वह स्त्रीचरित्रमें अत्यन्त निपुण थी, भोजराजाके सम्मुख अपनी इतनी पतिव्रतता दिखाती थी कि राजा उसके ऊपर सदा मोहित रहता था और उसको सबसे कोमल जानता था.

एक दिन राजा उस रानीके साथ विनोद करता था इतनेमें छतपर बैठा एक कौआ बोला, उस कौएका वचन सुनकर रानी जैसे अधिक घबरायी हो इतनी कोमलता दिखाकर बोली-हे नाथ ! यह कौआ कैसे कठोर शब्द बोलता है ? मुझसे यह शूलके समान

अत्यन्त दुःखदायक कौवेके वचन नहीं सहे जाते, राजा उसको इतनी कुम्भलाई हुई देखकर अधिक मोहित हुआ. उसने कौएको चुप किया. कुछ समयान्तरमें राजा वहांसे उठकर अपने विचारभवनमें आया. वहां कालिदासके आनेपर राजाने कहा—

श्लोक १ चरण—"दिवा काकरुताद्भीता"

अर्थात् दिनमें कौएके स्वरसे भयभीत होनेवाली, यह श्लोकका चरण राजा बोला।

यह सुनकर कालिदासने उत्तर दिया—

श्लोक २ चरण—"रात्रौ तरति नर्मदाम्"

अर्थात्—परंतु यह स्त्री रात्रिके समय तो नर्मदाको भी तर जाती है।

यह सुनकर भोजराजाने इस विषयमें अधिक बात न कही, परंतु कालिदासके शब्दोंसे उसको संशय हो गया. कुछ समयांतरमें कालिदास बातें करके चला गया, राजाने उस रात्रिको जागते रहनेका निश्चय किया।

उस दुराचारिणी स्त्रीके भवनमें वह रात्रिको सोता था, रात्रि अधिक होनेपर कुछ समय पहिले ही राजा सो गया था। पश्चात् रानीने राजाके समीप आकर झांझन झनझनायी, परन्तु राजाने करवट भी न ली, यह देखकर रानी अपने आभूषण उतार संदूकमें रख तथा वस्त्रादिक बदलकर बाहर जानेको उद्यत हुई. राजातो

जाग ही रहा था, राजाके देखते देखते चल दी, राजाने भी बाबाजीके वस्त्र तैयार कर रक्खे थे, रानीके बाहर चलते ही राजा तुरंत उठा और वस्त्र पहरकर पीछे गया.

रानीके पीछे ही राजा चलाजाता था, रानी नदीकी ओर चली. बाबाजीके वेशमें राजा था, इससे रानीने इसको नहीं पहिचाना, वह रानीके सम्मुख आया, उस समय रानी वस्त्र कसकर नदीमें उतरनेको उद्यत हुई। राजा उसके आगे आकर बोला हे रानी[1] ! मेरे लड़के नदीके पार हैं और मैं यहां भीख मांगनेको आया था परंतु रात्रि हो जानेसे मार्ग अब नहीं दीखता, रानी इसकी ओर देखकर बोली-"तू कैसे नदीके पार जायगा ?"

राजा बोला-" जो तुम किसी प्रकार मुझे पार कर दोगी तो मैं तुम्हारा उपकार मानूंगा " रानी उसकी ओर दयाभावसे बोली-" तू कुछ चिंता न कर, मैं तुझे पार कर दूंगी " यह सुनकर वह भिखारी-रूप राजा आनन्दको प्राप्त हुआ. पश्चात् दोनों जने नदीमें चले, रानी उसको तिराकर पार ले गयी.

राजा वहाँसे अन्य मार्गको चला, रानी एक योगीकी कुटीकी ओर चली, राजा भी फिर उसके ही पीछे हुआ रानीने कुटीमें जाकर जो अपने साथ भक्ष्य पदार्थ लायी थी वे उस योगीको खानेको दिये, पश्चात् उसके साथ भोग विलास करके वहांसे चली।

---

१ बड़ाई देकर बोलनेमें भिक्षुक स्त्रीको ' रानि ' कहते हैं ।

राजा यह सब वृत्तांत देखकर रानीसे पहिले नदीके तीरपर आ बैठा और जैसे किसीकी बाट देखता हो ऐसा भाव दिखाया, रानीके समीपमें आनेपर राजा दीन वचनसे बोला-" मेरे बालक और कुटुम्बी मेरी बाट देखते होंगे, मैं यहां भीख मांगने आया था इस कारण तुम्हारे साथ नदीके पार हो जाऊंगा "

रानीको दया आयी और पार करना स्वीकार किया। मार्गमें राजाका पाँव मत्स्यने पकड़ लिया यह देखकर भिखारी रूप राजाने रानीसे कहा मेरा पाँव मत्स्यने पकड़ लिया।

यह सुनकर रानीने अपने पाससे एक पेटी निकालकर राजाके पांवकी ओर फेरी, उस पेटीके प्रभावसे मत्स्यने पांव छोड़ दिया, यह पेटी उस योगीने दी थी, उस पेटीके प्रभावसे ही रानी नदी पार होती थी।

कुछ समयमें दोनों जने नदीके पार आये, राजा शीघ्र चलकर रानीसे पहिले राजभवनमें आ गया और गुप्तभावसे सो रहा, कुछ समयमें रानी भी वस्त्र बदलकर अपनी शय्यापर आकर सो रही।

राजाने अपनी रानीका सम्पूर्ण चरित्र देखा था. रानीने वह पेटी तथा रात्रिके वस्त्र भी जहां रक्खे थे इन सबको यह जानता था. प्रभात होनेपर राजा नित्य नियमोंसे निवृत्त होकर अपने विचारभवनमें गया, फिर कुछ समयमें कालिदास आया उसको देखकर राजाने पूछा-

"तत्र सन्ति जले ग्राहाः"

अर्थात्—वहाँ मत्स्य अधिक होते हैं ।

कालिदासने उत्तर दिया—

"मर्मज्ञा सैव सुन्दरी ॥"

अर्थात्—यह वृत्तान्त जाननेवाली वह स्त्री ही है ।

कालिदासकी यह अद्भुत शक्ति देखकर राजा आश्चर्यको प्राप्त हुआ. वह रात्रिकी बात उसके अतिरिक्त कोई नहीं जानता था, परन्तु इसने जो यह वाक्य कहे वह कैसे कहे, कालिदास मेरी रानीकी बात जान गया यह बात जानकर राजा मनमें अति लज्जित हुआ पश्चात् उस दुराचारिणी स्त्रीके भवनमें जाकर उसको योग्य शिक्षा दी ।

कला २६.

(चन्दनकटोरीका शब्द)

एक दिन महारानी लीलावती भोजराजाके निकट सुवर्णकटोरीमें केसर कस्तूरी मिश्रित चन्दन लेकर जा रही थी, पत्थरकी पैड़ियोंपर थोड़ी दूर चढ़ते ही किसी संयोगसे सुवर्णकी कटोरी गिर गयी और "टटंटटंटंटटटंटटंटः" इस प्रकार शब्द हुआ । पीछेसे दासी झटपट महारानीके समीप आयी और कटोरी गिरी हुई देखकर दूसरी ले आयी ।

दूसरे दिन भोजराजा सभामें आकर बैठा, कुछ समयमें सब पंडितोंके आनेपर पूछा-

समस्या-" टटंटटंटंटटटंटटंटः ॥ "

यह एक श्लोकका चौथा चरण है, इसके प्रथमके तीन चरण क्या हैं वह कहो।

यह सुनकर सब विचारयुक्त हुए कुछ समयतक कोई नहीं बोला, तब कालिदासने कहा-सुनो महाराज !

" भोजप्रियाया मदविह्वलायाः
करार्च्च्युतं चन्दनहेमपात्रम् ।
सोपानमार्गेण करोति शब्दं
टटंटटंटंटटटंटटंटः ॥"

अर्थात् भोजकी भार्या मदनवेदनासे व्याकुल हुई हाथमें चंदनपूरित सोनेकी कटोरी लेकर पत्थरकी पैड़ियोंपर चढ़ती थी इतनेमें हाथसे थाल गिर गया और उसका " टटंटटंटंटटटंटटंटः " इस प्रकार शब्द हुआ।

कालिदासकी यह अद्भुत शक्ति देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसको तत्काल रत्नजटित मुद्रिका भेंट की।

कला २७.

(दारिद्र्यकी भस्म)

एक ब्राह्मण अत्यन्त धनहीन था और कुछ थोड़ी विद्या पढ़ा था, वह बिचारा अपनी आजीविकाके अर्थ

घोर परिश्रम करता था, परन्तु महाकष्टसे उदरपोषण होता था. उसने धारानगरीमें भोजराजाके पास जानेका विचार किया. उसने विचारा कि, राजाके यहां जाऊँ तो सही किन्तु कुछ ले जाऊँ, क्योंकि राजमंदिर, देव-मंदिर आदि ठिकानोंमें जाय तो भेंट लिये विना न जावे ऐसा कहा है–

"रिक्तपाणिर्न पश्येच्च राजानं देवतां गुरुम्।
दैवज्ञं भिषजं मित्रं फलेन फलमादिशेत्॥ १॥"

अर्थात् राजा, देवता, गुरु, ज्योतिषी, वैद्य और मित्रके यहां विना कुछ भेंट लिये नहीं जाना चाहिये. क्योंकि फलसे फल होता है इसके कारण राजाके पास कुछ भेंट लेकर जानेका निश्चय किया, परन्तु भेंट क्या ले जाऊँ ? अत्यन्त धनहीन था, द्रव्य खर्च करनेका सामर्थ्य न था, विचार करते करते निश्चय किया कि कोई खाद्य वस्तु ले जानेसे राजा प्रसन्न होगा यह समझ कहींसे ईख (गन्नों) के टुकडे मांग लाया और इनको जीर्ण वस्त्रमें बांधकर धारानगरीमें आ पहुँचा।

जहां राजसभा होती थी वहां आकर ठहरा. मार्ग चलनेसे थका हुआ तो था ही इससे उनको निद्रा आने लगी. वहां जो सभाके और मनुष्य बैठे थे उन मनुष्योंसे कहा–" भाई ! मैं यहां सो जाऊँ " जब सभा भर जाय तब कृपा करके मुझे जगा दीजियो।

उनके स्वीकार करनेपर वह वस्त्रमें बँधे हुए ईखके टुकड़े शिरके नीचे रखकर सो गया, जब सोगया तब एकत्र हुए मनुष्योंने उसकी पोटली निकालनेका विचार किया, उसके शिरके नीचेकी पोटली धीरेसे निकाल और गन्ने निकालकर छोटे छोटे टुकडे लकड़ीके बाँध दिये और उसके शिरके नीचे वैसे ही रख दिये।

कुछ समयमें जब सभा भर गयी तब उस ब्राह्मणको जगाया. वह बिचारा घबड़ाकर बैठ गया और वह पोटली शीघ्रतासे बगलमें रखकर सभामें आया, वहाँ सबके देखते देखते राजाके आगे खोल दी, उसने तो गन्ने समझकर खोले थे, परन्तु वे लकड़ीके टुकड़े निकल पड़े, वह संपूर्ण सभा लकड़ीके टुकडे देखकर आश्चर्यको प्राप्त हो गयी, राजा भोजको अपने सम्मुख लकड़ी पड़ी हुई देखकर क्रोध आया और विचार करने लगा, वह ब्राह्मण भी गन्नोंके स्थानमें लकड़ी देखकर भयभीत हुआ. राजाके चित्तको विचार और ब्राह्मणको भयभीत देखकर कालिदास बोला–महाराज ! इस ब्राह्मणका लकड़ीके टुकड़े आपके सामने रखनेका यह प्रयोजन है–

"दग्धं खाण्डवमर्जुनेन बलिना रम्यद्रुमै-
र्भूषितं दग्धा वायुसुतेन हेमनगरी लङ्का
पुनःस्वर्णभूः । दग्धो लोकसुखो हरेण
मदनः किं तेन युक्तं कृतं दारिद्र्यं जन-
तापकारकमिदं केनापि दग्धं नहि ॥ १ ॥

अर्थात् सुन्दरवृक्षोंसे शोभायमान जो खाण्डववन उसे अग्निको देकर अर्जुनने भस्म कर दिया, सर्व सुवर्ण-मय रावणके बसनेकी जो लंका उसको हनुमान्ने भस्म कर दिया, सम्पूर्ण लोकका सुख करनेवाला जो मदन उसको महादेवने भस्म कर दिया, इससे कोई मनुष्योंके सुखकी बात नहीं, क्योंकि सम्पूर्ण मनुष्योंके दुःखदायक जो दरिद्रता उसको किसीने भी भस्म नहीं किया, इस कारण महाराज! इस ब्राह्मणका प्रयोजन यह है कि इन लकड़ीके टुकड़ोंसे मेरी दरिद्रताकी भस्म करिये।

राजा यह सुनकर हर्षित हुआ, उसके मनका ताप शांत होगया पश्चात् उस ब्राह्मणको दश सहस्र मोहर देकर हर्षित किया. वह लेकर ब्राह्मण पीछेसे देखने लगा राजाने आश्चर्य पाकर उससे पीछे देखनेका कारण पूछा. ब्राह्मणने उत्तर दिया कि, महाराज! आपने मुझे द्रव्य दिया इससे मैं पीछे फिरकर देखता हूँ कि अनेक वर्षोंसे जो दरिद्रता मेरे पीछे लगी थी वह अब है कि नहीं। उस ब्राह्मणकी यह बात सुनकर सम्पूर्ण सभा हँस पड़ी और ब्राह्मण वहांसे चल दिया।

कला २८.

(रामभट्टका श्लोक)

कोई नवीन श्लोक बनाकर लाता था तो उसको राजा भोज एक सहस्र मोहर देता था. यह बात सर्वस्थानमें प्रसिद्ध थी।

गोदावरीके तीरपर एक धनहीन रामभट्ट नामका ब्राह्मण रहता था, उसने भी नवीन श्लोक बनाकर राजाके पास ले जानेका विचार किया कि, जिससे कुछ द्रव्य मिले और दरिद्रता दूर हो परन्तु श्लोक किस विषयका बनाऊं इसका विचार करने लगा. एक दिन वह ब्राह्मण गोदावरीमें स्नान करने जाता था इतनेमें सम्मुख एक मनुष्य अपने किसी मृतककी अस्थियें डालने जाता था. उसके पीछे ही एक दही बेचनेवाली जाती हुई समाने मिली, इसपर इसको प्रथम चरण आया कि-

श्लोक १ चरण-"अस्थिवद्दधिवच्चैव"

अर्थात् इस प्रकार एक चरण बनाकर खड़ा रहा, इतनेमें एक स्त्री हाथमें चावलोंकी पिट्ठी लेकर जाती थी और दूसरा कोढ़से सफेत हुए शरीरवाला एक पुरुष देखा उसको दूसरा चरण याद आया कि-

श्लोक २ चरण-" पिष्टवत्कुष्ठवत्तथा "

इस प्रकार आधा श्लोक तो होगया, अब शेषका आधा किस प्रकार पूर्ण करूं इस विचारमें था. कुछ समयके पश्चात् उसको याद आया कि इस श्लोकमें राजाको कुछ आशीर्वाद दूँ जिससे वह प्रसन्न होकर द्रव्य दे. इस प्रकार उसने तीसरा चरण रचा कि-

श्लोक ३ चरण--"राजंस्तव यशो भाति"

परन्तु आगेका चौथा चरण याद न आया, पश्चात्

थोड़े दिन उसको चौथे चरणका विचार रहा, अन्तमें एक दिन विचार हुआ कि, जिस प्रकार राजाको आशीर्वाद दिया है वैसे ही मैं अपनेको ही कुछ कहूँ, यह वृद्धावस्था हुई परन्तु श्लोक पूर्ण करनेकी शक्ति नहीं थी, वृद्धका जीवन मृत्तिकाके सदृश है यह विचारते विचारते चौथा चरण कहा-

श्लोक ४ च ०-" वृद्धब्राह्मणशष्पत् " ॥ १ ॥

श्लोक पूर्ण हो गया, तब आनन्दयुक्त धारानगरीको चला वहां एक धर्मशालामें उतरा, कालिदास आते जातेकी खबर रखता था. वह इस नवीन ब्राह्मणका आना सुनकर मिलने गया, वार्तालाप करके वह सब हाल जान गया, पश्चात् उसका श्लोक देखकर बोला महाराज! तुम्हारे श्लोकके पहिले तीन चरण तो उत्तम हैं परन्तु चौथा चरण नहीं मिलता, इस चौथे चरणसे तो अर्थ सब उलटा हो गया इस कारण इसके स्थानमें इस प्रकार हो तो राजा अत्यन्त प्रसन्न होगा "शरच्चन्द्रमरीचिवत्" इस प्रकार यह चौथा चरण कहा।

उस ब्राह्मणने कालिदासका कहा माना और उसी प्रकार अपने चरणके स्थानपर कालिदासका कहा चौथा चरण रखा।

दूसरे दिन वह राजसभामें आया और अपने नवीन श्लोकका हाल कहा, उसको नवीन श्लोक कहनेकी आज्ञा मिलनेपर वह बोला-

"अस्थिवद्दधिवच्चैव पिष्टवत् कुष्ठवत्तथा।
राजंस्तव यशो भाति शरच्चन्द्रमरीचिवत् १॥"

यह श्लोक सुनते ही विद्वान् तथा राजा तत्काल ही जान गये कि, प्रथमके तीन चरण तो इस ब्राह्मणके रचे हुए हैं परन्तु चौथा चरण किसी दूसरेका रचा हुआ है इस कारण किसी प्रकार इसका निश्चय करना चाहिये यह विचार कर कहा—"हे ब्राह्मण! प्रथमके तीन चरण तो परस्पर मिलते हैं परन्तु यह चौथा चरण मिलता नहीं इसका क्या कारण?" अपना श्लोक अच्छा न समझकर रामभट्ट भयभीत हुआ परंतु साहस करके कालिदासकी ओर अंगुली करके बोला—महाराज! यह चरण तो इनका कहा हुआ है मेरा चरण तो पृथक् ही है, यह कह अपना चौथा चरण कहा, वह सुनकर राजा हँसकर बोला हां, अब श्लोक ठीक मिला, इस कालिदासने तुम्हें भ्रमित कर दिया।

राजा मनमें तो समझ गया कि यह ब्राह्मण अत्यन्त सीधा है इससे कालिदासने इसके ऊपर दया करके इसका श्लोक ठीककर मुझसे कुछ द्रव्य दिलवानेका विचार किया है इस कारण इसको दूँ।

पश्चात् कोशाध्यक्षको बुलाकर उसब्राह्मणको कुछ द्रव्य दे हर्षित किया, वह ब्राह्मण राजा भोजको सत्यचित्तसे आशीर्वाद देकर अपने घर आया और वृद्धावस्था सुखपूर्वक व्यतीत करने लगा।

कला २९.

(सोमशर्माकी मूर्खता)

सोमशर्मा नामक एक ब्राह्मण दरिद्रतासे पीडित था वह ग्राम ग्राम विचरकर उदरपोषण करता धारानगरीमें आया "राजा भोज विद्वान् ब्राह्मणका सत्कार करता है" यह जानता था. परन्तु आप मूर्ख था, इस कारण जानता था कि राजा मुझे कुछ नहीं देगा, परंतु जो किसी प्रकार कालिदास कुछ दिलवा दें तो अच्छा हो, यह विचार कर कालिदाससे मिला और अपनी दरिद्रताका सब वृत्तांत कहा।

उसकी सब बात सुनकर कालिदासने पूछा "महाराज! तुमने कुछ विद्याभ्यास भी किया है अथवा और किसी कलामें कुशल हो, तुममें क्या २ गुण हैं?"

सोमशर्माने लज्जित होकर उत्तर दिया "पंडितराज! मैंने विद्या-अभ्यास नहीं किया, इससे राजसभामें दिखाने योग्य मुझमें एक भी गुण नहीं है।"

कालिदासने कहा-भाई! राजसभामें तो जब कोई गुण हो तो जा सकते हैं परंतु तुम तो कुछ भी नहीं जानते इस कारण एक बार ही राजाकी कृपा होनेपर भी संतोषित होकर चले जाना. उसने स्वीकार किया, इस कारण कालिदासने नाम स्थानादिक पूछकर कहा "तुम्हें जब राजा बुलावे तब आना और वहाँ आकर

राजाके आगे श्रीफल छोड़कर आशीर्वाद देना कि, आशीर्वाद " गाराया " इस प्रकार आशीर्वाद देना, पश्चात् मैं जो कुछ कहना है सो कहलूँगा।

यह कह कालिदास राजसभामें आये, कुछ समयके पीछे राजाको हर्षमें देखकर कालिदासने कहा—महाराजाधिराज ! आपके नगरमें एक ब्राह्मण आया है, वह विद्वान् तथा शास्त्रज्ञ है।

कालिदासके यह वचन सुनकर उसको स्थानपर बुलानेके लिये मनुष्योंको भेजा, कुछ समयमें वह मनुष्य उसको पालकीमें बैठाकर लिये आते थे, इतनेमें उसने वहां खड़े हुए ऊँट देखे, ऊँटोंको कभी उसने नहीं देखा था इससे अपने साथके पंडितोंसे पूछा कि " पंडितजी ! यह कौनसा जीव है ? "

एक पंडितने उत्तर दिया " उष्ट्र "

अबतक कालिदासका सिखाया हुआ आशीर्वाद वह याद करता हुआ आता था, वह यह नवीन नाम सुनकर भूल गया उसके स्थानमें उसे याद करने लगा, पश्चात् सभामें आकर राजाके सम्मुख श्रीफल रख आशीर्वाद देकर बोला—

" उशरटगाराया "

उस विद्वान् ब्राह्मणके मुखसे यह शब्द निकलते ही राजा और सब पंडित आश्चर्यको प्राप्त हो गये, राजाने

कालिदासकी ओर देखा, कालिदास राजाके मनकी बात जानकर बोले-राजाधिराज ! इन विद्वान् शास्त्रीजीने आपको आशीर्वाद दिया है, सो आप नहीं समझे, इनका कहना इस प्रकार है-

श्लोक-" उमया सहितो देवः शंकरः शूलपाणिना । रक्षतु त्वां हि राजेंद्र टकारो घनगर्जनः ॥ १ ॥ "

अर्थात्-हे राजेंद्र ! शंकरपार्वतीसहित शूल है जिसमें ऐसे हाथसे तुम्हारी रक्षा करें और मेघ गर्जना करके राज्यमें वर्षा करे यह प्रत्येक चरणका प्रथम अक्षर लेनेसे " उशरट " निकला है, यह सुनकर राजा आनंदको प्राप्त हुआ और उस ब्राह्मणको द्रव्य देकर संतुष्ट किया, वह कालिदासको आशीर्वाद देकर बिदा हुआ।

कला ३०.

(मूर्ख ब्राह्मण)

चंपकनगरमें केवश नामका एक ब्राह्मण इतना मूर्ख था कि, विद्या किसे कहते हैं यह भी नहीं जानता था, इतना ही नहीं किन्तु शुद्ध बोलना भी नहीं आता था, कहा है कि-

" मांसभक्षाः सुरापाना मूर्खाश्चाक्षरवर्जिताः ।
पशुभिः पुरुषाकारैर्भाराक्रान्ता च मेदिनी १॥ "

अर्थात् मांसभक्षी, मद्यपान करनेवाले और अक्षर-ज्ञानरहित मूर्ख मनुष्याकारमें पशुतुल्य और इस पृथ्वीपर भाररूप हैं।

ऐसा वह ब्राह्मण एक समय विचरता विचरता धारा-नगरीमें आ पहुँचा. वहाँ आकर कालिदाससे मिलकर कहा—पंडितजी महाराज ! मैं दरिद्रतासे पीडित हूं, आपके सदृश मेरा दुःख दूर करनेवाला कौन है ? मेरे ऊपर कृपा करके महाराजसे कुछ द्रव्य दिलावेंगे तो ईश्वर आपका कल्याण करेगा और मेरी दरिद्रता दूर होगी।

उसके दीनवचन सुनकर कालिदासको दया आयी। उसने उस ब्राह्मणको अपने यहां रखा वहां उसको २७ नक्ष-त्रोंके नाम सिखानेके लिये अपने मनुष्योंको आज्ञा दी।

दो तीन मासमें अत्यन्त परिश्रमसे उसके सब नक्षत्र सीखनेपर कालिदासने विचार किया कि, आज इस ब्राह्मणको महाराजके आगे ले जाकर कुछ द्रव्यकी प्राप्ति कराऊँ, इससे उस ब्राह्मणको अपने पास बुलाकर कहा—" आज तुमको महाराजकी ओरसे बुलवाऊँगा इस कारण उस समय तुम वहां आना, जिस समय दूसरा कोई न बोलता हो, तब तुम स्मरण किये २७ नक्षत्रके नाम मात्र बोलना और कुछ भी न बोलना."

यह उसको सिखाकर कालिदास राजसभामें गया, वहाँ वार्तालाप करते करते उसने राजासे कहा—" महाराज!

मेरे यहां एक विद्वान् ब्राह्मण आया है, मैंने उसको इस कारण दो दिनसे रखा है" यह सुनकर महाराज भोजने कहा-" उसको हमारी सभामें बुलाओ।"

यह कहकर सेवकको आज्ञा दी, आज्ञानुसार वह सेवक कितने मनुष्योंको और एक पालकी लेकर महाविद्वान् पंडितको बुलाने गया. कुछ समयमें वह केशव ब्राह्मण कालिदासके कथनानुसार साधारण वस्त्र धारण कर पालकीमें बैठ राजसभामें आया. उसने राजसभा स्वप्नतकमें नहीं देखी थी. वह यह सभा देखकर आश्चर्ययुक्त होगया और अपने सीखे हुएको भी भूलगया। २७ नक्षत्रोंके नामोंमेंसे उसको केवल उस समय चार ही याद आये और शीघ्रतासे बोल गया.

"अश्विनी, पुनर्वसु, रेवती, कृत्तिका"

इस प्रकार चार नाम वह बोल गया, उसको सुनकर राजा आश्चर्यको प्राप्त हुआ और कालिदासकी ओर देखकर धीरेसे बोला-" पंडितराज ! तुम तो इस ब्राह्मणकी हृदयसे प्रशंसा करते थे, परन्तु यह तो महामूर्ख ज्ञात होता है, इसका क्या कारण ?"

कालिदासने उत्तर दिया कि महाराज इस विद्वान् पुरुषने इन चार नक्षत्रोंके नाम कहकर आपको आशीर्वाद दिया है, इसका अर्थ आपकी समझमें नहीं आया? सो इस प्रकार हैः-

"अश्विनी वसतु देवमन्दिरे मन्दिरे वसतु
ते पुनर्वसु । रेवतीपतिकनिष्ठसेवया
कृत्तिकातनयविक्रमो भव ॥ १ ॥

अर्थात्–अश्विनी (घोडी) तुम्हारे घरमें निरंतर हो, पुनर्वसु अर्थात् लक्ष्मी भी आपके भवनमें निरंतर रहे, रेवतीपति अर्थात् बलदेवका छोटा भाई जो श्रीकृष्ण उनकी सेवासे कृत्तिकाका पुत्र जो कार्तिकस्वामी उसकी सदृश आपका पराक्रम हो ।

इस प्रकार कालिदासका कथन सुनकर राजा आनंदित हुआ और केशवके पाँव पड़कर पांच सहस्र मोहर देकर हर्षित किया । पश्चात् वह दरिद्री ब्राह्मण कालिदासका उपकार मानकर अपने नगरको गया और वहां शेष आयु सुखपूर्वक व्यतीत की ।

कला ३१.

(प्रश्नोत्तर)

एक दिन राजाने सभामें आते ही प्रश्न किया:–

श्लोकच०४–"गौरीमुखं चुम्बति वासुदेवः ।"

यह चौथा चरण है, प्रथमके तीन चरण कहो, कुछ समय विचार करनेपर कालिदासने कहा–महाराज ! सुनो–

" का शम्भुकान्ता किमु नेत्ररम्यं
शुकार्भकः किं कुरुते फलानि ।

मोक्षस्य दाता स्मरणेन को वा
गौरी मुखं चुम्बति वासुदेवः ॥ १ ॥"

अर्थात्-शिवकी स्त्री कौन ? "गौरी" नेत्रोंको रमणीय क्या ? "मुख" तोतेके बच्चे फलको क्या करते हैं ? "चुंबन" जिसका स्मरण करनेसे मोक्षकी प्राप्ति हो ऐसा कौन ? " वासुदेव "

इस श्लोकके प्रथमके तीन चरणोंमें प्रश्न है और चौथे चरणमें उनके उत्तर हैं, यह सुनकर राजा अत्यंत प्रसन्न हुआ और दूसरा प्रश्न किया-" कुन्तीसुतो रावण-कुम्भकर्णाः" इसके तीन चरण कहो.

कालिदासने उत्तर दिया-"महाराज ! आपके कहे हुए चरणसे लोग आश्चर्यको प्राप्त होंगे, इसका अर्थ यह है कि. "रावण और कुंभकर्ण कुंतीके पुत्र हैं" परन्तु प्रथमके तीन चरण सुनकर सब समझ जायँगे. यह श्लोक इस प्रकार है-

"का पाण्डुकान्ता गृहभूषणं किं
को रामशत्रुः किमगस्त्यजन्म ।
कः सूर्यपुत्रो विपरीत पृच्छा कुन्ती
सुतो रावणकुम्भकर्णाः ॥ १ ॥"

अर्थात्-पाण्डुराजाकी स्त्री कौन ? "कुन्ती" घरका भूषण क्या ? "सुत" (पुत्र) रामका शत्रु कौन ? "रावण"

अगस्त्यऋषिका जन्म कहांसे ? " कुम्भ " (घड़े)
सूर्यका पुत्र कौन ? " कर्ण "

यह सुनकर राजा भोज और सब पंडित आनंद-युक्त हुए।

कला ३२.

(विद्यावादभयम्)

महाराज भोजकी सभामें चौदहसौ प्रसिद्ध पंडित थे, उनमें कालिदास मुख्य थे. कालिदासकी कीर्ति चारों ओर प्रसिद्ध थी और उसके साथ वादविवाद करनेके अर्थ अथवा मिलनेके अर्थ देशदेशोंसे महान् महान् पंडित और कवीश्वर आते थे. माधव नामक एक बड़ा पंडित था वह बडे बडे देशोंमें विचरता और राजसभाओंको पराजित करता धारानगरीमें आया. अपनी विद्वत्ता बताकर तथा कालिदासको पराजित करके अपना नाम प्रसिद्ध करूं यह उसने विचार किया था. उसके साथ २९–३० शिष्य और बहुतसे सेवक थे. वह एक बड़ी धर्मशालामें आकर ठहरा. इस पंडितकी कीर्ति चारों ओर फैल रही थी और अनेक बातें कालिदासने भी सुनी थीं, इससे प्रथम तो कालिदासके मनमें भय हुआ कि भोजकी सभाके चौदहसौ पंडितोंके आगे संसारमें विस्तृत मेरी कीर्ति नष्ट हो जायगी, परंतु कालिदास युक्तिवाला था, माधवके आनेके दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर कालिदासने लकड़ी

बेचनेवालेका वेष बनाया और जहां माधव ठहरा था, वहां शिरपर लकड़ी रखकर गया और वहां "लकड़ी लो लकड़ी" इस प्रकार कहने लगा, इस पंडितको तो लकड़ियोंकी आवश्यकता थी ही इससे वेषधारिको बुलाकर लकड़ियोंका मूल्य पूछा, सुनकर कालिदासने कहा– महाराज ! तुम ब्राह्मण हो इस कारण तुमसे कुछ नहीं लेता, परन्तु तुम्हारे भोजन करनेपर कुछ भोजन बचे तो दे देना उसको मेरे बच्चे खा लेंगे ।

उसका यह कथन सुनकर माधवशर्माने कहा– "यदि हमारे भोजन करनेके पश्चात् कुछ नहीं बचे तो क्या करेगा ?

लकड़हारेने कहा–"मेरा प्रारब्ध ! मेरे घरकी सूखी रोटी तो कहीं नहीं जायगी" उसका यह संतोषकारक कथन सुनकर माधव आनंदित हुआ; पश्चात् उसकी लकड़ी लेकर एक ओर बैठनेको कहा और मनुष्योंको भोजन बनानेकी आज्ञा दी. कालिदास एक ओर बैठकर सम्पूर्ण वृत्तांत देखता रहा.

माधवशर्मा तथा उनके शिष्य आदिका कथन सुनकर कालिदासको निश्चय हुआ कि, पंडित समर्थ है जो हो सो ठीक.

कुछ समयांतरमें भोजन कर चुके और पश्चात् बाहर आ बैठे, कुछ समयमें पंडितने श्लोकका एक चरण रचकर कहा–

श्लोक च० १–"परिपतति पयोनिधौ पतङ्गः"

अर्थात्–सूर्य समुद्रमें गिरता है.

मेरे इस चरणका मिलता हुआ और अंत्यमें " गः " आवे ऐसा दूसरा चरण कोई कहो ?

यह वचन सुनकर केशव नामक विद्यार्थी बोला–

श्लोक च० २–"सरसिरुहामुदरेषु मत्तभृङ्गः"

अर्थात्–मद करके उन्मत्त हुए भ्रमर कमलमें बैठते हैं. केशवका दूसरा चरण सुनकर माधव अत्यन्त हर्षित हुआ. उसने औरसे तीसरा चरण कहनेको कहा. इसपर वल्लभ नामक शिष्य बोला–

श्लोक च०–३ "उपवनतरुकोटरे विहङ्गः"

अर्थात्–पक्षी उपवनके वृक्षोंकी खखोड़लमें निवास करते हैं.

यह सुनकर और भी आनंदित हुआ और किसीको चौथा चरण करनेकी आज्ञा दी कि जिससे श्लोक पूर्ण हो जाय, परन्तु किसी शिष्यसे भी चौथा चरण न हो सका, अन्तमें माधवशर्माने आप भी उसमें विचार किया परन्तु उसका मिलता हुआ चौथा चरण न बना। कालिदास यह दृश्य देख रहा था देखते २ उनके समीप आया, जब उसने देखा कि अब ये लोग चुप हैं, तब वह खड़ा हो हाथ जोड़कर बोला–" पंडितजी ! इसमें क्या विचारते हो ? मुझे आज्ञा दो तो मैं कुछ कहूँ ।"

यह सुनकर माधवपंडित हास्ययुक्त बोला-"अरे! इसमें तू क्या कहेगा? यह तेरे योग्य बात नहीं है, इसमें तो बडे बडे विद्वान् चुप हो रहे हैं।"

कालिदासने अधिक नम्रतापूर्वक कहा-"यह तो ठीक है कि, यहाँ विद्वानोंकी बात है तो मुझे भी आज्ञा दो तो जो मेरे मनमें है कहूँ।"

यह सुनकर माधवशर्माने विचार किया कि, यह इतना कहता है तो इसका मानभंग नहीं करना चाहिये, जो कहता है वह सुन तो लूं। यह विचार पंडितजीने कहा-"बोल तू क्या कहता है?" लकड़हारेने कहा-

श्लोक च-०४ युवतिजनेषु शनैःशनैरनङ्गः ॥"

अर्थात्-युवास्त्रियोंमें धीरे धीरे काम उत्पन्न होता है.

श्लोक ठीक पूर्ण हो गया, परन्तु सुनकर माधवशर्मा आश्चर्ययुक्त बोला-तू कौन है?

लकड़हारेने कहा-"महाराज! इतनेमें ही भूल गये मैं तो लकड़ी बेंचनेवाला हूँ, आपको प्रातःकाल लकड़ी लाकर दी थी यहां अन्नकी आशसे बैठा हूं।"

माधवशर्माने कहा-"तुझे यह श्लोक कैसे आया?"

कालिदासने कहा-"महाराज! मैं इसलोक पिस-लोक कुछ नहीं जानता, हो तो आप मुझे अन्न दो नहीं तो मैं अपने घर जाऊं, घर मेरी बाट देखते होंगे"

माधव पंडितने कहा-"नहीं! नहीं, यह तो तुझको

वचन दिया है, तुझे भोजन देता हूँ परन्तु कुछ समय और बैठ तुझे यह कैसे आया यह तो कह ?"

उसने उत्तर दिया पंडितजी ! मैं प्रथम ही जानता था कि मुझ दरिद्रीका कहना तुमसरीखे बड़े बड़े मनुष्योंको श्रेष्ठ नहीं लगेगा, परन्तु कौन जानता है कि, मेरे मनमें क्या है ?

माधवने कहा—नहीं ! नहीं, तेरा कहना कुछ बुरा नहीं. तेरे इस चरणसे तो मेरा श्लोक पूर्ण हो गया ।

कालिदासने कहा—महाराज ! जो मेरे कहनेसे तुमको दुःख हुआ हो तो समझ लो मैं बोला ही नहीं और मेरा वचन मुझे लौटा दो ।

माधव बोला—"ना ! यह तो नहीं होगा परन्तु यह श्लोक तूने किस प्रकार जाना सो मुझसे कह दे ।"

कालिदासने कहा—महाराज ! हमारे ग्राममें एक ब्राह्मण है वह पढ़ा लिखा बहुत चतुर और हमारे राजाका मान्य है, उसको सब लोग पंडित कहते हैं, उसके घर किसी किसी दिन मैं लकड़ीका बोझा देने जाता हूँ और वहां भोजनकी आशासे बैठा रहता हूँ, उस समय वह और उनके शिष्य परस्परमें वार्तालाप करते हैं वह मैं भी सुनता हूँ और कुछेक याद भी रह जाता है इससे यह भी मेरे हृदयमें रह गया सो मैं बोल उठा, मैंने कुछ अशुभ कहा हो तो क्षमा कीजिये; आप बड़े हैं ।

यह सुनकर माधव पंडितने पूछा—कालिदास पंडित बड़ा विद्वान् है ?

उसने उत्तर दिया—कालिदासके दास दासी भी विद्वान् हैं, यह ही नहीं, किन्तु उसके पशु पक्षीतक भी विद्वान् हैं, उन्हें इन पंडितने ही पढ़ाया है।

माधवने पूछा—तूने कभी उन पंडितको दृष्टिसे भी देखा है ?

उसने उत्तर दिया—पंडितजी ! बडे बडे लोगोंको उनके दर्शन नहीं होते तो मैं किस गणनामें हूँ ? जब वे सभामें जाते हैं तब पालकीमें बैठकर जाते हैं और उनके साथमें इतनी सवारी होती है कि, मनुष्यके चलनेको मार्ग नहीं मिलता तो मेरी दृष्टिमें कैसे आवें ?

लकड़हारेका यह कहना सुनकर माधवशर्मा आश्चर्ययुक्त हुआ और अपने मनका वृत्तान्त गुप्त करने लगा. परन्तु चतुर कालिदास उसके मनकी बात जान गया पश्चात् माधवने अपने सेवकको बुलाकर उसको भोजन देनेकी आज्ञा दी. वह भोजन लेकर जैसे कोई अत्यन्त संतोषित होता है ऐसी चेष्टा दिखा और नमस्कार कर वहाँसे चल दिया।

लकड़हारेके जानेपर माधवशर्माने विचार किया कि, जो विचार कर मैं यहाँ आया हूँ वह तो सफल नहीं हुआ, परन्तु आज तो मुझे अपना सुभाग्य ही समझना

चाहिये, क्योंकि मेरा मानरक्षक यह लकड़हारा मिल गया, जिस कालिदासके शिष्य इतने विद्वान् हैं कि, जिनके मुखसे सुनकर इस लकड़हारेने भी याद कर लिया तो कालिदास कितना विद्वान् होगा? ऐसे महान् विद्वान्के साथ वादविवाद करके जयके स्थानमें हुई कीर्ति भी नष्ट हो जायगी अतः इसके साथ मित्रता करनी चाहिये, मित्रता करनेसे कुछ लाभ होगा.

यह विचारकर मनमेंसे अभिमानको निकाल डाला और भोजराजासे मिलने गया. महाराजने उसकी कीर्ति पहिलेसे ही अधिक सुनी थी, उससे इसका अधिक सत्कार किया, पूर्ण सत्कार करनेपर राजाने कहा-पंडितराज! कोई विषय निकालकर मेरा और इस सभाका मन हर्षित करनेकी कृपा करिये.

इस समय माधव पंडितने कहा-राजाधिराज आपके पास कालिदासरूपी अमूल्य रत्न है, इस महान् विद्वान्से कोई पंडित भी वादविवाद करनेको समर्थ नहीं है तो मैं तुच्छ किस गिनतीमें हूँ, इनसे ही नहीं परन्तु इनके शिष्योंके साथ भी वादविवाद मुझसे नहीं हो सकता, इतना होनेपर भी जो कोई ऐसा करने खड़ा हो तो निश्चय उसका अपमान ही हो, परन्तु महाराज! मेरा यह कथन सुनकर आपको शंका उत्पन्न होगी कि, जो ऐसा है तो तुम यहाँ किस कारण आये? उसका उत्तर यह है कि, इस भारतवर्षमें इस समय धारानगरी सरस्वतीसे पूर्ण

रहती है, सरस्वतीके आप तथा सकलगुणसम्पन्न कालिदास महान् पात्र हैं, इससे आपके दर्शनकी अधिक दिनोंसे अभिलाषा थी वह आज पूर्ण हुई है।

इस प्रकार उस माधवशर्मासे कालिदासकी स्तुति सुनकर राजाको आनंद हुआ, पश्चात् राजाने उस पंडितको तथा सम्पूर्ण शिष्योंको भलीभाँति सत्कारपूर्वक बहुतसा द्रव्य दिया. कालिदास भी उनको अपने घर ले गया और वहां अत्यन्त सत्कार किया, कुछ दिन वहाँ रहकर आज्ञा ले अपने नगर आया. उस दिनसे उसके मनमें कालिदासकी ओरसे पूज्यभाव उत्पन्न हुआ और अन्ततक रहा।

इस प्रकार कालिदासने अपनी बुद्धिके बलसे उस महान् पंडितको वशमें किया।

उस पंडितने तथा कालिदासने जो मिलकर श्लोक रचा था वह इस प्रकार है:—

"परिपतति पयोनिधौ पतङ्गः
सरसिरुहामुदरेषु मत्तभृङ्गः।
उपवनतरुकोटरे विहङ्गो
युवतिजनेषु शनैः शनैरनङ्गः॥ १॥"

अर्थात्-सूर्य समुद्रके भीतर गिरता है; मद करके उन्मत्त हुए भौंरे कमलके भीतर बैठते हैं, पक्षी उपवनके वृक्षोंकी खखोड़लमें निवास करते हैं और युवास्त्रियोंमें धीरे धीरे काम उत्पन्न होता है (यह सन्ध्यासमयका वर्णन है)।

कला.३३.

(कालिदास और राक्षसकी भेंट)

महाराज भोजने नगरके बाहर उपवनमें एक नवीन भवन बनवाया था. यद्यपि यह भवन सादा था तथापि उसमें सब प्रकारका सुख था. उस भवनके तैयार होते समय उसमें एक ब्रह्मराक्षस बैठ गया इससे उस भवनमें जो कोई सोनेको जाता, उसको वह भक्षण कर जाता था. इस बातकी राजाको खबर होनेपर उसने बड़े बड़े मन्त्र जाननेवालोंको बुलाकर उस ब्रह्मराक्षसको भवनमेंसे निकालनेका प्रयत्न किया परन्तु यह ब्रह्मराक्षस तो मन्त्र जाननेवालोंको भी खाने लगा. अन्य बहुत मनुष्य उसको निकालनेके प्रयत्नमें थे परन्तु वह नहीं जाता था.

यह ब्रह्मराक्षस मनुष्यजन्ममें अभ्यास की हुई कोई कविता कहा करता था, परन्तु उसका समझकर कोई उत्तर न दे सकता था, जो कोई उसको उत्तर न दे उसे ही खा जाता था. इस प्रकार थोड़े दिन व्यतीत होनेपर राजाने वह भवन बन्द करादिया. यह देखकर कालिदासने विचार किया कि, किसी युक्तिसे इस राक्षसको भवनमेंसे निकालना चाहिये. पश्चात् वह राजासे बोला— "महाराज ! यह ब्रह्मराक्षस मनुष्यजन्ममें कोई बड़ा विद्वान् हुआ दीखता है. किसी कर्मके प्रभावसे यह राक्षसताको प्राप्त हुआ है ऐसा ज्ञात होता है, इस कारण

इसको मन्त्रसे नहीं बरन् शास्त्रार्थसे जीतना चाहिये, इससे आजकी रात इस भवनमें मुझे सोनेकी आज्ञा दो।

कालिदासका यह कथन सुनकर राजाने प्रथम तो नहीं कहा, पीछे उसको आज्ञा दी।

कालिदास उस रातको वहाँ जा सोया, प्रथम प्रहरमें ब्रह्मराक्षस आया, उस राक्षसका नियम था कि, जो कोई इस भवनमें सोनेको आता था, उससे एक सूत्र कहता था और यदि उसका मनमाना उत्तर नहीं मिलता था तब उस मनुष्यको खाजाता था. उसी प्रकार उसे रातको सोता देखकर राक्षस बोला—"सर्वस्य द्वे" (सबके दो).

कालिदास उसके मनकी बात समझकर बोला—"सुमतिकुमती संपदापत्तिहेतू" (सबके सुमति और कुमति यह दो संपत्ति और विपत्तिका कारणरूप हैं)।

यह सुन कुछ निराश होकर वहाँसे चला गया, जब दूसरा प्रहर आया तब वह फिर आकर बोला—"वृद्धो यूना" (वृद्ध युवाके साथ)।

कालिदासने उत्तर दिया—"सह परिचयात्त्यज्यते कामिनीभिः" (युवापुरुषके साथ परिचय हो तो स्त्री वृद्धको छोड़ देती है)।

फिर निराश होकर राक्षस वहांसे चला गया.

तीसरा प्रहर होनेपर वह फिर आकर बोला "एको गोत्रे" (गोत्रमें एक ही)।

कालिदासने उत्तर दिया—"स भवति पुमान् यः कुटुम्बं बिभर्ति" (सम्पूर्ण कुटुम्बमें कुटुम्बपोषक तो एक ही पुरुष होता है)।

राक्षस फिर चला गया. चौथे प्रहरमें वह फिर आकर बोला "स्त्री पुंवच्च" (स्त्री पुरुषके सदृश)।

कालिदासने उत्तर दिया—"प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम्" (स्त्री जब पुरुषके सदृश स्वतंत्र हो तब घरका नाश हुआ जानना)।

इस प्रकार प्रश्नोत्तरोंसे एक श्लोक पूर्ण होगया जैसे कि—

"सर्वस्य द्वे सुमतिकुमती संपदापत्तिहेतू वृद्धो यूना सह परिचयात्त्यज्यते कामिनीभिः । एको गोत्रे स भवति पुमान् यः कुटुम्बं बिभर्ति स्त्री पुंवच्च प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम् ॥ १ ॥"

अपने चारों प्रश्नोंका उत्तर मिलनेपर वह राक्षस चला गया और राजा वहाँ निवास करने लगा।

कला ३५.

(पतिव्रताकी पवित्रता)

एक दिन भोजराज और कालिदास एकान्तमें बैठे वार्तालाप कर रहे थे, उस समय महाराजको कोई बात याद आयी. उन्होंने कालिदाससे पूछा—" पंडितराज! हमारे देशमें सतीशिरोमणि कोई स्त्री है ?"

कालिदासने कुछ समय विचार कर उत्तर दिया-"हे राजन् ! आप जो सती स्त्रियोंको पूछोगे तो बहुत मिलेगी, परंतु सतीशिरोमणि पूछोगे तो एक ही है।"

भोजने पूछा-"वह कौन है ?"

कालिदासने उत्तर दिया-"इस नगरमें शंकरशर्मा नामका ब्राह्मण रहता है, वह धनहीन होनेपर भी किसीसे मांगता नहीं है, उसकी स्त्री सतीशिरोमणि है। अपने पतिको ही सर्वस्व माननेवाली वह स्त्री प्रातःकाल उठकर पतिसेवामें ही लीन रहती है. उनको जो कुछ मिल जाता है उसमें ही संतोष कर लेते हैं, अधिक मिलनेकी इच्छा नहीं करते. वह ब्राह्मण किसीसे याचना नहीं करता, उसकी स्त्री अन्य पुरुषका मुख नहीं देखती और किसी दिन घरसे बाहर नहीं निकलती, उस स्त्रीसे दर्शन होने भी दुर्लभ हैं।"

राजा बोला-"धन्य है उस सतीको ! निश्चय सतीशिरोमणि उसका ही नाम है. मुझे भी उसके दर्शन करनेकी अभिलाषा है,उसका दर्शन किस प्रकार होगा?"

कालिदासने उत्तर दिया-" महाराज ! आपको उसका दर्शन होना दुर्लभ है, वह ब्राह्मण किसीके पास भी धनकी याचना नहीं करता, अन्नके अतिरिक्त अन्य वस्तु नहीं लेता, उस ब्राह्मणको द्रव्यका लोभ दें तो उसकी स्त्रीका दर्शन हो, पन्तु मुझे यह निश्चय नहीं है कि वह ब्राह्मण धन देखकर लोभ करे।"

राजाने कहा–" ठीक है, देखूँगा।"

पश्चात् सभामें आकर राजाने शंकरशर्माको बुलाने भेजा, उसने राजसभामें जाना स्वीकार कर लिया। जो विद्वान् राजसभामें जाता है उसको राजा विशेष पारितोषिक देता है, यह बात वे स्त्री–पुरुष भलीभांति जानते थे. परन्तु राजा सभामें बुलाकर दान दे ऐसी उसको कभी इच्छा नहीं हुई थी, किन्तु राजाके बुलानेको देखकर शंकरशर्मा जानेको उद्यत हुआ, उस समय उसकी स्त्रीने कहा–"हे स्वामी! राजा द्रव्यका दान दे तो नहीं लेना, द्रव्यका दान लेनेसे हमारा नियम भंग होगा, द्रव्यसे लोभ और मद होता है इस कारण वह नहीं लेना।"

ब्राह्मण आप भी निस्पृह ही था. उसको भी यह बात भली मालूम हुई. वह थोडे समयमें राजाके मनुष्यके साथ सभामें आया उसको आता देखकर राजाने उसको लानेके लिये पंडितोंको भेजा, वे उसको मानपूर्वक लाये, राजाको आशीर्वाद देकर अपने अर्थ रखे हुए आसनपर बैठा, कुछ वार्तालाप करने पर भोजने उस ब्राह्मणको देनेके लिये मोहरोंसे भरे दो थाल मँगाये, वे थाल आनेपर राजाने ब्राह्मणको दिये, परन्तु जिस द्रव्यको लेकर प्रत्येक मनुष्यकी दरिद्रता दूर हो सकती है वह द्रव्य उसने नहीं लिया। उसको न लेता देखकर राजाने विचारा कि, यह द्रव्य थोड़ा है इस

कारण कोशाध्यक्षको बुलाकर दो थाल और मँगाये, थाल तत्काल आनेपर वे चार थाल उसको दिये, उनको देखकर शंकर शर्मा बोला—"हे राजन्! क्या आप मुझसे कि ये दो थाल थोड़े हैं इससे मैंने नहीं लिये? आप यह कदापि नहीं समझिये; मुझे द्रव्यकी इच्छा नहीं है, यह तो राजाओंको ही दीजिये, मेरा नित्यकर्म है, मैं तो अपने इतने ही धनमें हर्षित हूँ, मुझे किस कारण यहां बुलाया है सो कहिये? हम आपके सेवक हैं, आप हमारे स्वामी हैं इससे सब काम आपके करनेको उद्यत हैं।"

भोजने कहा—"महाराज! आपके दर्शनकी इच्छासे आपको परिश्रम दिया है. अब जब काम पडेगा तब बुलाऊँगा आप सुखसे पधारिये।"

यह कह उसको जानेकी आज्ञा दी दूसरे दिन कालिदाससे राजाने एकांतमें कहा—"हे कालिदास! इस शंकरशर्माकी सती स्त्रीका दर्शन अब जिस प्रकार हो, उसका कोई उपाय कहो।"

कुछ समय विचार करनेपर कालिदासने कहा—"हे राजन्! अब केवल एक ही उपाय है कि, इस सती स्त्रीका संन्यासीपर पूर्ण विश्वास है, इस कारण आप जो संन्यासी होकर उसके द्वारपर जावें तो उसका दर्शन होगा, अन्य कोई उपाय नहीं है."

भोजने कहा—" अरे संन्यासी ! तो क्या ? और भी कोई बुरा वेष बनाना पड़ता तो भी बनानेको उद्यत हूँ"

कालिदासने कहा—"महाराज ! संन्यासीका वेष लेनेमें मस्तक मुँड़ाना पडेगा । "

राजाने कहा—"उसका कुछ विचार नहीं परन्तु इसका पति घरमें होगा वह मुझे पहिचान लेगा । "

कालिदास—"बोला उसको यहां जप करनेको बैठाल दो तो पीछे यह भी भय नहीं रहेगा । "

कालिदासकी युक्ति राजाको ठीक मालूम हुई. दो तीन दिनके पीछे राजाने शंकरशर्माको बुला कर कहा—"हे महाराज ! आप जप तपमें निपुण हैं, हमें यहां जप कराने हैं वह आप भली भांति करोगे. इस कारण कल प्रातःकालसे करना । "

शंकरशर्माने प्रथम तो नहीं कहा, परन्तु राजाके आग्रह करनेपर स्वीकार किया । दूसरे दिन प्रातःकालसे वह तो जप करनेको बैठ गया. भोज पश्चात् अपना मुंडन कराकर गेरुआ वस्त्र पहन हाथमें कमण्डलु लेकर अद्भुत संन्यासी बने. शंकरशर्माके घर जाकर " भिक्षान्नं देहि " ऐसा कहकर खड़ा रहा । उस समय शंकर शर्माकी स्त्री भोजन बनाती थी. उसने संन्यासीका शब्द सुन भीतरसे ही उत्तर दिया कि "महाराज ! भोजन होनेमें कुछ देर है इसलिये आप वृक्षके नीचे पधारिये, भोजन होनेपर बुला लूंगी । परन्तु संन्यासीवेषधारी

भोजने हठ करके कहा–"मैं तो वहां बैठता नहीं इससे यहां ही बैठा हूँ" उनका यह हठ सुनकर वहां ही बैठनेको कहा. कुछ समयमें भोजन तैयार हो गया. उस स्त्रीने पृथ्वी स्वच्छ कर सब पदार्थ परोसे, उस दिन उसके यहां उत्तम आम आये थे उन आमोंका रस संन्यासीको देनेका विचार किया था, संन्यासीसे कुछ दूर आमोंको धोकर पात्रमें रस निकालने बैठी वे सब आम रससे पूर्ण थे, परन्तु एक आममेंसे भी रस नहीं निकला, यह देखकर वह बोली–"हे फलो! तुम रससे परिपूर्ण हो, परन्तु रसको क्यों नहीं छोड़ते? मैं बाल्यावस्थासे आजपर्यंत पातिव्रत्यसे रही हूँ, मनमें भी परपुरुषका ध्यान नहीं किया फिर क्या हुआ? इस नगरका राजा भोज सत्यवादी था. क्या वह परदाराके साथ भूला है?"

अब तो यह शब्द कहते ही आमोंसे धार छूटी, केवल दो आमोंमेंसे ही पात्र भर गया. भोजराजा यह सब बैठा बैठा देखता और सुनता था. वह यह चमत्कार देखकर आश्चर्यको प्राप्त हुआ, परन्तु उसके चित्तमें भय उत्पन्न हुआ कि इस सतीने मुझे पहिचान लिया है, मेरा कपट यह समझ गयी है, अब तो क्षमा मांगनी चाहिये यह विचार कर अपना दण्ड कमण्डलु छोड़कर उस स्त्रीको राजाने हाथ जोड़े और अपना अपराध क्षमा कराकर वहांसे चल दिया, परन्तु उस सतीने रोककर कहा–"हे राजा भोज! आप भय मत कीजिये, हम

आपकी प्रजा हैं इससे सन्तानतुल्य हैं, मैं आपको अपने पिताके सदृश मानती हूँ, आज बीस वर्ष हुए मेरा मुख परपुरुषने कभी नहीं देखा था । आपको सत्यवादी जानकर मैंने अपना मुख खोला है. इससे मेरा पतिव्रतापन भंग नहीं हुआ और यदि आप भी परस्त्रीलम्पट होते तो इन आमोंमेंसे रस कदापि नहीं निकलता, परन्तु आप कपट करके केवल परीक्षाके लिये आये थे इस कारण रस निकलनेसे रुकता था अपने कपटका आपको पश्चात्ताप हुआ इससे तत्काल रस निकला इस कारण भय न मानिये । यह सुनकर राजा वहांसे चला आया ।

कला ३५.

(कान्तिकाविका दृश्य.)

पहिले एक समय कान्तिकविके भेजे हुए श्लोकका कालिदासने हास्य किया था, वह बात कान्तिकविको याद आकर खेद उत्पन्न होता था. इसका किसी दिन बदला लेकर कालिदासकी कीर्तिको नष्ट करके और उनको पराजित करके अपनी कीर्ति बढ़ानेकी उसकी सदैव इच्छा रहती थी.

एक दिन किसीको साथ न लेकर अकेला ही धारानगरीकी ओर चला; धारानगरी कुछ दूर थी, इतनेमें एक भीलकी कन्या मिली उससे कांतिकविने पूछा हे कन्या ! तू किसकी पुत्री है ? कन्याने उत्तर दिया-

" हर हर स्मरते नित्यं बहुजीवप्रपालकः।
अरण्ये वसते नित्यं तस्याहं कुलबालिका॥ १॥"

अर्थात्—हर हर शब्द करनेवाला जो बकरियोंका समूह उसको पालन करके सदा जो वनमें रहता है, उसकी मैं कन्या हूँ अर्थात् गड़रियाकी कन्या हूं।

बहुत छोटी कन्याकी यह चतुरता देखकर कांतिकवि आश्चर्यको प्राप्त हुआ, कुछ आगे और चलते चलते ग्रामके समीपमें नदीपर पानी भरने कितनी एक स्त्रियें आती थीं उनमेंसे एकको पूछा—" हे भगिनी! तू कौन है?" यह सुनकर उसने उत्तर दिया—

" चतुर्मुखो न च ब्रह्मा वृषारूढो न शङ्करः।
अकाले वर्षते मेघस्तस्याहं कुलबालिका॥ १॥"

अर्थात्—चार मुख हैं परन्तु ब्रह्मा नहीं है, बैलके ऊपर आरूढ है परन्तु शंकर नहीं है, वर्षाकाल न होनेपर भी जो जल वर्षानेवाला है उसकी मैं कन्या हूं। अर्थात्—भिस्तीकी कन्या हूं।

उसकी चतुरता देखकर आश्चर्ययुक्त हो दूसरीसे वही प्रश्न किया, उसने उत्तर दिया कि—

" पञ्चभर्ता न पाञ्चाली द्विजिह्वा न च
सर्पिणी। वानरी न च कृष्णास्या
तस्याहं कुलबालिका॥ १॥"

अर्थात्-पांच स्वामी हैं परन्तु द्रौपदी नहीं है, दो जीभ हैं परंतु सर्पिणी नहीं है, मुख श्याम है परंतु वानरी नहीं है ऐसे कुलकी मैं कन्या हूँ अर्थात् हाथमें कलम लेकर लिखनेवाले कायस्थकी कन्या हूँ।

यह सुनकर वह आनंदित हुआ और तीसरी स्त्रीसे भी यही पूछा, उसने भी उत्तर दिया-

"नित्यं जुहोति द्रव्याणि चौर्यकारी दिने दिने। शत्रुं मित्रं न जानाति तस्याहं कुलबालिका ॥ १ ॥"

अर्थात्-जो प्रतिदिन द्रव्यका होम करनेवाला, चोरी करनेमें चतुर और शत्रुमित्रको समान गिननेवाला है उसके कुलकी मैं कन्या हूँ अर्थात् सुनारकी पुत्री हूँ। तदनन्तर चौथी स्त्रीसे वही प्रश्न किया, उसने उत्तर दिया-

"बाहुस्त्वस्ति शिरो नास्ति न सन्त्यङ्गुलिका दश। तस्योत्पत्तिकरो यस्तु तस्याहं कुलबालिका ॥ १ ॥"

अर्थात् जिसके केवल हाथ ही है मस्तक और दश अंगुलियें नहीं हैं उसको उत्पन्न करनेवालेकी मैं कन्या हूँ, अर्थात् दरजीकी कन्या हूं।

यह सुनकर कवि आश्चर्ययुक्त हुआ, जिस नगरकी हीन वर्णवाली स्त्रियें भी इतनी चतुर हैं तो दूसरी कितनी

चतुर होंगी और कालिदास तो न मालूम कितना ही चतुर होगा। परन्तु कुछ और भी चतुरताकी परीक्षा करूं ऐसे विचारते ही एक स्त्री मिली उससे पूछा-"हे भगिनी! तू कौन है?"

उस स्त्रीने उत्तर दिया-

"निर्जीवो जीवितो वापि श्वासोच्छ्वास-
विशेषतः। कुटुम्बकलहो नास्ति
तस्याहं कुलबालिका॥ १॥"

अर्थात्-निर्जीव होनेपर जीवित सदृश श्वासोच्छ्वास लेनेवाला और जिसके कुटुम्बमें क्लेश नहीं उससे आजीविका करनेवालेकी मैं कन्या हूं अर्थात् धोंकनीकी भट्टी फूँकनेवाले लुहारकी पुत्री हूं।

कांतिकवि छोटी बड़ी प्रत्येक स्त्रीको चतुर देखकर अत्यन्त आश्चर्यको प्राप्त हुआ और कुछ दूर चलनेपर फिर एक स्त्रीसे पूछा-"हे कन्या! तू कौन है?"

उसने उत्तर दिया-

"द्विराजा नगरी एका नित्यं युद्धं च जायते।
तदुत्पत्तिकरो यस्तु तस्याहं कुलबालिका १॥"

अर्थात्-एक नगरमें दो राजा राज्य करते हैं और उनमें नित्य युद्ध होता है, उसको उत्पन्न करनेवालेकी मैं कन्या हूँ अर्थात् सिंघाडियेकी कन्या हूँ.

यह सुनकर दूसरी स्त्रीसे पूँछा पश्चात् उसने उत्तर दिया-

"चक्रैकं न रथी सूर्यो भूमौ तिष्ठति सारथिः । अगस्त्यतातनिर्माणस्तस्याहं कुलबालिका ॥ १ ॥"

अर्थात्-एक पहिया है परन्तु सूर्यका रथ नहीं है और सारथी भूमिपर बैठा है, अगस्त्यऋषि जिसमेंसे उत्पन्न हुए हैं उसको बनानेवालेकी मैं कन्या हूँ अर्थात् कुम्हारकी पुत्री हूँ

जब कवि नगरीमें पहुँच गया तब उसको एक माली मिला, उसके कपड़ेमें बँधे हुए कुछ फल थे सो देखकर उससे पूछा-"भाई ! तेरे पास क्या है ?"

उसने उत्तर दिया-

"वृक्षाग्रवासी न च राजहंसो नाम्ना नरो वै न च राजपुत्रः। सुवर्णकायो न च हेमधातुस्तृणं च शय्या न च राजयोगी १"

अर्थात्-वृक्षोंमें रहनेवाला है परन्तु राजहंस पक्षी नहीं है, नाममें नर है परंतु राजपुत्र नहीं है, सुवर्णके सदृश कांति है परंतु सोना नहीं है, तृणोंकी शय्यापर सोता है परंतु राजयोगी नहीं है, ऐसे फल मेरे पास हैं अर्थात्-आम हैं ।

कुछ दूर चलनेपर और एक मनुष्य मिला, उसके पास कुछ देखकर उससे पूछा-"भाई तेरे पास क्या है ?"

उसने उत्तर दिया-

" वृक्षस्याग्रे फलं दृष्टं फलाग्रे वृक्ष एव च ।
अकारादि सकारान्तं यो जानाति स पंडितः १"

अर्थात्-वृंक्षके ऊपर फल है और फलके ऊपर वृक्ष है जिसका प्रथम अक्षर "अ" है और अंतका अक्षर "स" है, ऐसा फल मेरे पास है जो यह जानता है वही पंडित है। यह सुनकर वह फल क्या है ? वह कांतिकवि न जान सका, परन्तु उसका नाम जाननेकी उसकी इच्छा थी, इससे उस मालीको यह टालवाल करने लगा, टालवाल करता देखकर मालीने कहा-तू इतनी टालवाल करता है इस कारण तुझसे कहता हूँ मेरे पास जो फल है उसका नाम है " अनन्नास."

यह कहकर माली तो चला गया, कविने चित्तमें विचारा कि, अच्छा हुआ जो यहां मुझे कोई नहीं जानता है, कोई पहिचानता होता तो मानहानि होनेमें क्या सन्देह था. यह विचार कर आगे चला, आगे चलनेपर एक स्त्री मिली उसके शिरपर टोकरीसे ढकी हुई कोई वस्तु थी, उसको देखकर कविने पूछा-" हे भंगिनी ! तेरी टोकरीमें क्या है ?"

उस स्त्रीने उत्तर दिया--

" वृक्षाग्रवासी न च राजहंसो
नारी तु नाम्ना न च राजकन्या ।

बिभर्ति तोयं न च देवगङ्गा

त्रिनेत्रधारी न च शूलपाणिः ॥ १ ॥

अर्थात्--वृक्षोंमें रहता है परंतु राजहंस नहीं है, नाम नारी है, परन्तु राजकन्या नहीं, बीचमें पानी है परन्तु भागीरथी नहीं है, तीन नेत्र हैं परन्तु शंकर नहीं है।

यह सुनकर कविने विचारा कि मुझे जितने स्त्री पुरुष मिले वे सब विद्वान् ही हैं तो कालिदासकी विद्वत्तामें क्या संदेह है। इस स्त्रीकी ही बात नहीं समझ सका तो पीछे उस पंडितको कैसे जीतूंगा ?

पश्चात् उस स्त्रीसे कहा-"तेरे पास क्या है वह मैं नहीं समझा, मुझे कृपा करके कहो ?" स्त्री बोली-"मेरे पास नारियल है" यह कह हँसकर चल दी।

कुछ दूर चलनेपर एक दूकान आयी, उस दूकानपर बैठा हुआ एक मनुष्य कुछ साफ कर रहा था वह वस्तु क्या थी सो नहीं पहिचाननेपर कविने पूछा-"भाई ! यह क्या है ?" उसने उत्तर दिया-

"अर्धं वसति कैलासे ह्यर्धं गायकमन्दिरे।

संपूर्णं वणिगागारे यो जानाति स पण्डितः १"

अर्थात्-इसका आधा भाग तो कैलासपर रहता है और आधा भाग गवैयोंके घरमें रहता है, परन्तु सम्पूर्ण भाग मेरी दूकानपर है इसको जो जानता है सो पंडित है।

यह क्या वस्तु है वह कवि न समझ सका, उसने

कहा-" भाई! यह है क्या; मैं नहीं समझा, इसका नाम कहो." उसने उत्तर दिया-इसको " हरताल " कहते हैं. हर अर्थात् शंकर कैलासपर रहते हैं और ताल गवैयोंके यहां होती है.

यह सुनकर कान्तिकवि निराश होकर वहांसे आगे चला। उसको जो अपने ज्ञानका अभिमान था वह सब जाता रहा, फिर कालिदासके घर गया और पांवोंमें पड़कर बोला-" हे पंडितराज! मैं कान्ति नामक कवि हूँ, आपकी कीर्ति चारों ओर फैल रही है उसको सुनकर मुझे बहुत दिनोंसे आपके दर्शनकी अभिलाषा थी सो आज पूर्ण हुई। "

कालिदासने उसको तत्काल पहचान लिया कि, मेरी निंदाका श्लोक लिखकर भेजनेवाला यह ही कवि है, परन्तु उसका इसको कुछ भी खेद नहीं.

उस दिन कविको अपने घर रखकर उसका सत्कार किया और दूसरे दिन भोजराजासे इसको मिलाया। वहां कुछ दिन रहकर कांतिकवि अपने नगर आया।

कला ३६.

(रजस्वला भार्या)

एक दिन राजा भोज एक रानीके भवनमें गया, दैवात् उस दिन वह रानी रजस्वला थी, इस बातकी राजाको खबर नहीं थी, । दूसरे दिन राजा फिर उसके पास गया तो रानीने आता हुआ देखकर 'हुँहुंहुँहुंहुंहुँहुँहुं '

यह शब्द कहा, उसको सुनकर राजा उसका भावार्थ समझ गया और रानीसे विना वार्तालाप किये ही लौट आया। दूसरे दिन सभा भरनेपर राजाने कहा— 'हुँहुंहुँहुंहुंहुँहुँहुं करोति' यह श्लोकका चौथा चरण है, इसके प्रथमके तीन ऐसे चरण बनाओ कि, जिससे इस पद्यका संबन्ध मिल जाय।

कुछ समयतक पंडित विचार करते रहे, जब कोई न बोला तब कालिदासने कहा—महाराज! सुनो—

" भोजस्य भार्या ऋतुसंगयोगे एका-
किनी नारगृहं वसन्ती। सुस्पर्शकाले
तु निजप्रियस्य हुँहुंहुँहुंहुंहुँहुँहुं करोति १"

अर्थात्—राजा भोजकी भार्या रजस्वला होकर एकान्तमें बैठी थी, उस समय राजा खबर न होनेसे घरमें चले आये, उनके स्पर्शके भयसे मुखसे अन्य शब्द न करके 'हुँहुंहुँहुंहुंहुँहुँहुं' इस प्रकार रानीने कहा। अपने मनकी बात कालिदासने कह दी, इससे राजा भोज अत्यन्त हर्षित हुआ और कालिदासको धन्यबाद दिया।

कला ३७.

(रत्नोंकी चोरी.)

एक दिन राजा भोज सभामें बैठा था, इतनेमें एक सेवकने आकर कहा कि—" कोई चार परदेशी मनुष्य

आये हैं, वे सभामें आना चाहते हैं. उनके वस्त्र साधारण होनेपर भी मुखपर तेज मालूम होता है इस कारण उनको क्या आज्ञा है ?"

भोजने उनको भीतर आनेकी आज्ञा दी, कुछ देरमें वह मनुष्य उनको लेकर आया, उनको तेजस्वी और बलवान् देखकर सभा आश्चर्ययुक्त हो गयी; उनके मुखकी छबि मिलनेसे ज्ञात होता था कि, ये चारों सहोदर भाई हैं, नीतिके अनुसार उन्होंने नमस्कार किया। इतनेमें राजाने उनको आसन देनेकी आज्ञा दी, यह सुनकर उनमेंसे बड़ा बोला कि-"राजाधिराज ! हम अपना न्याय करानेके अर्थ निकले हैं, जो हमारा न्याय आप कर सकें तो बैठें, नहीं तो चले जायँगे।"

राजाने पूछा-"तुम्हारा क्या न्याय है ?"

उनमेंसे बड़ा बोला-" हम चारों राजपुत्र हैं, हमारा राज्य बड़ा है, हमारे पिताने मृत्युके समय हमको राज्य बराबर भाग बाँट दिया. उस राज्यके साथ चार रत्न भी बाँट दिये थे। वे चार रत्न हमारे सामने भंडारमें रखे और उनको तालेमें करके उसकी कुंजी हमें सौंप दी और अपने मरण होनेके पश्चात् वह भंडार खोलकर एक एक रत्न बाँटनेकी आज्ञा दे गये थे, उनके मरणकी क्रिया करनेके पश्चात् हम चारों एकत्र होकर रत्न लेने गये तो वह भंडार खाली देखा, कुंजी

हम चारोंके पास ही रहती थी और विश्वासी मनुष्योंका वहाँ पहरा था, वे रत्न चारोंके थे, इससे किसीने वे रत्न चोरी कर लिये. परंतु प्रथम इतनी विनती और सुन लीजिये कि, एक तो हमसे कुछ प्रश्न नहीं करना, दूसरे हमको ताड़न नहीं करना, तीसरे जिसके पास रत्न निकले उसका नाम हमको अथवा दूसरे किसीको प्रकाशित नहीं करना अर्थात् गुप्त रखना। इस प्रकार हमारी तीन प्रार्थना हैं। यदि अब आपसे हो सके तो निकालो, नहीं तो हम जाते हैं।"

भोजने कुछ विचार कर कहा--तुम्हारा न्याय मैं थोडे दिनोंमें करूंगा, तबतक तुम यहाँ रहो। भोज-राजाका यह कथन सुनकर उनको कुछ आशा हुई।

भोजने उनको सत्कारपूर्वक ठहरानेकी आज्ञा दी। सभामेंसे उनके जानेपर राजाने विचारा कि, इनकी चोरी किस प्रकारसे निकालनी चाहिये, कुछ समयतक विचारते विचारते उसको एक बात सूझी, तब अपने मुख्य प्रधान बुद्धिसागरसे कहा-" हे प्रधान! यह कार्य मैं तुमको सौंपता हूं, आठ दिनके भीतर इन रत्नोंकी चोरीका तलाश करना।"

कुछ समयमें सभा विसर्जन होनेपर सब अपने अपने घर गये। प्रधानने घर जाकर विचारा कि, अब क्या करूं, चारों मनुष्य पक्के हैं, इनके साथ किसी प्रकारका

कपट किये विना कार्य नहीं चलेगा, परंतु कपट क्या करना चाहिये? वह कुछ याद नहीं आता. अन्तमें बुद्धिसागरने कालिदासकी सम्मति लेनेको विचारा. इतनेहीमें उसको भली भाँति नींद आगयी, प्रभात होतेही वह कालिदासके घर गया, अपने यहां वृद्ध प्रधानको आता देखकर कालिदासने सत्कारपूर्वक बैठाया. प्रधान सद्गुणी था इससे कालिदासको पूर्ण निश्चय था, वह कार्य होनेपर बारंबार सम्मति लेने आता था और किसीकी बुराईमें नहीं था, इससे उसके अधीन सर्व काम थे। बुद्धिसागरने कहा—" पंडितजी! कल उन राजकुँवरोंकी चोरी निकालनेके लिये राजाने मुझे आज्ञा दी है, वे राजकुँवर अत्यंत चतुर हैं, उनकी चोरी किस प्रकार निकालूं सो बताओ।" कुछ समय विचारनेपर कालिदासने कहा—" प्रधानजी! इस चोरीके निकालनेमें मुझे एक युक्ति सूझती है, उस युक्तिके अनुसार आप जो चलेंगे तो कदाचित् कार्य सिद्ध हो जायगा" यह कह अपनी सूझी हुई युक्ति प्रधानसे कही, प्रधानको भी यह ठीक मालूम हुई. पश्चात् कालिदासने कहा—अब इस काममें पड़नेकी तुम्हारी आवश्यकता नहीं है, तुम्हारा बड़ा पुत्र चतुर है, इस कारण उसको कल मेरे पास भेजना इन राजकुँवरोंको पृथक् पृथक् स्थानमें ठहरा दो और वे एक दूसरेसे नहीं मिलें ऐसा प्रबन्ध कर दो।"

प्रधान वहांसे चला और उन राजकुँवरोंके पास

जाकर कहा–" हे कुँवरो ! मैं तुम्हारे लिये स्थानका प्रबन्ध करता हूँ, तुमको पृथक् पृथक् रहना होगा. कोई एक दूसरेसे नहीं मिल सकेगा, जबतक कि तुमको आज्ञा दी है–उसके अन्तिम दिन सभामें आना।"

इस प्रकार कह प्रधान वहांसे चला गया और स्थानका प्रबन्ध करने लगा, कुछ समयमें उसने योग्य स्थान ढूँढ लिया, प्रत्येक राजकुँवरके लिये चार चपरासी और एक सेवक नियत किया, अन्य कार्य करनेके लिये और मनुष्य नियत कर उनको सत्कारपूर्वक रखा। राजकुँवर अपने अपने स्थानोंमें जा रहे, यह सब बात प्रधानने सभाके समय कालिदाससे कह दी।

दूसरे दिन बुद्धिसागर प्रधानने अपने बडे पुत्र विद्यासागरको कालिदासके यहाँ भेजा, उसको आता देख कालिदासने कहा–" तुम्हारे पितासे जो मेरी बातचीत हुई है तुम्हें ज्ञात होगी ही, उसी प्रकार प्रत्येक राजकुँवरके साथ पहिचान करनी चाहिये, कुछ जान पहिचान हो जाय तो पश्चात् उनको शतरंज खेलना स्वीकार कराऊंगा, शतरंज खेलनेमें तुम चतुर हो, तुम्हें मैं जो बात बताऊंगा उसी प्रकार खेलना, उससे ही तुम उन रत्नोंकी बात जान लोगे।"

पश्चात् इन दोनोंने वेष बदला और जहां बड़ा राजकुमार था वहां गये, राजकुमार बाहर चौतरेपर बैठा था

उसको इन दोनोंने जाकर नमस्कार किया और एक ओर बैठ गये । पश्चात् वार्तालाप करना प्रारंभ किया. वार्तालाप करते करते शतरंज खेलनेको कहा । राजकुँवरको भी शतरंज आती थी उसने कहा कि, जो तुमको अवकाश हो तो प्रारम्भ करो ।

यह सुनकर कालिदासने कहा कि, हम भी अब इस नगरमें आये हैं, यहां कुछ दिन रहनेका हमारा विचार है, हम भोजनसे निश्चित होकर रात्रिके समय आवेंगे ।

यह कह दूसरी कुछ बात करनेके पश्चात् वह दोनों वहांसे उठकर दूसरे राजकुँवरके यहां आये, उसके साथ भी वार्तालाप कर आनेका स्वीकार किया ।

इस प्रकार चारोंके साथ जान पहिचान करके दोनों घर आये उस दिन रातको बडे कुँवरके यहां जाना स्वीकार कर आये थे परन्तु वे गये नहीं, दूसरे दिन भी न जाकर रातको गये, प्रथम रात्रिको नहीं गये थे, इसका कारण बूझनेपर कालिदासने कहा–" हमारा एक भाई यहांसे छः कोश दूरपर एक ग्राममें रहता है वह कल कुछ कार्यवश आया और हमको एक ग्रामको लिवा गया, सो हम अब ही वहांसे आये हैं । "

इस प्रकार कुछ वार्तालाप करनेपर राजकुँवर भीतर ले गया और वहां शतरंज खेलना प्रारम्भ किया । खेलते खेलते विद्यासागरने दीपकको ठीक करनेके बहानेसे

बिल्कुल समाप्त कर दिया, देखकर कालिदासने कहा— " सेठ दीपक जलानेकी चकमक है ? "

राजकुँवर बोला—" मेरे पास तो कुछ नहीं, बाहर पहरेदार हो तो देखो उसके पास होगी। " विद्यासागरने बाहर जाकर देखा तो एक पहरेदार औंघा रहा था, उससे चकमक मांगा परन्तु यह प्रथमसेही सिखाया हुआ था उसके पास नहीं था, फिर किसीके दीपकसे प्रज्व-लित करनेको कहा परन्तु किसीके यहां दीपक बलता नहीं यह कहकर लौट आया. राजकुँवरका खेलनेको बहुत मन था और अपनी बाजी जीतमें भी थी परन्तु उपाय क्या ? दूसरे दिन खेलनेको कहकर विद्यासागर और कालिदास घर आगये।

दूसरे दिन उसके यहां न जाकर दूसरेके यहां गये, उसके यहां भी ऐसा ही हुआ परन्तु रत्नोंका पता नहीं लगा। पश्चात् तीसरेके यहां गये. उन्होंने वहां भी ऐसा ही किया, अब जो हो तो चौथा भाई चोर हो. यह विचारकर सबसे छोटे भाईके यहां गये. वहां भी शत-रंज खेलना प्रारम्भ किया. पहिले दिन विद्यासागर अत्यन्त चतुरतासे खेला. तीसरा प्रहर होनेपर विद्यासा-गरने छोटे राजकुँवरको जीत लिया. इस राजकुँवरको खेलनेका उत्साह बहुत था और विद्यासागर शतरंजका गुरु कहलाता था, इससे उसके साथ खेलनेमें राजकुँवर आनंदित होता था। दूसरे दिन वे दोनों फिर गये और

नसीली वस्तु डालकर पानके बीड़े ले गये थे उनमें नसीली वस्तु ऐसी डाली थी कि जिसमें धीरे धीरे नसा चढ़ता जाय, फिर खेलना प्रारम्भ किया. प्रथम तो विद्यासागर भले प्रकार खेला, इससे राजकुँवर हारने लगा, तदनन्तर थोड़ी देर चलनेपर विद्यासागर मोहरोंकी चाल चूकने लगा, इससे राजकुँवरकी जीत होने लगी. कालिदास उस समय बारबार विद्यासागरको और राजकुँवरको पान देता जाता था, वह पहिले दो पान उस नसीली वस्तुके दे चुका था, उसके नशेमें राजकुँवर अधिक उत्साहसे खेलता था, परन्तु जीत होनेके समय ही कालिदासने दीपक सुधारनेके मिससे बढ़ा दिया. अपनी जीत होनेके समय दीपक बढ़ गया देखकर राजकुँवर क्रोधित हुआ और दीपक बालनेको कहा. कालिदास बाहर जाकर कुछ देरसे आया और कहा कि-कोई द्वार नहीं खुला उससे दीपक नहीं जल सकता, थोडी देर विचार करनेके पीछे उस नसेमें राजकुँवर खड़ा हुआ और अपनी एक छोटी पेटी निकालकर कुछ वस्तु ले आया. उसके निकालते ही वहां प्रकाश हो गया। एक दीपकके बदले एक सौ दीपकके सदृश प्रकाश हो गया. कालिदास तथा विद्यासागरको निश्चय हुआ कि, उन चुराये हुए रत्नोंमेंका एक यह है. प्रकाश होनेपर खेलना प्रारंभ हुआ. कुछ समयमें राजकुँवरको पान और खिलाये इससे विशेष नशा होनेपर अपनी शय्यापर गिर

गया, उस समय उसको कुछ ध्यान न रहा, यहां कालि-दास तथा विद्यासागरने वह पेटी निकालकर शेष तीन रत्न भी ले लिये और द्वार बंदकर बाहरके पहरेदारको पहरा देनेकी आज्ञा दे वहांसे चले आये.

दूसरे दिन प्रातःकाल होनेपर राजकुँवर जागृत हुआ और रात्रिको ध्यान होनेपर अपनी पेटी उघाड़कर देखी तो वह रत्न नहीं मिले. अब क्या कहं इन रत्नोंको किसीसे "नहीं मिले यह भी नहीं कह सकता" उसकी हालत चोरके सदृश हो गयी। परन्तु गुप्ततापूर्वक विद्यासागरने चारों रत्न अपने पिताको दिये. आठ दिन पूरे होनेपर चारों राजकुँवर राजसभामें आये. उनको देखकर भोजको उनकी बात याद आयी और बुद्धिसागरसे पूछा—"प्रधानजी ! इन राजकुँवरोंको दी हुई अवधि पूर्ण हो गयी, अब इनको क्या उत्तर देते हो?"

बुद्धिसागरने विनययुक्त कहा—"राजाधिराज ! उनका न्याय आप ही करेंगे (फिर राजकुँवरोंकी ओर फिरकर) अपने रत्नोंको तुम पहिचानते हो ?"

चारोंने कहा—"हां"

प्रधानने अपने पासके रत्नोंको निकालकर कहा—"ये तुम्हारे रत्न हैं ?"

अपने रत्न मिल गये देखकर राजकुँवर आनन्दित हुए, परन्तु अपने वचनके अनुसार 'किसके पाससे

निकले ' यह नहीं पूछा, बुद्धिसागरतकको भी ज्ञात नहीं था कि, चोर कौन है ?

यह तो केवल कालिदास और विद्यासागर ही जानते थे, फिर उन राजकुँवरोंको कुछ दिन रखकर अपने देश जानेकी आज्ञा दी ।

इस विकट न्यायको सुनकर भोजकी अत्यन्त कीर्ति बढ़ी ।

कला ३८.

(राज्यदान)

एक दिन जब संपूर्ण सभा भर गयी थी, तब एक विद्वान्‌ने सभाद्वारपर आकर कहा कि, हे द्वारपाल ! मैं महाराज भोजका दर्शन किया चाहता हूं । द्वारपालने कहा कि, महाराज ! जरा ठहरो मैं आज्ञा ले आता हूं । पश्चात् द्वारपालने जाकर कहा कि-" महाराजाधिराज ! बाहर कोई विद्वान् आये हैं, वह आपके दर्शनकी अभिलाषा करते हैं । "

यह सुनकर भोजने कहा कि, प्रतीहार ! क्या तुझे खबर नहीं कि, मेरी सभामें किसी विद्वान्‌के आनेकी मनाई नहीं है. फिर किस कारण तूने उनको बाहर खड़ा रखा ?

यह सुनकर प्रतीहारने उत्तर दिया कि–"महाराज ! इसमें मेरा अपराध हुआ, भविष्यमें ऐसा कभी न होगा।"

भोजने कहा-"ठीक है, अब भीतरको लाओ।"

प्रतीहार नमन करके गया और विद्वान्‌को लेकर भीतर आया। उसकी विद्वत्ता देखनेके लिये राजा चुप बैठा रहा।

उस विद्वान्‌ने भीतर आते ही यह श्लोक पढ़ा-

"राजन् दौवारिकादेव प्राप्तवानस्मि वारणम्।
मदवारणमिच्छामि त्वत्तोऽहं जगतीपते॥१॥"

अर्थात्-हे राजन्! मैं तुम्हारे द्वारपालसे ही वारण (वर्जना जानेसे) को तो प्राप्त हो गया था परन्तु अब तो मैं तुम्हारे पाससे मदोन्मत्त वारण (हाथी) लेनेकी इच्छा रखता हूँ, क्योंकि (वर्जना और हाथी) ये 'वारण' के दो अर्थ हैं।

यह श्लोक सुनकर भोज आनंदित हुआ, आप पूर्व-दिशाकी ओर मुख किये बैठा था. वह पूर्वदिशाकी ओरका राज्य उस ब्राह्मणको मनसे दे दिया। पश्चात् राजा दक्षिणकी ओर मुख करके बैठ गया।

यह देखकर वह ब्राह्मण आश्चर्ययुक्त हुआ, राजाके मनकी वह बात जान न सका, उसने राजाके मुखकी ओर जाकर दूसरा श्लोक कहा-

"अपूर्वेयं धनुर्विद्या भवता शिक्षिता कुतः।
मार्गणौघः समायाति गुणो याति दिगंतरम्१"

अर्थात्-यह अपूर्व धनुर्विद्या कि, जिससे (मार्गणौघ बाणोंका समूह) पास आता है और गुण (प्रत्यंचा डोरी) दूर जाता है सो तुमने कहाँसे सीखी ? क्योंकि धनुषके खैंचनेसे मार्गण (बाण) तो दूर जाता है और गुण (डोरी) आगे आती है । यहां ' मार्गणौघ ' और ' गुण ' इन दो शब्दोंके दो दो अर्थ हैं जैसे ' मार्गणौघ ' याचकसमूह और बाणसमूह । 'गुण' यशरूप और डोरी ।

यह सुनकर भोज अधिक आनंदित हुआ, उसको अपने मनसे दक्षिणदिशाका राज्य भी अर्पण कर दिया और आपने पश्चिम दिशाको मुख कर लिया, यह देखकर कवि उस ओर जाकर बोला-

" सर्वज्ञ इति लोकोऽयं भवन्तं भाषते मृषा ।
पदमेकं न जानासि वक्तुं नास्तीति याचके ॥"

अर्थात्-हे राजन् ! आपको ये लोग सर्वज्ञ कहते हैं वह असत्य कहते हैं, क्योंकि ' नहीं ' शब्द तुम याचकोंको कहना कब जानते हो अर्थात् नहीं जानते हो ।

यह सुनकर और भी आनंदित हुआ, पश्चिम दिशाका देश भी कविको दे दिया, और आप उत्तर दिशाकी ओर मुख करके बैठ गया, उस ओर जाकर भी वह बोला-

"सर्वदा सर्वदोऽसीति मिथ्या त्वं स्तूयसे जनैः ।
नारयो लेभिरे पृष्ठं न वक्षः परयोषितः ॥ १ ॥"

अर्थात्—कवि और पंडित आपका सर्वदा कीर्तन करते हैं कि "तुम सदा सब वस्तुओंको देते हो" उनका यह कथन असत्य है, क्योंकि आजतक तुम शत्रुओंको पीठ और परस्त्रियोंको वक्षस्थल नहीं देते (आप-युद्धमें पीठ नहीं दिखाते अर्थात् आगे बढ़ते हो और परस्त्री नहीं भोगते हो इससे आपका जितना कीर्तन किया जावे थोड़ा है)।

अपनी सम्पूर्ण पृथ्वी इस कविको दी हुई जानकर राजा सिंहासनसे खड़ा हो गया, परंतु वह कवि उनके मनका अभिप्राय नहीं समझनेसे फिर बोला—

"राजन् कनकधाराभिस्त्वयि सर्वत्र वर्षति ।
अभाग्यच्छत्रसंछन्ने मयि नायांति बिंदवः १"

अर्थात्—हे राजन्! तुम सम्पूर्ण स्थानोंमें सुवर्णकी वर्षा वर्षाते हो परन्तु मेरे ऊपर अभाग्यरूपी छत्र है उसके ऊपर थोड़ी बूँदें भी नहीं पड़तीं ।

राजा उसका उत्तर न देकर अन्तःपुरमें गया । इस प्रकार कुसमय अपने पास आये हुए राजाको देखकर रानी आश्चर्ययुक्त हुई । राजाने कहा—हे रानियो! मैंने अपना राज्य एक कविको दे दिया इस कारण इस देशको छोड़कर अन्य देशको चलें।

इस ओर कवि अपनेको राजाने कुछ नहीं दिया जान खेदित हुआ और सभासे बाहर जाने लगा, उस समय

बुद्धिसागर प्रधानने पूछा-" हे कविराज ! राजाने तुम्हे क्या दिया है। "

कविने उदास मुखसे उत्तर दिया कि-" राजाने मुझे कुछ भी नहीं दिया। "

बुद्धिसागरने कहा-" तुमने जो श्लोक राजाको सुनाये उन्हें मुझसे फिर कहो। "

कविने कहा-अब फिर श्लोक पढनेसे क्या ?

बुद्धिसागरने कहा-मुझे सुनाओ तो सही।

बुद्धिसागरके अत्यन्त कहनेसे कविने वे पांचों श्लोक उसको फिर सुना दिये, चतुर प्रधान समझ गया कि, राजाने इसको सम्पूर्ण राज्य देदिया है. पश्चात् ब्राह्मणसे कहा-"पंडितजी ! तुमको राजाने जो कुछ दिया है उसके मैं एक लक्ष टके देता हूँ, कहो बेंचते हो। "

कविने सोचा मुझे राजाने कुछ नहीं दिया और यह प्रधान एक लक्ष टके देता है इससे आनन्दित होकर कविने कहा-" प्रधानजी ! मुझे जो कुछ दिया है उसको तुम्हारे हाथ एक लक्ष टकोंमें बेंचा। "

यह सुनकर वृद्ध प्रधानने तुरन्त उस ब्राह्मणको कोशमेंसे लक्ष टके दिये। लक्ष टके लेकर आनन्दित हो कवि तो चला गया। पश्चात् प्रधान राजाके पास आया, उसको देश छोड़कर जानेकी तैयारी करता देखकर प्रधानने कहा-"महाराज ! कहां जानेकी तैयारी की ?"

राजा बोला-" प्रधानजी ! आज उस आये हुए पंडितको मैंने अपना राज्य देदिया इस कारण यह देश छोड़कर जानेकी मैं तैयारी कर रहा हूँ।"

प्रधानने कहा--" महाराज ! अब ऐसा करनेकी आवश्यकता नहीं, वह कवि एक लक्ष टके ले यह राज्य बेंच गया, उसको मैंने कोशमेंसे दे दिये हैं उस धनको लेकर कवि तो चला गया, इस कारण अब आपको यहांसे जानेकी आवश्यकता नहीं।"

बुद्धिसागरकी यह बुद्धि देखकर राजा अत्यंत ही आनंदित हुआ।

कला ३१.

(पुष्प-परीक्षा)

एक समय कौतुक देखनेके लिये भोजने अपने एक शिल्पकारको नकली पुष्पोंका हार बनानेकी आज्ञा दी, उसने हार ऐसा बनाया कि निश्चय पुष्पोंका ही ज्ञात होता था, नकलीको असली ही पहिचानते थे । जब यह नकली हार तैयार होकर आया तब भोजने उसके सदृश असली हार बनानेकी आज्ञा दी, दोनों हार एकसे ही बने, दूरसे कोई नहीं कह सकता था कि, इनमें एक नकली है, हाथमें लेनेसे ही मालूम होता था। पश्चात् सभाका समय होनेपर एक मनुष्यके हाथमें वे दोनों हार देकर खड़ा कर दिया। सभा भरनेके पश्चात् राजाने

कहा-" देखो ! ये दो हार हैं, इनमें एक नकली और एक असली पुष्पोंका है, अब बिना हाथ लगाये बताओ कि, इनमें कौनसा नकली है।"

राजाको क्या उत्तर दें? सब इस विचारमें हो गये। कुछ समयांतरमें कालिदासने कहा-" राजाधिराज ! भीतर अंधकार होनेसे मुझे हार नहीं दीखते. यदि, उस मनुष्यको बाहर खड़े होनेकी आज्ञा दें तब देखकर बता सकता हूँ।"

कालिदासकी चतुरता न समझकर राजाने बाहर खड़े होनेकी आज्ञा दी, उस मनुष्यके बाहर आनेपर उड़ती मक्खियें असली हारपर बैठ गयीं और नकली हारपर एक नहीं बैठी, यह देखकर कालिदासने कहा-" हे राजन् ! देखो जिस हारपर मक्खियां बैठीं हैं, वह हार असली है और जिसके ऊपर नहीं बैठीं वह नकली पुष्पोंका हार है।" कालिदासकी चतुरता देखकर सब सभा आनन्दित हो गयी।

कला ४०.

(कालिदासका अपमान)

किसी समय कुछ कार्यपर राजा भोजने कालिदासका अपमान किया था, अपना अपमान हुआ जानकर कालिदास अपने घर गया, राजाके मनमें भी उसकी ओरसे द्वेष था इससे उसको उसने न बुलाया. कालि-

दासने मनमें निश्चय किया कि, थोड़े दिन राजाके बुलानेकी बाट देखूँगा और जो वह नहीं बुलावेगा तो पश्चात् राजाका मुख न देखूँगा।

यह निश्चय कर थोड़े दिन उसने राजाके बुलानेकी बाट देखी परन्तु कोई बुलाने नहीं आया, इससे उसने गुप्त रहनेका विचार किया। अब तो राजाका मुख नहीं देखूँगा यह निश्चय कर अपनी वेश्याके यहां गया और उसने अपने मनकी सब बात कही कि—" मेरा विचार अब गुप्ततासे रहनेका है, जब किसी समय राजाको मेरी आवश्यकता होगी तब वह मुझे ढूंढेंगे, परन्तु मैं किसी प्रकार खबर नहीं करूँगा, जो अपने घर में रहूँगा तो राजा मुझे बुला लेगा परन्तु कहीं छिपकर रहूँगा तो कोई नहीं जानेगा। दिनको मैं वनमें किसी वेषसे फिरूँगा, परन्तु रात्रिके समय तेरे यहां आ जाया करूँगा, तू यह बात किसीसे नहीं कहना।"

वेश्याने ऐसा ही स्वीकार किया और कवि कालिदासको अपने घरमें रखा। दिनको वह वेष बदलकर वनको चला जाता था और रातको सोनेके लिये आ जाता था। इस प्रकार छः महीने बीत गये. कालिदासके विना राजा कुम्हलाने लगा, इससे कालिदासके घर खबर की तो मालूम हुआ कि, वे तो छः महीनेसे बाहर गये हैं। पहिले भी तीन बार ग्राममें ही छिप रहा था, इससे

यह सूझा कि, वह नगरमें ही होगा, उसने उसके स्थानों-पर बहुत ढुंढ़वाया, बहुत इनाम देना कहा परन्तु उसका पता नहीं लगा। अन्तमें राजाने ऐसी युक्ति की कि, एक श्लोकके पूर्वार्द्धके दो पाद बनाये और उसका उत्तरार्द्ध बनानेवालोंको इनाम देनेकी खबर कर दी, अपनी सभाके पंडितोंको सख्त आज्ञा दी कि, तुममेंसे इसका उत्तरार्द्ध कोई भी नहीं कहना ।

श्लोकपूर्वार्ध-" कमले कमलोत्पत्तिः श्रूयते न च दृश्यते ।

सम्पूर्ण नगरमें यह पूर्वार्द्ध प्रकाशित किया, जिस वेश्याके घरमें कालिदास था उसने विचार किया कि, यह श्लोक कालिदाससे पूर्ण कराऊं परन्तु उसको राजाके इनामकी बात कहूँगी तो तुरन्त समझ जायगा इस कारण अन्य किसी रीतिसे कहूं, कालिदासके आनेके समय उनका सत्कार करनेके लिये वेश्या तैयार हो बैठी थी. कालिदासके आनेपर कोई बात न कहकर बोली " हे पंडितराज ! "

"कमले कमलोत्पत्तिः श्रूयते न च दृश्यते ।"

अर्थात्-कमलके ऊपर कमल उत्पन्न हुआ हो ऐसा सुना भी नहीं और देखा भी नहीं ।

यह सुनकर कालिदासने उत्तर दिया-

"बाले तव मुखाम्भोजे दृष्टमिन्दीवरद्वयम् १"

अर्थात्–हे स्त्री ! तेरे मुखकमलपर नेत्ररूपी दो कमल दीखते हैं या नहीं ?

अपने श्लोकका उत्तरार्द्ध मिलनेपर आनन्दित हुई. दूसरे दिन कालिदास तो अपने नियमानुसार वनको चले गये, सभा होते ही वह वेश्या सभामें आयी और कहा–" महाराज ! आपके श्लोकका उत्तरार्द्ध मैं लायी हूँ " यह कहकर कालिदासका कहा हुआ उत्तरार्ध उसने पढ़ दिया ।

सुनते ही भोजको निश्चय हुआ कि, ये शब्द इस वेश्याके नहीं हैं, परन्तु किसी पुरुषके हैं और निश्चय तो कालिदासके ही हैं । पश्चात् राजाने वेश्यासे पूछा– " यह श्लोक तुझे किसीने पूर्ण कर दिया है । "

वेश्याने उत्तर दिया–" महाराज ! यह मैंने आप ही किया है " राजा किंचित् क्रोधित होकर बोला–" नहीं ! यह श्लोक तेरा किया हुआ नहीं है, किसी पुरुषने तुझे बना दिया है । "

वेश्या कुछ घबराकर बोली–" नहीं महाराज ! यह मेरा ही किया है । "

राजाने कहा–तू फिर भी असत्य बोलती है, तूने मेरा पूर्वार्द्ध किसी पुरुषसे पूछा है और उसने तुझे उत्तर दिया है, यदि तेरा किया होता तो ' बाले ' ऐसा तू

अपनेको क्यों कहती, किसी पुरुषने तुझे उत्तर दिया है और कहनेवाला भी कालिदास ही है, कहो सत्य है ?

यह सुनकर वेश्या घबरा गयी, परन्तु कुछ धैर्य करके बोली-'महाराज! कालिदास कहां है? यह मैं नहीं जानती।'

राजाने अधिक क्रोधसे कहा-" जो तू सत्य नहीं कहेगी तो मैं तुझे शिक्षा दूंगा और जो सत्य कहेगी तो इनाम दूंगा।"

'अब सत्य बात कहे विना ठीक नहीं' यह विचार-कर वेश्या बोली-" एक प्रहर रात्रि होनेपर कालिदास मेरे घर आते हैं उस समय आप पधारें तो उनके साथ आपका मिलना होगा, परन्तु यह खबर मैंने आपको दी है, जो वे यह समझ जायँगे तो फिर मेरे यहाँ नहीं आवेंगे।"

राजाने कहा-" तू इसकी चिंता मत करे "

पश्चात् उसको इनाम देकर चलता किया. रात्रिका समय होनेपर राजा भोज उसके घर गया और बाहरसे आवाज दी, इतनेमें कालिदासने भोजका शब्द पहिचान लिया और बोला-" अरे! मैं कैसा मूर्ख हूँ जो वेश्याके ऊपर विश्वास किये बैठा हूँ, खैर जो भवितव्य था सो हुआ परन्तु मेरा मस्तक तो इसको मत बताना।"

यह सुनकर वेश्या बोली-महाराज! इसमें मेरा कुछ अपराध नहीं, राजाने स्वयं ही आपको ढूँढ़ा है क्योंकि वे आपको चाहते हैं, अब उनसे क्यों छिपे हो।

कालिदासने कहा-मेरे मनका विचार फिर नहीं सकता, मैं राजाको मुख न दिखाऊँगा, तू द्वार न खोलेगी तो राजा तोड़कर भीतर आजायगा, इस कारण मेरा मस्तक तू काट दे. वेश्या स्त्रीजाति थी, इससे उसको साहस नहीं हुआ. फिर कालिदास अपने हाथमें खड्ग लेकर काटता ही था कि इतनेमें उस वेश्याने द्वार खोल दिया, राजा बाहर खड़ा खड़ा ही सब बात सुन रहा था उसने मनमें विचारा कि, अहो ! यह कैसा वचनपालक है कि, यदि सम्पूर्ण पृथ्वीमें भी देखूंगा तो भी ऐसा मनुष्य नहीं मिलेगा, मैं ही मूर्ख हूँ, कि बारबार इसका अपमान करता हूं, अपने मनकी बात मैं किससे कहूँगा ?जब यह नहीं मानेगा तो मैं जीकर क्या करूंगा ?

यह कह राजाने भी खड्ग निकाल लिया और भीतर आया जब देखा कि, अपना मस्तक काटे ही डालता है तब झट कालिदासका हाथ पकड़लिया और हाथ जोड़ कर अपना अपराध क्षमा कराया. अब परस्परमें इतनी प्रीति जानकर अश्रुपात होने लगा, वहां भोजने कालिदासको गले लगाकर बहुत समयतक पश्चात्ताप किया और फिर बड़े समारोहके साथ अपने साथ कालिदासको ले आया।

कला ४१.

(राजशेखरकविका चरित्र)

एक समय राजा भोज धारानगरीसे हाथीपर सवार

होकर कुछ मनुष्योंके साथ वनमें क्रीड़ा करनेके लिये जाता था, उसी समय मार्गमें एक अत्यन्त दरिद्री पुरुष भूमिपर पड़े हुए अन्नके दानोंको बीन रहा था, राजाने उस दरिद्री मनुष्यको देखकर निम्न लिखित आधा श्लोक कहा-

श्लोकपूर्वार्ध-" नियउदरपूरनम्मिमथ असमत्था किंपि तेहिं जाएहिं । "

अर्थात्-जो अपने उदर पोषण करनेमें भी असमर्थ है ऐसे पुरुषको पृथ्वीपर उत्पन्न होना या नहीं होना बराबर है अर्थात् ऐसे पुरुष उत्पन्न हुए तो क्या ? और न हुए तो क्या ?

इस प्रकार राजा भोजके श्लोकका पूर्वार्ध सुनकर उस मनुष्यने उसका उत्तरार्द्ध नीचे लिखे अनुसार कहा-

श्लोक उत्तरार्ध-"सुसमत्था विहुनपरोपारिणो-तेहिं विनाहिं किंपि ॥ १ ॥

अर्थात्-जो पुरुष समर्थ होकर भी अन्य पुरुषोंका उपकार नहीं करते उनका भी पृथ्वीपर उत्पन्न होना अथवा नहीं होना बराबर है, अर्थात् ऐसे पुरुष उत्पन्न हुए तो क्या ? और न उत्पन्न हुए तो क्या ?

पश्चात् ब्राह्मणका इस प्रकार सम्भाषण सुनकर राजा भोज फिर कहने लगा-

श्लोक पूर्वार्द्ध–" परतत्थणावत्तंमाजणणि-
जणेसुएरिसंयुत्तम् ॥ "

अर्थात्–जो अन्य मनुष्योंसे भिक्षा मांगकर अपना उदर पोषण करते हैं उन पुरुषोंको हे जगत्को उत्पन्न करनेवाली योगमाया ! तू उत्पन्न मत कर ।

इस प्रकार राजाका आधा श्लोक सुनकर उसके प्रत्युत्तरमें ब्राह्मण फिर कहने लगा–

श्लोकोत्तरार्द्ध–" मापुहविमाधरिज्जसु,-
पत्थण भङ्गोकओजेहिं ॥ १ ॥"

अर्थात्–हे धरती माता ! जिसने याचककी प्रार्थनाको भंग किया है ऐसे पुरुषको तू किस प्रकार धारण कर रही है ? उस प्रार्थनाके भंग करनेवाले पुरुषके भारसे तू रसातलमें क्यों नहीं चली जाती, तू किस प्रकार लोकको धारण कर रही है ?

इस प्रकार ब्राह्मणके वचन सुनकर राजाने उससे पूछा कि, तुम इतने बडे विद्वान् होकर भी ऐसी दुर्दशामें क्यों पडे हो ? तब ब्राह्मण कहने लगा कि, हे राजेंद्र ! तुम्हारा राजद्वार सदैव अनेक प्रकारके पंडितरूपी मेघोंसे आच्छादित रहता है इस कारण वहां प्रवेश करनेके लिये अन्य कोई मार्ग न मिलनेसे नगरके प्रधान पुरुषोंको इस मार्गसे जाता देखकर यहां आकर बैठा हूँ ।

इस प्रपंचमें आपके दर्शनोंकी अभिलाषा करनेवाला मैं राजशेखर नामका कवि हूँ ।

कविके इस प्रकार वचन सुनकर राजा तत्काल हाथी-परसे उतर पड़ा और वह अपना हाथी कविराजको समर्पण कर दिया और बहुतसे आभूषण भी अर्पण किये ।

राजशेखर मनमें विचार करने लगा कि–गजदान ग्रहण करनेमें महापाप है, किन्तु आपद्धर्ममें राजा भोजने हाथी दिया इसलिये तो ठीक है, परन्तु इस हाथीको बांधूँ कहां और इसको सदैव खिलाऊँ कहांसे ? ऐसा मनमें विचार करता हुआ राजासे यह निम्न लिखित श्लोक कहा कि–हे भूपेन्द्र !

"निर्वाता न कुटी न चाग्निशकटी नापि द्वितीया पटी वृत्तिर्नारभटी न तुन्दिलपुटी भूमौ च घृष्टा कटी । तुष्टिर्नैकघटी प्रिया न वधुटी तेनाप्यहं संकटी श्रीमद्भोज तव प्रसादकरटी भङ्क्त्वा ममापत्तटीम् ॥ १ ॥"

अर्थात्–मेरी एक छोटीसी झोपडी है और उसमें चारों ओरसे अत्यन्त पवन आती है तथा तापनेके लिये शिगडीके लायक फूस आदि भी नहीं है और पहरने ओढ़ने तथा हर एक काममें लानेके लिये केवल एक ही वस्त्र है इसके सिवाय और कोई वस्त्र नहीं तथा पढ़ने और पढ़ानेके सिवाय मेरी कोई दूसरी वृत्ति भी नहीं है और जाडोंमें ओढ़नेके लिये मेरे पास गुदडीतक भी नहीं है, एवं पृथ्वीपर लोट लोटकर तथा कमरको घिस घिसकर

रात्रीको व्यतीत करता हूँ. अन्न पेटभर न मिलनेके कारण एक घड़ीका भी संतोष नहीं होता और निद्रा भी पूरी नहीं आती और इस दरिद्रताके कारण कुलीन स्त्री भी नहीं मिली किन्तु कुलक्षणी स्त्री मिलनेके कारण उसके निरंतर वचनरूपी बाणोंसे मेरा हृदय बींधा रहता है, इस कारण हे धारापति ! आप प्रसन्न होकर अपना दिया हुआ यह गजेन्द्र मुझसे पीछा लेकर मेरी इस आपत्तिरूपी नदीतटको अपने दानहस्तीसे विदारण करो । इस प्रकार इस कविके अर्थयुक्त इस काव्यके ग्यारह अनुप्रासके शब्दोंको सुनकर राजा भोजने इसको ग्यारह हजार मोहरें देकर संतुष्ट किया ।

कला ४२.

(संकर्षणब्राह्मणका चरित्र)

प्रतापगढ़ नामके नगरमें संकर्षण नामवाला एक अत्यन्त दरिद्री ब्राह्मण रहता था, उसकी स्त्रीका नाम कमलादेवी था, वह अत्यन्त साध्वी और पतिव्रता थी । एक दिन यह कमलादेवी अपने पतिसे प्रार्थना करने लगी कि, हे प्राणवल्लभ ! आप विद्वान् होनेपर भी इस दरिद्रताको भोगते हो, केवल भाग्यके ऊपर रहकर निरुद्यमी बैठे रहना ठीक नहीं है, थोड़ा बहुत उद्यम अवश्य करना चाहिये क्योंकि विद्वानोंका वचन है कि-

"उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी-
दैवं प्रधानमिति कापुरुषा वदन्ति ।

दैवं विहाय कुरु पौरुषमात्मशक्त्या
यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः॥ १॥"

अर्थात् उद्योग करनेवाला मनुष्य पुरुषोंमें सिंहके समान है, उद्योगी पुरुषोंको लक्ष्मी प्राप्त होती है, निरुद्योगी (कायर) पुरुष प्रारब्धको प्रधान मानते हैं; इस कारण दैवको छोड़कर उद्योग करना उचित है और जो (उद्योग) करनेसे भी फलकी प्राप्ति न हो तो फिर अपना इसमें क्या दोष है ?।

फिर "उद्योगे नास्ति दारिद्र्यम्" उद्योग करनेसे दरिद्रता नष्ट होती है, इस कारण उद्योगके विना खाली बैठे रहना उचित नहीं है तथा आप तो विद्वान् भी हैं, इस कारण आपकी सर्वत्र मान्यता होगी और आपकी विद्याकी प्रशंसाको सिवाय महान् पुरुषके अन्य कोई नहीं जान सकता क्योंकि कहा भी है-

"अनर्घ्यमपि माणिक्यं हेमाश्रयमपेक्षते।
अनाश्रया न शोभन्ते पंडिता वनिता लताः।"

अर्थात् माणिक्य (पद्मराग) अत्यन्त उत्कृष्ट है, किन्तु सुवर्णके आश्रयके विना शोभाको प्राप्त नहीं होता. इसी प्रकार पंडित, स्त्री और लता यह आश्रयके विना शोभाको प्राप्त नहीं होते और न वृद्धिको ही प्राप्त होते हैं।

आप विद्वान् होनेपर भी बड़े मनुष्योंका आश्रय

नहीं करते इसलिये तुम्हारी सब विद्या निष्फल होती जाती है, इस कारण आपसे विनती करती हूं कि, यहांसे थोड़ी दूर धारानगरीमें विक्रमवंशी सिन्धुल राजाका पुत्र महाप्रतापी राजा भोज राज्य करता है, वह गौ ब्राह्मण प्रतिपालक और विद्वानोंको आश्रय देता है, इस कारण उसके पास जाकर आशीर्वाद देकर याचना करो । हे स्वामिन्! यह छोटे छोटे बालक दूधके लिये तड़फते हैं और अपनेको भी बिना अन्नके तीन दिन उपवास हो जाते हैं सो इसलिये यह क्या थोड़ा दुःख है ? इस कारण राजाके पाससे एक दो गाय या भैंस मांग लाओ तो ठीक है । इस प्रकार स्त्रीके वचनोंको सुनकर संकर्षण ब्राह्मण भोजराजाके दर्शन करनेके लिये प्रतापगढ़से चला. फिर मनमें विचार करने लगा कि, राजाको भेंट करनेके लिये कोई वस्तु हाथमें अवश्य लेनी उचित है, कहा भी है कि—

"रिक्तपाणिर्न पश्येत राजानं देवतां गुरुम् ॥"

अर्थात्—राजा, देवता और गुरु इनके निकट खाली हाथ कदापि नहीं जाना चाहिये ।

इस कारण एक श्रीफल (बेल) हाथमें लेकर धारा नगरीमें प्रवेश किया. संकर्षणने मनमें विचारा—भोज शिवभक्त हैं. उसको जो प्रिय लगे ऐसा एक उत्तम श्लोक बनाकर प्रसन्न करूं ऐसी युक्ति विचारकर राजदर-

बारमें गया. वहां जाकर कालिदास आदि चौदहसौ पंडितोंका समूह देखकर संकर्षण कुछ घबड़ाया, किन्तु फिर साहस करके राजाके सम्मुख जाकर वह श्रीफल राजाकी भेंट करके राजाको आशीर्वाद दिया, यह ब्राह्मण पहिले कभी राजाके निकट नहीं गया था, इसलिये राजाने इससे पूछा कि-

राजाका प्रश्न-' कुत आगम्यते ब्रह्मन् ' हे ब्राह्मण! आपका आगमन कहांसे हुआ?

ब्राह्मणका उत्तर-'कैलासादागतोऽस्म्यहम्' मैं कैलाससे आया हूँ. ब्राह्मणका यह वचन सुनकर राजा शिवभक्त तो था ही इस कारण ब्राह्मणको शंकरके आश्रमसे आया जानकर अत्यन्त आनंदित हुआ और भक्तिवश उसके कहनेपर विश्वास करके राजाने पूछा-

राजाका प्रश्न-'शिवस्य चरणौ स्वास्ति' शंकरके कुशल कल्याण तो है?

ब्राह्मणका उत्तर-'किं पृच्छसि शिवो मृतः' हे राजन्! इस विषयमें क्या तू पूछता है, तुझे आजतक भी खबर नहीं? अजी शंकर तो कैलासवासी होगये अर्थात् मृत्युको प्राप्त हो गये. ब्राह्मणके ऐसे वचन सुनकर राजा अत्यंत आश्चर्यको प्राप्त हुआ और कहने लगा कि, हे द्विजोत्तम! यह कैसे हो सकता है? क्योंकि जो मृत्युकी भी मृत्यु करनेवाला और कालका भी काल ऐसा शंकर

जिसको सम्पूर्ण संसार अजन्मा कहकर निरन्तर स्मरण करता है, उसकी मृत्यु किस प्रकार हो सकती है? और उसके परिवार आदिकी क्या अवस्था हुई है सो कृपा करके कहिये।

तब ब्राह्मण कहने लगा कि, हे पृथ्वीपति! आपका चित्त अत्यन्त व्याकुल देखकर मैं ठीक सम्पूर्ण व्यवस्था कहता हूँ, वह श्रवण करो-

"अर्धं दानववैरिणा गिरिजयाप्यर्धं हरस्याहृतं
देवेत्थं भुवनत्रये स्मरहराभावे समुन्मीलति।
गंगा सागरमम्बरं शशिकला शेषश्च पृथ्वीतलं
सर्वज्ञत्वमधीश्वरत्वमगमत्त्वां मांच भिक्षाटनम्॥

अर्थात्-महादेवका आधा अंग तो विष्णु भगवान्‌ने हर लिया, शेष बचा हुआ आधा अंग पार्वतीने हर लिया इस प्रकार उसका सम्पूर्ण शरीर विभक्त हो गया, अब उसके परिवारकी अवस्था, कहता हूं वह श्रवण करो- मस्तकपर जो गंगा थी वह समुद्रमें चली गयी और शशिकला आकाशमें चन्द्रमाके साथ मिल गयी तथा सर्पादिक धरतीके तले अर्थात् पातालमें चले गये, उसकी सर्वज्ञता और अधीश्वरता तुम्हारेमें चली आयी और बाकी बचा जो एक भिक्षाटन वह मेरे पास आ गया है।

इस प्रकार संकर्षणकी चतुरता देखकर राजा भोज अत्यंत हर्षित हुआ और ब्राह्मणसे कहने लगा कि,

हे द्विजराज ! तेरी क्या अभिलाषा है, वह मुझसे मांग मैं तुझसे अत्यन्त प्रसन्न हूँ ।

तब संकर्षण कहने लगा कि, हे पृथ्वीभूषण ! मैं दरिद्र अवस्थासे अत्यंत दुःखी हूँ मुझे तथा मेरे कुटुम्बके लोगोंको अन्नतक भी नहीं मिलता फिर घरमें छोटे छोटे कई बालक हैं उनकी माताको पेटभर भोजन न मिलनेके कारण उनको दूधतक भी नहीं मिलता। इस कारण वह दिन रात रोते रहते हैं अतएव उनके रक्षार्थ एक गाय या भैंस मिलनेकी आज्ञा होनी चाहिये ।

यह सुनकर राजाने तत्काल मन्त्रीसे कहा कि, इस ब्राह्मणको एक उत्तम भैंस मँगाकर अभी दे दो इस प्रकार मन्त्रीने राजाकी आज्ञाको सुनकर तत्काल ग्वालियोंसे एक उत्तम भैंस मँगाकर उसको प्रदान की, किंतु अधिकारियोंने बीचमें धूर्तता करके उसको ब्यायी हुई नहीं दी किन्तु वन्ध्या तथा ऊपरसे देखनेमें हृष्ट पुष्ट और वृद्धा ऐसी भैंस लाकर इसको दी परंतु उन अधिकारियोंकी धूर्तताको यह तत्काल समझ गया इस कारण उस भैंसके समीप जाकर उसके कानके निकट अपना मुख करके पश्चात् उसका मुख अपने कानके निकट करके चला आया, राजाने यह देखकर आश्चर्ययुक्त होकर ब्राह्मणसे कहा—हे ब्रह्मदेव ! यह तुमने क्या किया वह मुझे समझाओ.

तब ब्राह्मण कहने लगा कि, हे भूपेंद्र ! इस भैंसके

वत्स (बच्चा) या पाड़ा नहीं, विना दूधकी है, केवल-मात्र इसके स्तन (थन) ही देखनेमें आते हैं, ऐसा जान-कर मैंने उससे पूछा—तू गर्भवती है या नहीं ? तब उसने मेरे कानमें कहा, हे ब्राह्मण !—

" भर्ता मे महिषासुरः कृतयुगे देव्या भवान्या हतस्तस्मात्तद्दिनतो भवामि विधवा वैधव्य-धर्मा ह्यहम् । दन्ता मे गलिताः कुचा विग-लिता भग्नं विषाणद्वयं वृद्धायां मयि गर्भ-सम्भवविधिं पृच्छन्न किं लज्जसे ॥ १ ॥"

अर्थात्—मेरे पति महिषासुरको कृतयुगमें देवीने मार डाला, इस कारण मैं उस दिनसे विधवापन भोगती हूँ. मैं विधवा होकर आजतक विधवाधर्मको पालती हूँ. मैंने कदापि जारकर्म नहीं किया. अब मेरे दांत गिर पड़े और स्तन मेरे शिथिल होगये और दोनों सींग भी टूट गये इस प्रकार मैं वृद्धा होगयी ऐसी अवस्थामें मुझे देखकर भी " तू सगर्भा है ?" ऐसा प्रश्न करता है क्या तुझे लज्जा नहीं आती ? इस प्रकार उसने मेरे कानमें कहा—ब्राह्मणका चातुर्य देखकर राजाको अत्यंत आनंद हुआ. पश्चात् उन अधिकारियोंको अत्यंत धिक्कार देकर एक बहुत दूध देनेवाली हृष्ट पुष्ट वत्सी (बच्ची या पाड़ी) समेत थोड़ी उमरकी और बहुत सौम्य ऐसी भैंस मंगाकर ब्राह्मणको दी और उसको

दरिद्र दूर करनेके लिये उसको दश हजार रुपये और अनेक प्रकारके वस्त्र आभूषण देकर उसको आदरपूर्वक प्रतापगढ़की ओर बिदा किया। संकर्षणने अपने घर जाकर अपनी परम पवित्र और साध्वी स्त्री कमलादेवीसे पूर्वोक्त सब कथा कही, उसको सुनकर कमलादेवी अत्यन्त प्रसन्न हुई फिर संकर्षण अपने परिवार समेत आनन्दके साथ काल व्यतीत करने लगा।

कला ४३.

(चार कुमारी)

धाराधिपति राजा भोजकी सभामें बडे बडे धुरंधर विद्वान् सम्पूर्ण शास्त्रोंमें दक्ष सभाजित अत्यन्त चतुर ऐसे चौदह सौ पंडित थे, इन सब पंडितोंका मासिक वेतन दरबारसे नियत था और बाहरसे आये हुए विद्वानोंके साथ शास्त्रार्थ करके सत्यतापूर्वक विजय करना ही इनका मुख्य कार्य था। इन सब कवियोंमें श्रेष्ठ और सर्वमें अग्रणी महाकवि कालिदास गिने जाते थे।

एक समय ऐसा हुआ कि, दंतावती नगरीके सद्गृहस्थोंकी समानवयसवाली चार कन्या बाल्यावस्थासे वाराणसी (काशी) नगरी में रहकर अनेक शास्त्रोंका अभ्यास करके सर्व विद्याओंमें निपुण हुई। यह चारों कन्या भिन्न भिन्न जातिकी थीं परन्तु इनके रूप, विद्या और अवस्थाकी ओर ध्यान करके देखा जाय, तो चारों

समान दीख पड़ती थीं। जब उनके तरुण अवस्थाके अंकुर प्रगट होने लगे तब उन्होंने ऐसा विचार किया कि, हम मूर्ख पुरुषके साथ तो विवाह करेंगी नहीं, क्योंकि भिन्न भिन्न स्वभाववालोंके साथ विवाह करनेमें परस्पर प्रीति टूट जावेगी और अवस्था व्यतीत करनेमें विशेष दुःख होगा। इस प्रकार मनमें विचार करके अपना कार्य सफल करनेके लिये पंडितोंके साथ वाद विवाद करके उनको जीतकर प्रतिष्ठा प्राप्त करें, इस कारण अनेक देशदेशान्तरोंमें भ्रमण करके अनेक प्रसिद्ध राजाओंकी सभाओंमें जाकर बड़े बड़े वादियोंके मदको दलन करती हुई और राजाओंसे नानाप्रकारके वस्त्राभूषण और अधिक धन प्राप्त करती हुई इस प्रकार भ्रमण करती करती धारानगरीमें पहुँचीं और वहां जाकर एक उत्तम स्थानको भाडेपर लेकर उसमें निवास किया। पश्चात् भोजन पानसे निवृत्त होकर विश्राम करते समय चारों मनमें विचार करने लगीं कि, राजा भोजकी सभामें चौदह सौ पंडित हैं और वह संपूर्ण देशदेशान्तरोंमें अत्यन्त प्रतिष्ठा प्राप्त किये हुए हैं, इस कारण उनको शास्त्रार्थसे जीतना अत्यन्त कठिन है, इस प्रकार उन्होंने बहुत समयतक सोचनेपर एक युक्ति निकाली, उस युक्तिको विचारकर सभामें आकर उपस्थित हुईं। इन चारोंके रूप, लावण्य, गुण और चातुर्यको अवलोकन करके राजा समेत सम्पूर्ण सभा मुग्धवत्

हो गयी, क्योंकि पहिले कभी ऐसी कन्या स्वप्नमें भी नहीं देखी थीं । राजा भोजने इन चारों कन्याओंको अत्यन्त सत्कारपूर्वक उचित आसनपर बिठलाया। पश्चात् उनमें जो एक अग्रणी थी वह उठकर कहने लगी कि, हे भूपेन्द्र ! हम चारों कुमारिका समानरूपवाली होनेपर भी एक जातिकी नहीं हैं अर्थात् हम चारोंकी जाति भिन्न भिन्न है हम चारों समानवयसवाली हैं और हम चारोंमें इस प्रकारकी प्रीति है कि, सगी बहिनोंमें भी नहीं होती। हमने देशदेशान्तरोंमें पर्य्यटन करके अनेक विद्वानोंको परास्त करके राजाओंसे चिह्नके लिये लेख प्राप्त किये हैं, यह ताम्रपत्रके लेख हमारे पास विद्यमान हैं तथा अतुल द्रव्य हमारे साथ वाहनोंपर लदा हुआ है। जगत्में आपकी निर्मल कीर्तिको सुनकर हम आपकी सभामें आयी हैं सभाके भूषणरूप जो चौदह सौ पंडित हैं जो कि, वर्षोंसे बैठे हुए वेतन पाते हैं उनके साथ हम साधारण रीतिसे वादविवाद करें, बस ! यही हमारी प्रार्थना है ।

वाद करनेसे पहिले हमारा यह प्रश्न है कि, हम चारों कौन कौन जातिकी हैं ? इसका उत्तर ठीक ठीक जो पंडित देगा हम उसीके साथ वादविवाद करेंगी और अन्य पंडितोंसे हमारा कुछ प्रयोजन नहीं ।

इस प्रकार उन कन्याओंका सम्भाषण सुनकर राजाने

चौदह सौ पंडितोंकी सभा की और उन कन्याओंकी कही हुई सारी व्यवस्था कह सुनायी।

समस्त पंडित कन्याओंका अपूर्व रूप, समानवय, चतुरता, विलक्षण विद्वत्ता, किशोर अवस्था और अलौकिक धैर्य देखकर अत्यन्त आश्चर्यको प्राप्त हुये. राजा भोजने सम्पूर्ण पंडितोंको आज्ञा दी कि, तीनदिनके भीतर चौदह सौ पंडितोंमेंसे जो कोई भी पंडित इन कुमारियोंकी जातिकी परीक्षा नहीं कर सकेगा तो तुम्हारे पाससे सब धन माल छीनकर देशसे निकाल दिये जाओगे। इस प्रकार आज्ञा करके सभा विसर्जन की, तत्पश्चात् उन चारों कुमारियोंको एक उत्तम स्थानमें ठहराया और उनके भोजनादिकका उत्तम प्रबन्ध कर दिया. पंडित अपने अपने मनमें अनेक प्रकारके विचार करते हुए डरते डरते अपने अपने घरोंको गये। रात्रि होनेपर सब पंडित विचारसागरमें गोते खाने लगे, परन्तु कन्याओंकी जातिका किसीको भी पता नहीं लग सका। रात्रिभर इसी शोचमें पड़े हुए चिन्ता करते रहे, कोई भी उपाय उनकी जातिके प्रगट होनेका समझमें नहीं आया इस प्रकार विचार करते करते दो दिन योंही बीते तीसरा दिन आगया। पंडितलोग मनमें चिन्ता करने लगे कि, आज राजा अवश्य हमारा सर्वस्व लूटकर हमें देशसे निकाल देगा, इस प्रकार अत्यन्त भयभीत हुए।

और वह चारों कन्या आनन्दपूर्वक अपने दिन

व्यतीत करती थीं, इस प्रकार उनको दो दिन बीत गये तब उन चारोंमेंकी एक कन्या बोली–हे बहिनों ! अब नियत समयके केवल आठ प्रहर शेष रहे हैं इतने समयमें जो किसीसे भी अपनी जातिकी परीक्षा नहीं हो सकेगी तो अवश्य कल प्रातःकाल भोजराज समस्त पंडितोंको गर्दभोंपर आरोहण कराकर निःसंदेह देशसे निकाल देगा।

दो दिन बीत गये और तीसरे दिनका भी प्रातःकाल होगया उस समय कवि कालिदासके चित्तमें अत्यन्त चिंता उत्पन्न हुई कि, मैंने हजारों पंडितोंको जीतकर भोजराजासे अनेक बार पारितोषिक पाया है और यह एक किशोर अवस्थाकी चार कुमारिका अर्थात् अबलाओंने आकर चौदह सौ पंडितोंको लज्जित किया, बड़ी लज्जाकी बात है कि, मैं इन चौदह सौ पंडितोंका शिरोमणि होकर भी इनको उत्तर नहीं दूँ। इस कारण अवश्य इनकी जातिकी परीक्षाका अभी उपाय करूंगा, ऐसा निश्चय करके स्नान सन्ध्यादि नित्यकर्मोंसे निवृत्त होकर अपनी इष्टदेवी जो काली उसके मंदिरकी ओर चला और वहां मंदिरमें बैठकर एकाग्र चित्तसे कालीका ध्यान किया. बहुत देरतक ध्यान करनेसे दर्शन दिये और कहा–"वरं ब्रूहि वरं ब्रूहि"

अर्थात्–'वर मांग वर मांग' ऐसा उच्चारण किया।

तब कालिदासने उन चारों कन्याओंकी जाति जान-

नेकी और वादमें जीतनेकी व्यवस्था कह सुनायी, तब देवीने कहा-कि तेरी कामना थोड़े ही परिश्रमसे सफल हो जावेगी. इस प्रकार वरदान देकर देवी अन्तर्धान हो गयी और कालिदास अपने घरको चला आया. फिर भोजनके पश्चात् सन्ध्याके समय सेंध लगाकर चोरके समान कालिदास उन कुमारियोंके मन्दिरमें जाकर एकांत स्थानमें छिप रहा और ऐसा मनमें विचार कर-लिया कि, इनके वार्तालाप और आचरणसे इनकी जातिकी परीक्षा ज्ञात हो जायगी. परन्तु संपूर्ण रात्रि व्यतीत हो गयी और अरुणोदयका समय आने लगा किंतु किसीका सम्भाषण भी सुननेमें नहीं आया इससे अत्यन्त चिंता उत्पन्न हो गयी, इतनेमें ही एक कन्याकी आँख खुली और खिड़कीकी ओर दृष्टि करके शिख-रिणीछन्दका अधोलिखित चरण कहा-

श्लोक च० १-" अभूत्प्राची पिङ्गा रस-
पतिरिव प्राश्य कनकम् ।"

अर्थात्-सूर्योदयके होनेसे पूर्व दिशा ऐसी पीली पड़ गयी कि, जिस प्रकार सुवर्णके योगसे पारा पीला हो जाता है।

इस प्रकार उस कन्याका संभाषण सुनकर कालि-दासको तत्काल निश्चय हो गया कि, यह कन्या सुना-रकी पुत्री है।

श्लोकका पहिला चरण सुनकर दूसरी कन्या निद्रासे सचेत हुई और उसने भी खिड़कीमेंसे देखकर दूसरा निम्नलिखित चरण कहा-

श्लोक च० २-" गतच्छायश्चन्द्रो बुधजन इव ग्राम्यसदसि।"

अर्थात्-चन्द्रमाकी कांति ऐसे मंद होगयी जिस प्रकार पंडित पुरुष मूर्खोंकी सभामें जाकर ग्लानिको प्राप्त हो जाता है।

इस प्रकार दूसरा पद सुनकर कालिदास समझ गया कि, निश्चय यह ब्राह्मणकी पुत्री है।

इस शब्दको सुनकर तीसरी कन्या जागृत होगयी और उसने भी तीसरा चरण कहा-

श्लोक च० ३-" क्षणात्क्षीणास्तारा नृपतय इवानुद्यमपराः।"

अर्थात्-क्षणभरमें देखते देखते आकाशमें तारोंकी ज्योति ऐसे मंद पड़ गयी कि, जिस प्रकार निरुद्यमी राजा क्षीणताको प्राप्त हो जाता है।

इस वचनको सुनतेही कवि कालिदास निश्चय समझ गया कि, यह अवश्य क्षत्रियकी पुत्री है अर्थात् राजकुमारी है।

उसके पश्चात् चौथी कन्या जागृत होगयी और

उसने भी खिड़कीकी ओर दृष्टि करके चौथा चरण इस प्रकार कहा-

श्लोक च० ४-" न राजन्ते दीपा द्रविण-
रहितानामिव गृहाः । "

अर्थात्--दीपकका तेज ऐसे निस्तेज हो गया कि, जिस प्रकार द्रव्यरहित पुरुषका घर शोभाको प्राप्त नहीं होता ।

इस प्रकार चौथा चरण सुनते ही कालिदासको निश्चय हुआ कि, यह अवश्य वणिक्पुत्री है ।

इस श्लोकको श्रवण करके कालिदास किसीके देखनेमें न आवे ऐसी युक्तिसे इस मंदिरसे निकलकर गुप्त रीतिसे चल दिया ।

वे कन्या अपने नित्यकर्मोंसे निवृत्त होकर भोजनादिके पश्चात् दरबारमें जाकर उपस्थित हुई. राजाने सब पंडितोंको बुलाया और उनको देखा तो सबके मुखकमल मुरझायेसे दीखे और कन्याओंने पंडितोंको अत्यन्त उदास देखकर निश्चय कर लिया कि, अवश्य यह निरुत्तर हैं. इतनेमें कवि कालिदास भी सभामें आ पहुँचे । इसके उपरान्त राजाने पंडितोंसे कहा कि, इन कन्याओंकी क्या क्या जाति है ? इस प्रश्नको सुनते ही कालिदासने तत्काल अधोलिखित श्लोक कहकर सबकी जाति कह सुनायी ।

"अभूत्प्राची पिङ्गा रसपतिरिव प्राश्य कनकं
गतच्छायश्चन्द्रो बुधजन इव ग्राम्यसदसि ।
क्षणात्क्षीणास्तारा नृपतय इवानुद्यमपरा
न राजन्ते दीपा द्रविणरहितानामिव गृहाः १"

अर्थात्–सूर्योदयके होनेसे पूर्वदिशा ऐसी पीली पड़ गयी जिस प्रकार सुवर्णके समागमसे पारा पीला पड़ जाता है और चन्द्रमाकी कांति ऐसे निस्तेज हो गयी कि, जिस प्रकार मूर्खोंकी सभामें पंडित ग्लानिको प्राप्त होता है. फिर देखते देखते आकाशके सम्पूर्ण तारे ऐसे अस्त हो गये, जिस प्रकार निरुद्यमी राजा क्षीणताको प्राप्त हो जाता है. तथा दीपकका तेज अर्थात् प्रकाश ऐसे मंद होगया, जिस प्रकार द्रव्यरहित पुरुषका घर विना द्रव्यके शोभाको प्राप्त नहीं होता ।

इस प्रकार कालिदास पण्डितने हजारों पण्डितोंके और अनेक सभासदगणोंके मध्यमें उन चार कन्याओंकी जाति पृथक् पृथक् कह सुनायी । सभाके सम्पूर्ण सभासदगण और विद्वान् लोग कालिदासको बारंबार धन्यवाद देने लगे. राजा भोज और वे चारों कन्या अत्यंत आश्चर्यको प्राप्त हुई. इस प्रकार कालिदासका समयोचित यथेष्ट उत्तर सुनकर चारों कन्या मनसे तो कालिदासको वरती हुई. तथापि उसकी चतुरता और विद्वत्ता देखनेके लिये प्रत्येक कन्या कालिदाससे प्रश्न करने लगी–

प्रथम सुनारकी पुत्री चंद्रचकोरी कहने लगी—हे कविवर कालिदास ! इस संसारमें करने योग्य कार्य कितने हैं ? वसंतऋतु कैसी सुखदायक है ? राजाओंको कौनसे दोष सदैव त्यागने योग्य हैं ? इस प्रकार तीन प्रश्न कहे हैं। पण्डितजी ! कृपा करके इनका उत्तर दीजिये, इस प्रकार उसने कहा। यह सुनकर कवि कालिदास बोला—हे चन्द्रचकोरी ! श्रवण कर—

"तपस्यन्तः सन्तः किमधिनिवसामः सुरनदीं
गुणोदारान्दारानुत परिचरामः सविनयम्।
पिबामः शास्त्रौघानुत विविधकाव्यामृतरसान्
न विद्मः किं कुर्मः कतिपयनिमेषायुषि जने १"

अर्थात्—गंगाके तटपर जाकर उत्कृष्ट तप करना चाहिये, या उदार गुणवाली स्त्रियोंको प्रेमपूर्वक सेवन करना चाहिये और कल्याणकारी अनेक शास्त्रोंका सार पान करना चाहिये या अनेक प्रकारके काव्यामृतपूरित ग्रंथोंके रसोंका पान करना चाहिये, क्या क्या करें ? क्योंकि समय तो थोड़ा है और यह संसार क्षणभंगुर है इस कारण मेरी बुद्धिके अनुसार ईश्वरकी आराधना करनेके समान अन्य कार्य नहीं है।

पहिले प्रश्नका उत्तर कहकर दूसरे प्रश्नका उत्तर निम्नलिखित श्लोकमें कहा—

"परिमलभृतो वाताः शाखा नवाङ्कुरकोटयो
मधुरविरुतोत्कण्ठावाचः प्रियाः पिकपक्षिणाम्।
विरलसुरतस्वेदोद्गारा वधूवदनेन्दवः
प्रसरति मधौ रात्र्यां जातो न कस्य गुणोदयः"

अर्थात् वसन्तऋतुके फैलनेसे पवन सुगन्धित बहने लगी, वृक्षोंकी शाखाओंमें करोडों नवीन अंकुर प्रगट होने लगे, कोयलोंकी मधुर वाणी मनमें आनंद उत्पन्न करती हैं, इस कारण वह अत्यंत प्रिय लगती हैं, और रात्रिके विषय स्त्रियोंके चन्द्रमाके समान मुखकमलपर कामक्रीडाके परिश्रमसे बहुत सूक्ष्म सूक्ष्म मोतीके समान पसीनेके बिंदु दीखते हैं इस कारण वसंतऋतुमें सम्पूर्ण गुणोंका उदय होता है।

इस प्रकार दूसरे प्रश्नका उत्तर देकर तीसरे प्रश्नका उत्तर नीचे लिखे अनुसार कहा-

'स्त्रियोऽक्षा मृगया पानं वाक्पारुष्यंच पञ्चमम्।
महांश्च दण्डः पारुष्यमर्थदूषणमेव च ॥ ३ ॥
सप्त दोषाः सदा राज्ञा हातव्या व्यसनाकराः।
प्रायशो यैर्विनश्यन्ति कृतमूला अपीश्वराः ४'

अर्थात्-परस्त्री, जुआँ, शिकार, मद्यपान, कठोर वचन, भयंकर दण्ड और जिससे द्रव्यका नाश हो ऐसे कार्य ये सातों दुःखदायक दोष राजाओंको सदैव

त्यागने चाहिये. क्योंकि अत्यन्त ऐश्वर्यवान् दृढ़ जड़-वाले ऐसे राजामें भी यदि इनमेंसे एक दोष भी हो तो वह राजा नष्ट हो जाता है और जो सात दोष हों तो कहना ही क्या है ?

इस प्रकार तीनों प्रश्नोंके उत्तर सुनकर चन्द्रचकोरी अत्यन्त प्रसन्न हो अपने स्थानपर जाकर बैठ गयी।

तत्पश्चात् ब्राह्मणकी पुत्री चन्द्रप्रभा खड़ी होकर कालिदाससे बोली–हे विद्वद्वर्य महाकवि ! इस संसारमें मुक्तिका साधन क्या है ? भाग्यवान् पुरुषोंको हेमंत ऋतुमें कौनसी इच्छा उत्पन्न होती है ? और पृथ्वीमें धर्मको छोड़कर अधर्म कार्य करनेवाले कितने पुरुष हैं ?

यह सुनकर कवि कालिदासने कहा कि, हे चन्द्रप्रभा ! तू श्रवण कर–

"जीर्णा एव मनोरथाः स्वहृदये यातं च तद्यौवनं हन्ताङ्गेषु गुणाश्च वन्ध्यफलतां याता गुणज्ञैर्विना। किं युक्तं सहसाऽभ्युपैति बलवान् कालः कृतान्तोऽक्षमी ह्यज्ञातं स्मरशासनाङ्घ्रियुगलं मुक्त्वाऽस्ति नान्या गतिः ॥ १ ॥"

अर्थात्–सम्पूर्ण मनोरथ हृदयमें ही जीर्ण हो गये, यौवन अवस्था बीत गयी, सम्पूर्ण गुण गुणज्ञके विना निष्फल हो गये, बलवान् काल सहसा यमरूपी बहुत शीघ्रतासे दौड़ा चला आता है, इस कारण इस समय

महादेवके चरणकमलोंके सिवाय अन्य मुक्तिका साधन नहीं है ।

इस प्रकार प्रथम प्रश्नका उत्तर कहकर दूसरे प्रश्नका उत्तर कहा-

"हेमन्ते दधिदुग्धसर्पिरशना माञ्जिष्ठवासोभृतः काश्मीरद्रवसान्द्रदिग्धवपुषः खिन्ना विचित्रै रतैः । पीनोरुस्तनकामिनीजनकृताश्लेषा गृहाभ्यन्तरे ताम्बूलीदलपूगपूरितमुखा धन्याः सुखं शेरते ॥ २ ॥"

अर्थात्-हेमन्तऋतुमें जो दूध, दही, घीका सेवन करते हैं, जो अनेक प्रकारके मँजीठके रंगके वस्त्रोंको धारण करते हैं, जो शरीरपर केशरका गाढ़ लेप करते हैं, जो कामक्रीडाके श्रमसे खिन्न रहते हैं, जो पुष्ट जंघा और पुष्ट स्तनवाली स्त्रियोंका दृढ आलिंगन करते हैं और जिनके मुख सदैव नागरबेलके पान तथा सुपारी आदिसे परिपूर्ण रहते हैं और जो वातरहित भीतरके मकानमें सोते हैं वे पुरुष हेमन्त ऋतुमें धन्य हैं ।

इस प्रकार दूसरे प्रश्नका उत्तर देकर तीसरे प्रश्नका उत्तर नीचे लिखे अनुसार कहा-

"दश धर्मं न जानन्ति विप्रबाले निबोध तान् ।
तस्मादेतेषु सर्वेषु न प्रसज्जेत पण्डितः ॥ ३ ॥

मत्तः प्रमत्त उन्मत्तः श्रान्तः क्रुद्धो बुभुक्षितः ।
त्वरमाणश्च लुब्धश्च भीतः कामी च ते दश४."

अर्थात्–हे विप्रतनये ! इस संसारमें ये दश मनुष्य धर्मको छोड़कर अधर्मके काम करते हैं उनको कहता हूं–मदिरा पान करनेसे मत्त हुआ, विषयोंमें प्रमत्त हुआ, उन्मत्त (विक्षिप्त), परिश्रम करनेसे थका हुआ, क्रोधातुर, क्षुधातुर, बहुत शीघ्रता करनेवाला, अत्यन्त लोभी, भयभीत और कामी पुरुष इन सबकी पंडित जनोंको कदापि संगति नहीं करनी चाहिये ।

चन्द्रप्रभा अपने प्रश्नोंका यथोचित उत्तर सुन अत्यन्त हर्षित होकर अपने स्थानपर जा बैठी । तत्पश्चात् राजकुमारी चंपकमालती खड़ी होकर बोली कि, हे राजाके भूषण कविराजजी ! जगत्में नित्य पदार्थ कितने हैं ? और अनित्य पदार्थ कितने हैं ? शिशिर ऋतुमें क्या क्या कर्तव्य है ? और स्वर्गको ले जानेवाला कौनसे कर्म हैं ।

कालिदास पंडित कहने लगे कि, हे चंपकमालती ! श्रवण कर–

"प्राप्ताः श्रियः सकलकामदुघास्ततः किं
दत्तं पदं शिरसि विद्विषतां ततः किम् ।
संमानिताः प्रणयिनो विभवैस्ततः किं
कल्पं स्थितं तनुभृतां तनुभिस्ततः किम् ॥ १ ॥

अर्थात्-सर्व कामनाओंको पूर्ण करनेवाली लक्ष्मी प्राप्त हुई तो क्या ? शत्रुओंके मस्तकपर पांव धरे तो भी क्या ? तथा सेवकोंको वैभवसे सम्मानादि किया तो भी क्या ? और जो इस शरीरसे एक कल्पपर्यंत जिये तो भी क्या ?

भावार्थ-लक्ष्मी चञ्चल है इस कारण कभी न कभी अवश्य इसका अन्त होगा, शत्रुओंको जीतकर शिरपर पैर रखनेसे क्या, क्योंकि अन्तमें तो अवश्य बल घट जायगा, सेवक अथवा धनके लोभियोंने सम्मान किया तो भी क्या, क्योंकि जबतक धन है तभीतक सम्मान करते हैं और जो शरीर एक कल्पपर्यन्त रहा तो भी क्या, क्योंकि इन सबका अन्त है इस कारण यह सब अनित्य हैं केवल एक ईश्वर ही नित्य है। फिर हे चम्पकमालती !

" भक्तिर्भवे मरणजन्मभयं हृदिस्थं
स्नेहो न बन्धुषु न मन्मथजा विकाराः।
संसर्गदोषरहिता विजना वनान्ता
वैराग्यमस्ति किमतः परमर्थनीयम्॥ १॥ "

अर्थात्-महादेवमें भक्ति, हृदयमें जन्म मरणका भय, बंधुजनोंमें निःस्नेहता, कामविकारका मनमें नहीं होना, संसर्गदोषसे रहित होकर इकले निर्जन वनमें भ्रमण करना बस यही वैराग्य है और इससे विशेष क्या

वैराग्य होगा ? इस प्रकार पहिले प्रश्नका उत्तर कहकर दूसरे प्रश्नका उत्तर कहने लगा—

" चुम्बन्तो गण्डभित्तीरलकवति मुखे सीत्कृतान्यादधाना वक्षस्सूत्कञ्चुकेषु स्तन-भरपुलकोद्भेदमापादयन्तः । ऊरूनाकम्प-यन्तः पृथुजघनतटात् स्रंसयन्तोऽशुकानि व्यक्ताः कान्ताजनानां विटचरितकृताः शैशिरा वान्ति वाताः ॥ २ ॥ "

अर्थात्—बांके केशोंवाली स्त्रियोंके कपोलोंको चुम्बन करता और कंचुकीरहित वक्षःस्थलमें रोमांचको उत्पन्न करता तथा जंघाओंको कम्पावता और जघनके ऊपरके वस्त्रको उघड़ता इस प्रकार व्यभिचारी पुरुषोंके समान आचरण करता हुआ शिशिरऋतुका वायु वहन करता है। फिर हे हरिणाक्षी !

"प्रोद्यत्प्रौढप्रियङ्गुद्युतिभृति विदलत्कुन्द-माद्यद्द्विरेफे काले प्रालेयवातप्रचलविकासितो द्दाममंदारनाम्नि। येषां नो कण्ठलग्ना क्षणमपि तुहिनक्षोदरक्षा मृगाक्षी तेषामायामयामा यमसदनसमा यामिनी याति यूनाम् ॥ ३ ॥"

अर्थात्—जिसमें प्रियंगु फूलकर अपूर्व शोभाको धारण करते हैं जिसमें फूले हुए कुंदके वृक्षोंको देखकर भ्रमरगण

उन्मत्त होकर भ्रमण करते हैं और जिसमें शीतल पवनके वहनेसे मन्दारवृक्षोंकी पंक्ति विकसित होती है, ऐसे समयमें शीतसे बचानेवाली स्त्री क्षणभर भी जिनके कंठको आलिंगन नहीं करती उन तरुण पुरुषोंको यह रात्रि महान् और यमसदनके समान दीखती है अर्थात् अत्यन्त दुःखदायक हो जाती है ।

इस प्रकार कालिदासने दूसरे प्रश्नका उत्तर कहकर पश्चात् तीसरे प्रश्नका उत्तर नीचे लिखे अनुसार कहा-

"सत्यं रूपं श्रुतं विद्या कौल्यं शीलं बलं धनम् ।
शौर्यं च चित्रभाष्यं च दशैताः स्वर्गयोनयः ४"

अर्थात्-सत्य, रूप शास्त्रका अभ्यास, विद्या, कुलीनता, शील, बल, धन, वीरता और युक्तिपूर्वक बोलना यह दश स्वर्गकी योनि हैं ।

राजकुमारी चम्पकमालती इस प्रकार अपने तीनों प्रश्नोंके यथोचित उत्तर सुनकर अत्यन्त आनंदपूर्वक अपने स्थानमें जा बैठी । पश्चात् चौथी वणिक्पुत्री चित्रलेखा खड़ी होकर निम्नलिखित प्रश्न करने लगी ।

हे पंडितशिरोमणि ! इस संसारमें कौनसे पुरुष धन्य हैं ? फिर स्त्रियोंके स्वाभाविक शृङ्गार क्या हैं, तथा पौरुष और प्रारब्ध इन दोनोंमें विशेष कौन है ? इन तीनों प्रश्नोंका उत्तर कृपा करके शीघ्र दीजिये ।

यह सुनकर कवि कालिदास कहने लगे कि, हे चित्रलेखा ! श्रवण कर-

"सखे धन्याः केचित्त्रुटितभवबन्धव्यतिकरा
वनान्ते चित्तान्तर्विषमविषयाशीविषगताः ।
शरच्चन्द्रज्योत्स्नाधवलगगनाभोगसुभगां
नयन्ते ये रात्रिं सुकृतचयचित्तैकशरणाः॥ १॥"

अर्थात्–हे प्रिया! जिनका भवबन्धन टूट गया है तथा अन्तरंगमें रहनेवाला विषयरूपी अत्यन्त विषैला सर्प जिनके हृदयमेंसे निकल गया है तथा जो शरच्चन्द्रमाकी स्वच्छ चांदनीमें रात्रिको वनान्तमें व्यतीत करते हैं और सुकृतमें लगा हुआ चित्त ही जिनकी शरण है ऐसे महात्माओंको ही धन्य है, अर्थात्–ऐसे पुरुष धन्य हैं। दूसरे प्रश्नका उत्तर–

"वक्त्रं चन्द्रविडम्बि पङ्कजपरीहासक्षमे
लोचने वर्णः स्वर्णमपाकरिष्णुरलिनीजिष्णुः
कचानां चयः । वक्षोजाविभकुम्भविभ्रमहरौ
गुर्वी नितम्बस्थली वाचो हारि च मार्दवं
युवतिषु स्वाभाविकं मण्डनम् ॥ २ ॥"

अर्थात्–चन्द्रमाके समान मुख, कमलसे श्रेष्ठ नेत्र, सुवर्णसे सुन्दर शरीरका वर्ण, भ्रमरके समान श्याम केश, हाथीके गण्डस्थलसे भी उत्तम और पुष्ट स्तन तथा भारी नितंब एवं मनोहर वचन और सौकुमार्य यह संपूर्ण गुण स्त्रियोंमें स्वाभाविक होते हैं।

तीसरे प्रश्नका उत्तर–

"नेता यस्य बृहस्पतिः प्रहरणं वज्रं सुराः सैनिकाः स्वर्गो दुर्गमनुग्रहः किल हरेरैरावतो वारणः। इत्यैश्वर्य्यबलान्वितोऽपि बलभिद्भग्नः परैः सङ्गरे यद्युक्तं ननु दैवमेव शरणं धिग्धिग् वृथा पौरुषम्॥ ३॥"

अर्थात्–जिसका मंत्री बृहस्पति है, जिसका शस्त्र वज्र है, देवताओंसी जिसकी सेना है, स्वर्ग जिसका किला है, विष्णु भगवान्‌की जिसके ऊपर कृपा और जिसकी सवारीके लिये ऐरावत हाथी, ऐसे ऐश्वर्य्यवान् और बलशाली इन्द्रको भी शत्रुओंने जीत लिया, इससे सिद्ध होता है कि, केवल एक प्रारब्ध ही रक्षा करनेवाला है, इस कारण विना प्रारब्धके पुरुषार्थको धिक्कार है। यदि प्रारब्ध बलवान् न हो तो मनुष्योंका उद्योग निष्फल होता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। इस पर दृष्टांत कहते हैं–

"खल्वाटो दिवसेश्वरस्य किरणैः सन्तापितो मस्तके वाञ्छन्देशमनातपं विधिवशात्तालस्य मूलं गतः। तत्राप्यस्य महाफलेन पतता भग्नं सशब्दं शिरः प्रायो गच्छति यत्र भाग्यरहितस्तत्रैव यान्त्यापदः॥ ४॥"

अर्थात्–एक खल्वाट (गंजा) मनुष्यका मस्तक जब सूर्य्यके किरणोंसे सन्तापित होने लगा तब वह छायाकी इच्छा करता हुआ ताड़के वृक्षके नीचे जाकर खड़ा हो गया, दैववश ऊपरसे एक बहुत बड़ा ताड़का फल बड़े जोरसे इसके शिरपर आकर गिरा, उससे शिर फट गया और बड़ा शब्द हुआ, इससे यह सिद्ध होता है कि–भाग्यहीन पुरुष जहां जहां जाता है वहीं वहींपर उसके साथ विपत्ति भी चली जाती है, इस प्रकार तीनों प्रश्नोंका उत्तर यथोचित मिलनेसे चित्रलेखा अत्यन्त आनन्दित होकर अपने स्थानमें जाकर बैठ गयी।

पश्चात् चारों कन्या विनयपूर्वक खड़ी हुई। उनमेंसे प्रथम चन्द्रप्रभा नीचे लिखे अनुसार कहने लगी–

हे भारतभूमिके भूषण परमारवंशावतंस प्रजावत्सल राजा भोज! हम चारों कन्याओंने अनेक राजा और हजारों पंडितोंकी सभामें जाजाकर शास्त्रविषयक वाद विवाद किया तथा अनेक राजवंशी भी देखे किंतु आपके समान प्रतापी राजनीतिज्ञ और ऐश्वर्यसम्पन्न ऐसा कोईभी नृपति नहीं देखा तथा आपके आश्रयमें रहनेवाले चौदह सौ पंडितोंके मध्यमें सुशोभित और आपकी सभाका शृंगाररूप जो कालिदास पंडित है इसकी विद्वत्ता और प्रभाव देखकर हम अत्यन्त आनन्दको प्राप्त हुई. इन्होंने हमारे प्रश्नोंका यथोचित उत्तर देकर हमें प्रसन्न किया है, इस कारण इन्होंने हमें विवादमें जीत लिया है इससे

हम चारों कन्या इस समयसे कालिदासके चरणोंकी दासी हो चुकी हैं. इस प्रकार कहकर तत्काल अपने रत्नजटित सुवर्णके पिटारोंमेंसे उत्तम रत्नोंकी और फूलोंकी माला निकालकर कालिदासके कंठमें पहरा दीं और विनयपूर्वक चरणोंमें नमस्कार किया।

पश्चात् राजा भोजसे बोलीं—हे धाराधिपति ! तुम प्रजाके पितारूप हो इस कारण शुभ लग्न विचार कर हमारा सम्बन्ध कालिदासके साथ करा दो।

उन चारों कन्याओंकी विनती राजा भोजने अत्यन्त हर्षके साथ स्वीकार की, फिर उनका ग्राम धाम पूछकर उनके माता पिता तथा सम्बन्धी जनोंको बुलाकर एक उत्तम मण्डप रचा और शास्त्रोक्त विधिसे उनका विवाह कालिदासके साथ करा दिया और भोजनादिकमें लाखों रूपये खर्च किये।

विवाह होनेके पश्चात् अनेक देश देशान्तरोंसे वे चारों कन्यायें अनेक राजसभाओंको जीतकर जो बहुतसा धन लायी थीं वह सब कालिदासको अर्पण कर दिया और अपने आप चारों कन्यायें कालिदासकी अर्धांगिनी होकर रहीं. सन्ध्या होनेपर चारों कन्या एकत्र होकर विचार करने लगीं, कि हमारा पति सर्व शास्त्रोंमें तथा कवित्वोंमें तो महा प्रवीण और विचक्षण है किन्तु काम-शास्त्रमें चतुर है कि नहीं ? और जो चतुर है तो विषयरूपी मदको वशमें रखनेकी शक्ति रखता है कि नहीं ? इस

विषयमें इसकी परीक्षा लेनी चाहिये। ऐसा ठहराव किया कि, जिसके पास पहिले आवै वह किसी प्रकारका निमित्त बनाकर रंग विलाससे अनादर कर देवे, जो वह चतुर और विलासी होगा तो वह अपने मनको किसी प्रकारसे सावधान करके संसारका सुख भोग छोडेगा नहीं।

इस प्रकार ठहराव करके वे चारों बाला अपने अपने शयनमंदिरमें गयीं। पश्चात् निद्राके समय होनेपर कालिदास अपने मंदिरसे चलकर प्रथम ब्रह्मतनयाके भवनमें गया, चन्द्रप्रभाने कालिदासको आता हुआ देखकर सम्मानपूर्वक बैठाया। कालिदास कितनी देरतक तो हास्य विनोद करता रहा, पश्चात् संसारका सुख भोगनेकी इच्छा प्रकट की. तब चन्द्रप्रभा मुख मलीन करके बोली कि, हे प्राणनाथ ! जब ग्रहयोग अनुकूल होगा तब तुम्हारे साथ रमण करूंगी, इस प्रकार चन्द्रप्रभाका भाषण सुनकर कालिदास बोला कि, हे चन्द्रमुखी !

" वक्त्रेन्दुः कबरीभरस्तव तमः सीमन्तसूर्यो गुरुर्वक्षोजावधरः स चावनिजनिः केतुर्भ्रुवौ सुन्दरि। वाक्यं काव्यमयं शनैश्चरगतिर्मध्यस्तु सौम्योऽपरः सा त्वं चेत्कुरुषे कृपां मयि तदा सर्वेऽनुकूला ग्रहाः॥ "

अर्थात्–तेरा मुख जो है वही चन्द्र है और श्याम जो केशोंका पाश सो राहु ग्रह है तथा ललाटपर गूँथे हुए

बालोंके बीचमें शोभायमान जो सिंदूरका बिंदु है वह सूर्य ग्रह है, तेरे जो लाल ओष्ठ हैं वह मंगलग्रह है, तेरे जो यह भारी स्तन हैं वह गुरु (बृहस्पति) नामका ग्रह है, तथा काव्य अर्थात् शुक्र वह तो मधुर वाक्य अर्थात् वाणीमें ही स्थित है और तेरी जो मन्दगति वही शनैश्चर ग्रह सहजस्वभावसे ही तेरी सेवामें उपस्थित रहता है तथा तेरा जो मध्यभाग अर्थात् कटितट अत्यन्त सुन्दर है वह सौम्य अर्थात् चन्द्रमाका पुत्र बुधकी उपमाके योग्य है, इस प्रकार सम्पूर्ण ग्रह तेरे शरीरमें निवास करते हैं अत एव जो तू मेरे अनुकूल हो तो मेरे सब ग्रह अनुकूल होंगे, किन्तु इन आकाशमें लटकते ग्रहोंसे मुझे कोई प्रयोजन नहीं है, केवल एक तेरी कृपा ही होनी चाहिये । इस प्रकार कालिदासके वचन श्रवण करते ही चंद्रप्रभाने अत्यंत प्रसन्न होकर आलिंगन किया । पश्चात् कालिदासने अनेक प्रकारकी यात्रा करनेकी इच्छा करने वाली वणिक्तनयाके शरीरको स्पर्श करनेकी इच्छा की, तब उस वैश्यपुत्रीने कालिदाससे कहा- कि, तुम पहिले एक बड़ी तीर्थयात्रा करके पवित्र हो आओ, पश्चात् मेरे शरीरका आलिंगन करना, इस समय आलिंगन करनेकी मेरी रुचि नहीं है, तब कालिदासने उसके मनोरंजन करनेके लिये अधोलिखित श्लोक कहा-

हे सुकोमला !

"मध्यं विष्णुपदं कुचौ शिवपदं वक्त्रं

विधातुः पदं धम्मिल्लः सुमनःपदं प्रविलसत्काञ्ची नितम्बस्थली । वाणी चेन्मधुरा धरोऽरुणधरः श्रीरंगभूमिर्वपुः किं ते त्रि प्रवदामि पुण्यचरितं त्वं निर्जरैः सेव्यसे ॥ १ ॥ "

अर्थात्–तेरी अत्यन्त पतली कमर है इसकी उपमा देनेके लिये यदि सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म वस्तु शोधन की जावे तो केवल एक विष्णुपद ही दीखता है, इस कारण विष्णुपद नामक तीर्थ तो तेरे कटिभागमें निवास करता है और शिवसम्बन्धी यात्रा जो है वह शिवस्वरूप तेरे दोनों स्तन हैं उनकी उपमा स्तनको दी जाती है, इस कारण शिवजीकी सम्पूर्ण तीर्थयात्राओंका समावेश तेरे हृदयपर कहना ही संगत है. तथा ब्रह्मसम्बन्धी संपूर्ण तीर्थयात्रा उसके स्थानरूप कमलके विषे है ऐसा कहना कुछ अनुचित नहीं है इस कारण तेरे मुखकमलमें ब्रह्मतीर्थका समावेश स्वभावसे होता है । इस कारण तेतीस कोटि देवताओंका निवास तेरे केशोंके पाशमें है क्योंकि केशोंमें गुँथे हुए फूलोंके समूहसे मानो सत्पुरुष भक्तिभावसे पूजन किये हुए पुरुषोंसे सुवासित किये देवताओंके समूहके समान केशपाश विदित होते हैं, इस कारण सुमनसः (पुष्प तथा सत्पुरुषों) का स्थान कहना योग्य है और नितम्बोंके ऊपर शोभती कटिमेखला यह ही हुई शिवकांची विष्णुकांची यह दो पुरी मोक्ष देखनेवाली तीर्थयात्रा हैं वे ही पुराणमें भी कही.हैं ।

अयोध्यामथुरामायाकाशीकाञ्चीअवन्तिका ।
पुरीद्वारावतीचैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ॥ १ ॥

अर्थात्–अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंतिका अर्थात्–उज्जैन और द्वारका यह सात पुरी मोक्षको देनेवाली हैं । इस कारण तेरे नितम्बोंके ऊपर कांची तो भ्रमण किया करती है, फिर तेरी मधुरवाणी वही मथुरा नगरीकी तीर्थयात्रा है और अधरोष्ठ अर्थात् नीचेका होंठ अत्यन्त लाल है वही अरुणधर है (ललाईको धारण करता या अरुणह्रद नामक बड़ा तीर्थ है) फिर श्रीरंगक्षेत्र नामकी तीर्थभूमि तेरा सम्पूर्ण शरीर है अर्थात् शोभायमान रंगभूमि है और तेरे पुण्य चरित्रका कहांतक वर्णन करूँ, संपूर्ण तीर्थ तेरे शरीरमें ही बस रहे हैं, निर्जरपुरुष (देवता अथवा युवा) तेरी निरंतर सेवा करते हैं, इस कारण अब मुझे कोई अन्य तीर्थकी यात्रा करनी बाकी नहीं रही, इसलिये तुझे छोड़कर अन्य तीर्थयात्रा करने कहां जाऊं ?

इस प्रकार कालिदासके चतुरतायुक्त और प्रेम सहित वचन सुनकर उस वणिक्पुत्रीने बड़े सत्कारपूर्वक आलिंगन किया ।

उसके पश्चात् कालिदास स्वर्णकारकी पुत्रीके पास गया, उससे अनेक प्रकारके मधुरवचन कहकर क्रोधको निवारण करनेके लिये निम्नलिखित श्लोक कहा–

"कान्ते रोमालिवल्ली तव तु समुदिता नाभिनिम्नालवाला चित्रं वक्षोजहैमाचलयुगलफलापीक्ष्यते पुष्पशून्या । किंवान्तर्भूम्यमुष्याः पनसवदुदितं मूलदेशेऽस्ति पुष्पं तद् द्रष्टुं मेऽतिवाञ्छेत्यभिवदति कवौ सा नतास्याऽहसच्च ॥ १ ॥"

अर्थात्--हे सुन्दरी ! तेरी नाभिरूपी गम्भीर क्यारीमेंसे उत्पन्न हुई नाभीसे लेकर हृदयपर्यन्त बारीक रोमोंकी पंक्तिरूप बेलकी वृद्धिको प्राप्त होकर देखते देखते थोड़े ही समयमें उस बेलपर बड़े बड़े दो फल (स्तन) प्रकट हुए हैं, वह फल मानो हिमालयके शिखर ही हैं, परंतु ऐसी सुन्दर चमत्कारी बेलका फूल भी अवश्य होना चाहिये, वह फूल मालूम नहीं होता यह बड़ा आश्चर्य है, इस कारण बडहलके वृक्षके समान बेलका प्रफुल्लित हुआ फूल मूलभूमिमें ही है, इस प्रकार शृंगाररससहित प्रेमसंपूर्ण कालिदासके मृदु वचनको सुनकर मुखको नीचे करके अत्यंत आनन्दपूर्वक वह स्वर्णकारकी कन्या कालिदासको आत्मसमर्पण करती हुई ।

उसके पश्चात् कालिदास चौथी राजकुमारीके पास जाकर अनेक हास्य विनोद करके उसको प्रसन्न करनेके लिये नीचे लिखे अनुसार श्लोक बोला--

"पद्मेन्दीवरकुन्दचम्पकजपाजातीषु जातस्पृहं क्रीडाकाञ्चनशैलतुङ्गशिखरारोहावरोहालसम् मार्गे प्रस्खलितं तथापि विषमे मग्नं सरोमण्डले दुःखादुद्धृतमङ्गनेऽत्र कदलीमूले मनो मूर्च्छितम् ॥ १ ॥"

अर्थात्—हे प्राणवल्लभे ! एक हमारी प्राणोंसे भी प्यारी और चञ्चल मनरूपी वस्तु देखते तेरे शरीररूपी महा अरण्यमें खो गयी है इसलिये उसका अत्यंत खोज करनेसे इतना पता लगा है कि, इस प्रफुल्लित तुम्हारे मुखरूपी वनके द्वारपर जाकर अटक रही. फिर बहुत देर टक्कर खाकर पहिले तो उसने तेरे मुखरूपी कमलमें प्रवेश किया. पश्चात् नेत्ररूपी नीले कमलोंमें प्रवेश किया, फिर दंतरूपी कुंदकी कलियोंमें प्रवेश किया, पश्चात् नासिकारूपी चम्पाकी कलीमें प्रवेश किया, फिर जपाके पुष्परूपी लाल ओष्ठोंमें प्रवेश किया, तदनंतर चमेलीके फूल अर्थात् तेरी हास्यजनक कांतिमें प्रवेश किया । इस प्रकार तेरे शरीररूपी वनमें वारंवार भ्रमण करके फिर वहांसे आगेको चली तो वह इसी वनमें बड़े बड़े उत्तुंग सुवर्णके पर्वतोंके तेरे स्तनरूपी जो शिखर हैं उनपर बारबार चढ़ने उतरनेसे थक गयी, पश्चात् धीरे धीरे वहांसे नीचे ऊँचे बिकट मार्गमें तेरे उदरकी त्रिवली भागके तटपर इस मनरूपी वस्तुने बहुतसी

ठोकरें खाईं, फिर वहांसे नीचे उत्तरकर देखा तो एक सुन्दर गम्भीर कुण्ड (नाभी) देखकर उसमें स्नान करनेके लिये घुस गयी। पश्चात् उसमें डूबते डूबते बड़े जोरसे निकलकर आगे चली फिर वहां कदलीके दो स्तम्भोंके बीचमें जाकर ऐसा चक्कर खाया कि आजतक भी नहीं निकलसकी। ऐसे कालिदासके शृंगाररसपूरित रहस्यके वचन सुनकर राजकन्या अपने शरीरकी सब सुध भूल गयी और उनके वचनामृतमें ही तल्लीन हो गयी. इस प्रकारके वार्तालापमें प्रेमपाशके मदमें विह्वल हुई राजकन्याने विचारा कि, यह हमारा पति स्त्रियोंके बीचमें आसक्त होकर अत्यंत कामसे अंधा हो गया है।

इस प्रकार चित्तमें धारण करके क्रोधान्वित होकर कालिदासके इतने जोरसे लात मारी कि, कालिदास पृथ्वीपर गिर पड़ा फिर सावधान होकर राजकन्याके सम्मुख दृष्टि करके निम्नलिखित श्लोक कहा—

"दासे कृतागसि भवत्युचितः प्रभूणां
पादप्रहार इति सुन्दरि नास्मि दूये।
उद्यत्कठोरपुलकाङ्कितकण्टकाग्रै-
र्यद्भिद्यते मृदुपदं ननु सा व्यथा मे ॥२॥"

अर्थात्—हे सुन्दरी ! दास अपराध करे तो उसको घरकी स्वामिनी लात मारकर निकाल दे, यह बात उचित ही है अर्थात्—तू गृहेश्वरी है, क्योंकि तेरी सेवा

करनेसे सावधान रहना पड़ता है, आज तेरी सेवामें किसी प्रकारकी चूक पड़नेसे तूने लात मारी, इसलिये इससे तो मेरे मनमें कुछ भी दुःख नहीं, किन्तु प्रफुल्लित हुए तेरे अत्यन्त कोमल चरणकमलमें मेरी छातीके कठोर रोमांच चुभनेसे अत्यन्त पीड़ा हुई है. इस पीड़ाका स्मरण करनेसे मुझे बड़ा खेद होता है. ऐसे अनेक प्रकारके मधुर वचनोंसे प्रसन्न करके कालिदास चारों स्त्रियोंसे इच्छानुसार संसरका सुख भोगने लगा।

कला ४४.

(भुक्कुण्ड ब्राह्मणका आख्यान)

एक दिन राजा भोजके नवीन महलमें भुक्कुंड नामका पण्डित चोरी करनेके लिये गया. वहां जाकर चोरी करते करते इसके कानमें एक शब्द सुनायी पड़ा, फिर इसने कान लगाकर सुना तो राजा भोज बारंबार इस निम्न लिखित अर्द्धश्लोकको पढ़ रहा-

श्लो॰पूर्वार्द्ध–" गवाक्षमार्गप्रविभक्तचन्द्रिको
विराजते वक्षसि सुभ्रु ते शशी।"

अर्थात्–हे सुन्दरी! झरोखेमेंसे सुवर्णकी कांतिके समान पृथक् पृथक् विभक्त हुआ चन्द्रमा तेरे वक्षस्थलके ऊपर अत्यन्त शोभायमान हो रहा है।

उसको सुनकर ब्राह्मणने मनमें विचार किया कि, इस श्लोकका आधा उत्तरार्द्ध राजाको स्मरण नहीं आता,

इस कारण बारंबार पूर्वार्द्ध बोलता है ऐसा चित्तमें विचार करके कवित्वशक्तिका बल सहन नहीं कर सका अर्थात् तत्काल नीचे लिखे अनुसार उत्तरार्द्ध बोल उठा और चोरी करनेका कुछ भी ख्याल नहीं किया—

श्लो०उ०अ०—"प्रदत्तझम्पः स्तनसङ्गवाञ्छया
विदूरपातादिव खण्डतां गतः ॥ १ ॥"

अर्थात्—हे राजेंद्र! इस समय उत्पन्न हूई स्तनमंडलकी अपूर्व शोभाको देखकर चन्द्रमा अत्यन्त लज्जित होकर अपने मण्डलको स्तन मण्डलके साथ करनेके लिये बडे ऊँचेसे झंपापात करके मानो स्तनोंके ऊपर खण्ड खण्ड होकर गिर पड़ा है ऐसा विदित होता है।

इस प्रकार उस चोरका वाक्य सुनकर राजाने भयभीत होकर चारों ओर देखकर सेवकोंको बुलाया, सेवकोंके खोजनेपर एक पुरुष एक कोनेमें बैठा हुआ दीखा. उसको एक साथ पकड़कर राजाके सम्मुख उपस्थित किया. इस विचित्र पुरुषको देखकर राजाने अत्यन्त क्रोधित होकर पहरेदारोंको आज्ञा दी कि, इस समय इस मनुष्यको पहरेमें बिठा दो, प्रातःकाल होनेपर इसको दरबारमें हाजिर करना. इतना कहकर आप निद्रामें मग्न हो गया. प्रातःकाल होनेपर राजा अपने नित्यनैमित्तिक कर्मोंसे निवृत्त होकर भोजनकरके दरबारमें गया, वहां जाकर मन्त्री, प्रधान सुमन्त आदि सभासदोंके सम्मुख अनुचरोंको आज्ञा दी कि, रात्रिके समय महलमेंसे जो

चोर पकड़ा है उसको इस समय दरबारमें हाजिर करो. राजाकी आज्ञानुसार तत्काल उसको लाकर उपस्थित किया. उसने रात्रिमें महलमें घुसनेका कारण कहकर पश्चात् नीचे लिखे अनुसार श्लोक पढ़ा-

"भट्टिर्नष्टो भारविश्चापि नष्टो भिक्षुर्नष्टो भीमसेनोऽपि नष्टः । भुक्कुण्डोऽहं भूपति-र्भोजराज भानां पङ्क्तावन्तकः संप्रविष्टः॥२॥"

अर्थात्-हे राजन्! जिनके नाममें प्रथम भकार आता है ऐसे भकारादि नामवालोंकी पंक्तिका अन्त हो गया. क्योंकि भट्टि. भारवि, भिक्षु, भीमसेन यह सब कवि नाशको प्राप्त हो गये और मेरा भुक्कुण्ड नाम है और तुम्हारा भूपति भोज नाम है इस लिये यह दोनों भकार विद्यमान् हैं, किंतु मुझे तो आपने फांसीकी आज्ञा दी है इससे इतना ही विचार करना उचित है ।

ब्राह्मणके इस प्रकार समयसूचकतासे परिपूर्ण वचनोंको सुनकर राजाको एक हँसी आगयी। उस ब्राह्मणका अपराध क्षमा करके उसको विशेष धनप्रदान किया ।

कला ४५.

(मयूर और बाणकविका आख्यान)

राजा भोजकी सभामें मयूर और बाण प्रसिद्ध पंडित थे. दोनों परस्परमें साले बहनोई थे. राजा भोज इनकी विशेष प्रतिष्ठा करता था. एक समय मयूर पंडित किसी

कार्यके लिये अपनी बहनके घर गया. वहां अधिक रात्रि होनेके कारण द्वार बन्द हो गया. इससे उस समय वह बाहर ही सो रहा. परन्तु बहन और बहनोईकी समस्त वृत्तान्त एकाग्र चित्तसे श्रवण करता रहा. उस दिन बाण कविकी स्त्री किसी कारणसे मयूर कविसे विशेष रुष्ट हो गयी थी इस कारण बाण कवि कामान्ध होकर उसकी अनेक प्रकारसे प्रार्थना कर रहे थे. किन्तु वह किसी प्रकारसे भी प्रसन्न नहीं हुई, योंही सम्पूर्ण रात्रि व्यतीत होगयी और प्रातःकालका समय आ गया तब भी उसका क्रोध शमन नहीं हुआ उस समय बाणकवि नीचे लिखे अनुसार अपनी स्त्रीसे श्लोक बोला-

श्लोक ३ च०-"गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णित इव । प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि क्रुधमहो-"

अर्थात्-सम्पूर्ण रात्रि व्यतीत होगयी और चन्द्रमा क्षीण होकर अस्त होगया तथा यह दीपक भी मानो निद्राके वश होकर घूमतासा दीखता है और स्त्रियोंको मान रखनेकी जो अवधि है अर्थात्-जब स्त्रीको पति प्रणाम करे तो स्त्रीको मान तत्काल छोड़ देना चाहिये वह प्रणाम मेरे बारम्बार करनेपर भी तूने अभीतक इस क्रोधका त्याग नहीं किया यह बड़ा आश्चर्य है। इन तीन

पादोंको बाणकवि बारबार कहरहा था कि, इन पादोंको सुनकर मयूरकविसे अपनी कविताका बल न रोका गया झट निम्नलिखित श्लोकका चौथा पाद बोल उठाः–

"कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम् ॥ १ ॥"

अर्थात्--हे अत्यन्त क्रोधवाली ! तेरे अत्यन्त कठिन स्तनोंके संसर्गसे तेरा हृदय भी इतना कठोर हो गया है कि अबतक बारबार विनती करनेपर भी कोमल नहीं हुआ।

इस प्रकार भाईके मुखके वचन सुनकर वह अत्यन्त क्रोधपूर्वक लज्जाको प्राप्त हुई और उसी समय कहा कि–"जा तू कुष्ठरोगी हो" ऐसा शाप दिया। इस प्रकार उस पतिव्रताके शापसे मयूरपंडित कोढी हो गया।

प्रातःकालके होनेपर कोढके व्रणोंपर राख छिड़ककर राजा भोजकी सभामें गया, तब इसको देखकर बाण पंडित मोरकी मधुरवाणीके समान मागधी भाषामें श्लोक बोला, इसको सुनकर राजा भोज लज्जित होकर मयूरकी ओर देखने लगा, तब मयूर तत्काल वहांसे उठकर नगरके बाहर जाकर सूर्यका आराधन करने लगा। मयूर कविने "सूर्यशतक" नामक उत्तम सूर्यदेवका स्तवन बनाया, उसको बारबार पढ़कर सूर्यदेवकी स्तुति करनेसे उसका कुष्ठरोग बिलकुल नष्ट होकर शरीर सर्वांगसुन्दर हो गया।

दूसरे दिन अगर चन्दनादिका शरीरपर लेप करके और विविधप्रकारके वस्त्रालंकारोंको. धारण करके मयूर कवि सभामें गया, इसको देखकर राजा भोजने बाण पंडितकी ओर देखा तब बाण पंडित कहने लगा कि– सूर्यदेव इसपर प्रसन्न होगये हैं, इस कारण इसका शरीर कुष्ठरहित हो गया, बाणके इस वचनको सुनकर मयूर पंडित कहने लगा कि, जो देवताओंकी आराधना करनेसे ऐसा फल होता है तो तू भी कोई चमत्कार दिखला। तब बाण पंडित बोला-जो मनुष्य रोगरहित हैं उन्हें वैद्यसे क्या प्रयोजन ? तथापि तेरे वचनानुसार कुछ चमत्कार दिख-लाऊंगा. तू मेरे हाथ पांव सब काटकर खंड खंड करदे, मैं अभी भवानीदेवीको केवल छठे श्लोकके एक शब्दसे प्रसन्न करके अपना सम्पूर्ण शरीर सर्वांग सुन्दर कर दूंगा।

तब बाण कविने उसके समस्त अंग अलग कर दिये। बाण कविने पालकीमें बैठकर देवीके मंदिरमें जाकर अनेक प्रकारके उसका स्तवन किया और छठे श्लोकके अंतके शब्दको पढ़ते ही उसका शरीर भी पूर्ववत् नवयौवनयुक्त हो गया।

इस प्रकार इन दोनों पंडितोंका अद्भुत चमत्कार देखकर राजा भोज और समस्त सभा परम प्रसन्न हुई। सब लोग बाण और मयूर कविकी एक मुखसे प्रशंसा करने लगे और राजा भोजने दोनों कवियोंको अतुल द्रव्य देकर प्रसन्न किया।

कला ४६.

(वररुचिका आख्यान)

एक समय धारानगरीमें महासत्यवादी परमोदार और सर्वगुणसम्पन्न राजा भोज चौदहसौ पंडितोंके बीचमें सिंहासनपर बैठा था, इतनेमें बंगालकी ओरसे भ्रमण करता हुआ, वेदशास्त्रसम्पन्न, परमप्रवीण, महादरिद्री और समस्त विद्याओंका पारगामी वररुचि नामक एक ब्राह्मण सभामें आकर उपस्थित हुआ। यह कहीं मार्गमेंसे एक जामफल (अमरूद) और एक मिरच मांगकर हाथमें ले आया था, इसलिये यह प्रथम इन दोनों वस्तुओंको राजा भोजकी भेंट करके आशीर्वाद देकर राजाके सम्मुख बैठ गया। राजाने उसकी ओर देखकर कहा कि हे द्विजोत्तम! आजतक मेरे पास अनेक ब्राह्मण आये परन्तु यह फल किसीने भी भेंट नहीं किये, इस कारण पहिले इन फलोंके नाम विदित करो और इनमें शास्त्रोक्त रीतिसे कल्याणवाचक शब्द कहो। इस प्रकार राजाके वचन सुनकर वररुचि बोला कि—हे करुणासिन्धो! इस फलको बहुबीजा अथवा जामफल कहते हैं, इससे इसका अर्थ यही है कि—जो राजा कुलवन्त हो और धर्मकी विशेष उन्नति करता हो तो उसकी निर्मल कीर्ति इस बहुबीजेकी सदृश सम्पूर्ण संसारमें विस्तृति होती है अतएव आप भी इस धर्मक्षेत्रको निरन्तर बोते हैं इससे आपकी भी फलरूपी कीर्ति समस्त विश्वमें व्याप्त होगी,

इस प्रकार वररुचिने जामफलका प्रयोजन कहकर राजाके मनका समाधान किया।

फिर राजा मिर्चको हाथमें लेकर क्रोधान्वित दृष्टिसे उसकी ओर बोला—महाराज! अब इस फलका भावार्थ कहिये, इस वस्तुको यहां लानेका प्रयोजन क्या है?

तब वररुचि बोला—हे नरेन्द्र! इस वस्तुको मिर्च कहते हैं, आपने इसको अशुभ और तुच्छ समझकर मेरी और कटाक्षदृष्टिसे देखा किन्तु इसका नाम ग्रहण करनेमें उत्तम है वह आप स्वयं कह देंगे। हे पृथ्वीभूषण! यह अपने नामको मिरची कहकर आपकी प्रार्थना करती है कि, मुझसे सम्पूर्ण पदार्थ स्वादिष्ठ होते हैं इस कारण मुझपर रुचि कर. इसको सुनकर राजा भोज समझ गया कि, यह ब्राह्मण अत्यंत चतुर है. पश्चात् राजाने उससे कहा कि, हे विद्वद्वर्य! आपका यहां आना कैसे हुआ?

ब्राह्मण बोला—हे राजेन्द्र! आपसरीखे गोब्राह्मण-प्रतिपालक राजाके दर्शन करनेके लिये बंगालसे आया हूँ, इससे आपका दर्शन करनेसे कृतकृत्य और शंकर-रूप हुआ किन्तु पूर्णता होनेमें कुछ थोडीसी कसर रह गयी है वह आप पूर्ण करेंगे।

"शूली जातः कदशनवशाद्भैक्ष्ययोगात्कपाली
वस्त्राभावाद्दिगतवसनः स्नेहशून्योजटावान्।

इत्थं राजंस्तव परिचयादीश्वरत्वं मयाप्तं नाद्यापि त्वं मम नरपते ह्यर्द्धचन्द्रं ददासि १॥"

अर्थात्–शंकर–शूली, कपाली, दिगम्बर, जटाधारी, एवं अर्धचन्द्र इतने चिह्नोंसे चिह्नित हैं, इनमेंसे सिवाय अर्धचन्द्रके शेष चिह्न मुझे प्राप्त हुए हैं इससे उनको आपसे कहता हूँ। मैंने मिष्टान्न भक्षण स्वप्नमें भी नहीं देखा इससे शूली अर्थात्–शूलरोगी हूँ, घरमें एक दिनका भी अन्न न होनेसे भिक्षाटन करने जाता हूँ वह भिक्षा माँगनेके लिये धातुका पात्र न होनेसे नारिलयके कपालमें मांगकर लाता हूँ इस कारण कपाली भी तथा ओढ़नेके लिये और पहिरनेके लिये जीर्ण वस्त्र भी नहीं इस कारण मुझे दिगम्बरका पद प्राप्त हुआ है, एवं केशोंमें तेल आदिके न डालनेसे वह सूखे और जटाओंकी समान लम्बे हो गये हैं इसकारण मैं जटावान् हूँ, इसी प्रकार तेरे परिचयसे मुझे ईश्वरता प्राप्त हुई है, किन्तु एक वस्तुकी न्यूनता रह गयी है वह यह है कि अर्द्धचन्द्र-लक्षण अर्थात् अँगूठ और तर्जनीसे गचांडि (घंचा) मारके निकाल देगा तो मुझमें पूर्ण रीतिसे ईश्वरता प्राप्त हो जायगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

इस प्रकार राजा भोज वररुचिका संभाषण सुनकर तथा उसका धैर्य और इतनी चतुरता देखकर आश्चर्यको प्राप्त हुआ फिर उसको बहुतसा धन और अनेक प्रकारके वस्त्र आभूषण देकर सन्तुष्ट किया।

कला ४७.

(माघ पण्डित)

जिस प्रकार राजा भोजकी विद्वत्ता, दानशक्ति और गुणज्ञता जगत्‌में विख्यात थी उसीप्रकार माघ पंडितकी भी अलौकिक विद्वत्ता, असाधारण दानशक्ति संसारमें प्रसिद्ध थी, किन्तु किसी विषयमें माघ पंडित राजा भोजसे भी अधिक उदार था. माघ पंडितके द्वारपर कदापि कोई याचक विमुख होकर नहीं जाता था. माघ पंडितकी जब संसारमें इतनी कीर्ति फैली, तब भोजराजाके मनमें इच्छा उत्पन्न हुई कि, अवश्य माघ कविसे मिलना चाहिये । राजा भोजने कई एक प्रतिष्ठित मनुष्योंको श्रीमालपुर भेजकर बड़े आदरपूर्वक माघ पंडितको धारानगरीमें बुलाया । धारानगरीके निकट आनेपर राजा भोज बड़े समारोहके साथ पंडितजीका आह्वान करनेके लिये गया । पश्चात् अनेक प्रकारके वादित्र, गीत आदिके साथ पंडितजी नगरमें आये । पंडितजीके संमानार्थ बहुतसे कर्मचारी नियत किये और उनके निवासके लिये उत्तम स्वर्णमण्डित मंदिर, उनके शयन करनेके लिये विविध प्रकारके वस्त्रोंसे वेष्टित कोमल शय्या और भोजनादिके लिये अनेक प्रकारके षड्रसान्वित भोजन बनवाये. इस प्रकार धारानगरीमें निवास करते हुए माघ कविको कई एक महीने व्यतीत हो गये। बाद एक दिन प्रातःकाल वादित्रोंके मांगलिक शब्द

सुनकर माघ पंडित जागृत हुआ, राजाके पास जाकर घर जानेकी इच्छा प्रकट की, किन्तु राजाने किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया. पश्चात् बहुत हठ करनेपर राजाने कहा—जो इच्छा आपकी । माघ कवि जब चलनेको उद्यत हुआ तब भी राजा भोजने बहुत समझाया किन्तु उससे रहना स्वीकार नहीं किया. माघ कविके साथ राजा बहुत दूरतक पहुँचाने गया और चलते समय राजासे यह बात ठहरा ली कि आप हमारे घर अवश्य आवें, इस बातको स्वीकार करके राजा अपने घर चला आया, पश्चात् कितनेक दिनोंके बाद राजा भोज माघ पंडितका ऐश्वर्य देखनेके लिये श्रीमालनगरको गया। माघ पण्डितने राजाको अत्यंत सत्कारपूर्वक अपने गृहमें ठहराया और राजकर्मचारी तथा समस्त सेनाको यथोचित स्थानमें ठहराया और उनके भोजन पानका उत्तम प्रबन्ध किया. राजाकी समस्त सेना एक छोटेसे स्थानमें समागयी. राजाने माघ पण्डितका स्वर्णमय और रत्नजटित भवन देखकर चित्तमें अत्यन्त आश्चर्य किया । उस भवनमें एक ओर पद्मराग मणियोंसे व्याप्त और एक ओर मरकत मणियोंसे विभूषित पृथिवी थी. मरकतमणिसे व्याप्त भूमिको देखकर राजाको जलमें सिवारका भ्रम हुआ, राजा उसको जल समझकर वस्त्र संकोचने लगा, तब सेवकोंने सब ठीक ठीक बात कह दी, उसको सुन-

कर राजा अत्यन्त लज्जित हुआ। तदनंतर भोजनके समय अनेक प्रकारके व्यंजन शाक मिष्टान्न पक्वान्न आदि विविध सामग्री राजाके सम्मुख रखी, राजा उनको अत्यन्त हर्षके साथ भोजन करके चंद्रशालामें गया, वहां अनेक प्रकारके विस्मयजनक पदार्थ देखे पश्चात् शीतल मंद सुगन्ध पवनके चलनेपर शयनमंदिरमें जाकर सो गया. प्रातःकाल शङ्खनादकी ध्वनि सुनकर राजा जागृत हुआ और माघ पंडित बारं-बार उसके निकट जाकर चित्तकी प्रसन्नता पूछने लगा, इस प्रकार आनन्दपूर्वक कितनेक दिन सहजमें बीत गये फिर कुछ समयमें राजा भोजने माघ पंडितसे स्वदेश जानेकी आज्ञा मांगी तब माघ पंडितने प्रसन्न होकर अपना नवीन रचा हुआ 'भोजस्वामिप्रसाद' इस नामवाला ग्रन्थ भोजको भेंट किया उसको लेकर राजा भोज मालवेकी ओर बिदा हुआ।

अनेक ज्योतिर्विद् विद्वानोंने माघ पंडितकी जन्म-पत्रीमें इस प्रकार लिखा था कि--"माघ पंडित प्रथम अवस्थामें अतुल समृद्धिके प्राप्त होनेसे अत्यन्त परा-क्रमी और जगत्में प्रसिद्ध होगा और उत्तर अवस्थामें सम्पूर्ण समृद्धिके घट जानेसे एक अतिशय दरिद्र अव-स्थाको प्राप्त होगा. फिर वृद्ध अवस्थामें एक साथ उसके पादशोथ रोग उत्पन्न होगा और उसी रोगसे इस अद्वितीय पुरुषकी मृत्यु होगी" वह ठीक उसी प्रकार हुआ। माघ पंडितके पिताने इसको पढ़कर अत्यन्त

खेद किया। फिर माघकी सौ वर्षकी आयु निश्चित समझकर सौ वर्षके छत्तीस हजार दिनोंके हिसाबसे हीरे पद्मरागादिसे जडे हुए सुवर्णके छत्तीस हजार बहुमूल्य हार बनाकर नवीन भण्डारमें रख दिये।

तथा उनके सिवाय अन्यान्य बहुतसी सम्पत्ति माघ पंडितको प्रदान करके अपने कुलानुसार उत्तम शिक्षा देकर आप पञ्चत्वको प्राप्त हुआ। पश्चात् उस कुबेरके समान माघ पंडितने अपनी सम्पूर्ण समृद्धि पंडितोंको और याचकोंको थोड़े ही समयमें दान करदी।

माघ पंडितने 'शिशुपालवध' नामका महाकाव्य रचकर पंडितोंके चित्तमें चमत्कार उत्पन्न किया तथा इसके सिवाय भी बहुतसे अद्भुत ग्रन्थ रचकर संसारमें अपूर्व प्रसिद्धता प्राप्त की।

पश्चात् पुण्यके क्षीण होनेपर माघ कवि दरिद्री हो गया और अपने देशमें रहना उत्तम न समझकर धारानगरीमें जाकर समयको व्यतीत करने लगा।

फिर कुछ समयके पश्चात् अपने देशमें आकर एक नवीन ग्रन्थ रचकर अपनी स्त्रीको देकर भोज राजाके पास द्रव्य लेनेके लिये भेजा. राजा भोज माघ पंडितकी स्त्रीकी दुर्दशा देखकर अत्यन्त आश्चर्यको प्राप्त हुआ किन्तु करे क्या? "कर्मणो गहना गतिः" अर्थात्-कर्मकी गहन गति है। पश्चात् पुस्तकका पृष्ठ उघाड़कर देखा तो उसमें निम्नलिखित श्लोकपर दृष्टि पड़ी।

"कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजषण्डं
त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः ।
उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं
हतविधिलसितानां ही विचित्रो विपाकः १॥"

अर्थात्–जब दैव विपरीत होता है तब प्रायः सम्पूर्ण कार्य नष्ट हो जाते हैं जैसे कि, सूर्य उदय होता है तब चन्द्रमा अस्त होता है तथा कुमुदवन (कुमोदिनी-बबूले) शोभाहीन होकर बंद हो जाते हैं और कमलवन विकसित होता है तथा घूघूपक्षीकी दिनमें दृष्टि बंद होनेसे वह देखनेको असमर्थ हो जाता है और चक्रवाक पक्षीको स्त्रीविरहके दूर होजानेके कारण अत्यन्त आनन्द उत्पन्न होता है । इस काव्यका अर्थ विचारकर राजा भोज बोला कि, यदि इस काव्यके बदलेमें मैं संपूर्ण पृथिवी भी देदूँ तो भी थोडी है किन्तु इस समय एक केवल यहां अर्थकी पुष्टि करनेवाला 'ही' शब्दका मूल्य एक लक्ष रुपया देता हूँ । इस प्रकार एक लक्ष रुपया देकर उसको बिदा किया, मार्गमें याचकलोगोंने इसको माघ पंडितकी स्त्री समझकर इससे याचना की. इससे उसने वह सब एक लक्ष रुपया याचकोंको देदिया, फिर घर आकर सम्पूर्ण वृत्तान्त पतिको कह सुनाया, उसको सुनकर माघ कवि बोला कि, स्त्री ! तू मेरी मूर्तिमती कीर्ति है इस प्रकार यह परस्पर वार्त्तालाप कर रहे थे कि, इतनेमें याचकोंका समूह माघ पंडितके द्वारपर आकर दीन

स्वरसे मांगने लगा, याचकोंके लिये अपने घर कुछ देने योग्य न देखकर चित्तमें अत्यन्त खेदखिन्न होकर माघ कविने नीचे लिखे अनुसार श्लोक कहे।

"अर्था न संति न च मुञ्चति मां दुराशा
दानाद्धि संकुचति दुर्ललितः करो मे।
याच्ञा च लाघवकरी स्ववधे च पापं
प्राणाः स्वयं व्रजत किं परिदेवितेन ॥ २ ॥"

अर्थात्—घरमें द्रव्य नहीं रहा इस कारण दान देनेमें हाथ सकुच गये और दूसरोंसे मांगनेमें लज्जा आती है और आत्मघात करनेसे घोर पाप लगता है अतः अब वृथा शोक करनेसे क्या प्रयोजन? इससे हे प्राण! तुम अपने आप चले जाओ।

पुनश्च—"दारिद्र्यानलसंतापः शांतः संतोषवारिणा। दीनाशाभङ्गजन्मा तु केनायमुपशाम्यतु ॥ ३ ॥"

अर्थात्—दरिद्रतारूपी अग्निसे हुआ संताप संतोषरूपी जलसे शांत होता है किंतु दीन लोगोंकी आशाको भंग करनेसे उत्पन्न हुआ संताप किसी उपायसे भी शांत नहीं हो सकता।

तथा च—"न भिक्षा दुर्भिक्षे पतितदुरवस्थाः कथमृणं लभंते कर्माणि क्षितिपरिवृढान् कारयति कः। अदत्वापि ग्रासं ग्रह-

पतिरसावस्तमयते क यामः किं कुर्मो गृहिणि गहनो जीवितविधिः ॥ ४ ॥

अर्थात्–इस दुर्भिक्षमें भिक्षा नहीं मिलती, किसीसे ऋण भी नहीं मिल सकता, किसीके दास होकर रहें तो कोई ब्राह्मण समझकर दास भी न रखेगा, इस कारण हे स्त्री ! आज एक ग्रासकी भी भिक्षाको दिये विना सूर्य अस्तको प्राप्त होता है इस कारण कहां जाऊं ? और क्या करूं ? मुझे अन्नके विना जीना कठिन है ।

अन्यच्च–" क्षुत्क्षामः पथिको मदीयभवनं पृच्छन् कुतोऽप्यागतस्तत्किं गेहिनि किञ्चिदस्ति यदयं भुङ्क्ते बुभुक्षातुरः । वाचास्तीत्यभिधाय नास्ति च पुनः प्रोक्ते विनैवाक्षरैः स्थूलस्थूलविलोललोचनजलैर्बाष्पाम्भसां बिन्दुभिः ॥ ५ ॥

अर्थात्–क्षुधासे पीडित याचक लोग मेरा घर पूँछकर आये हैं सो इनके भोजनके लिये घरमें कुछ है ? इस प्रकार माघ कविके वचनोंको सुनकर माघ कविकी स्त्री बोली कि–" है " किन्तु अक्षरोंके विना नहीं ऐसा कहा अर्थात् बड़े बड़े नेत्रोंसे बड़े बड़े आँसुओंके निकालनेके शिवाय मुखसे "नहीं है" ऐसा न कहा अर्थात् आँसुओंसे ही " नहीं है " ऐसा कह दिया । फिर माघने कहा–

"व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिनि व्यर्थतां गते ।
पश्चादपि हि गंतव्यं क सार्थः पुनरीदृशः ॥ ६ ॥

अर्थात्-'हे प्राण! याचक लोग निराश होकर जाने लगे हैं इससे इनके साथ तुम भी क्यों नहीं चले जाते हो? क्योंकि फिर ऐसा साथ तुम्हें नहीं मिलेगा' इस वाक्यका अन्तिम अक्षर बोलते ही माघ कविके प्राण प्रयाण कर गये।

प्रातःकाल होनेपर भोज राजाने माघ पंडितकी खबर लेनेके लिये मनुष्य भेजे, उन्होंने आकर कहा कि, महाराज! माघ पंडितके प्राण अन्नके विना निकल गये. इसको सुनते ही राजा अत्यन्त खेदखिन्न हुआ माघ कविकी जातिके वहां बहुतसे ब्राह्मण और अनेक इष्ट मित्र उपस्थित थे उनके सामने एक ऐसे अद्वितीय मनुष्यकी दुर्दशा देखकर वहांके लोगोंने उस श्रीमालनगरका नाम "भिल्लपाल" रख दिया।

कला ४९.

(शंखचूडनामक कविका चरित्र)

एक समय राजा भोज हेमन्तऋतुमें रात्रिके समय नगरकी चर्या देखनेके लिये भ्रमण कर रहा था. इतनेमें एक देवमंदिरकी ओरसे लम्बे और क्षीणस्वरकी आवाज आयी। राजा भोजने चारों ओर फिरकर देखा तो एक अत्यन्त दीन मनुष्य निम्न लिखित काव्यको बारंबार पढ़ रहा है।

"शीतेनोद्धुषितस्य माषफलवच्चिन्तार्णवे मज्जतः शान्तोऽग्निः स्फुटिताधरस्य धमतः

क्षुत्क्षामकुक्षेर्मम । निद्रा क्काप्यवमानितेव दयिता संत्यज्य दूरं गता सत्पात्रप्रतिपादितेव कमला न क्षीयते शर्वरी ॥ १ ॥"

अर्थात्–शीतके सहन करते अतिपीड़ितका, शरीर उड़दके समान श्याम हो गया है और कुटुम्बके पोषण करनेकी चिन्तारूपी समुद्रमें बारंबार मुसलस्नान करनेसे यह खरखरा होगया है, बस इतना ही नहीं किन्तु अत्यन्त क्षुधाके लगनेसे कृश हुआ और फटे हुए जठरमण्डलमेंसे महाकष्टसे श्वास उत्पन्न होकर शांत हुई अग्निके बारंबार धौंकते समय शीतके फटे हुए होठोंमें बारंबार जाकर निकालते हुये शब्द सुनकर अपमानको प्राप्त हुई स्त्रीके समान निद्रा मेरा त्याग करके अत्यन्त दूर चली गयी है और सत्पात्रके प्रदान की हुई लक्ष्मीके समान यह शीतकालकी रात्रि बढ़ती जाती है किन्तु घटती नहीं।

इस काव्यको सुनकर राजा अपने मंदिरमें चला गया, प्रातःकाल होनेपर उस ब्राह्मणको बुलाकर सभामें राजाने पूँछा कि तुमने पिछली रात्रिमें इतना घोर शीत किस प्रकार सहन किया ? और मैं तुम्हारे सत्पात्रको प्रदान की हुई लक्ष्मीके दृष्टांतादिसे अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ. इस प्रकार राजाके वचन सुनकर ब्राह्मण बोला कि, हे राजन् ! मुझे तीन बल अधिक हैं उन तीन बलोंसे शीतको जीतता हूँ। राजाने पूँछा कि, तुम्हारे तीन बल कौनसे हैं ? उनको साफ साफ कहो.

"रात्रौ जानुर्दिवा भानुः कृशानुः सन्ध्य-
योर्द्वयोः । राजञ्छीतं मया नीतं जानुभानु-
कृशानुभिः ॥ २ ॥"

अर्थात् हे राजन् ! रात्रिमें तो घुटनोंके बलसे अर्थात् घुटनोंको पेटमें देकर शीतका निर्गमन करता हूँ, दिनमें सूर्यकी धूपको शरीरपर ओढकर व्यतीत करता हूँ और सन्ध्यासमय तथा प्रातःकाल अग्निके बलसे शीतको जीतता हूँ ऐसे इन तीन बलोंसे मैं शीतका निर्गमन करता हूँ.

इस प्रकार राजाने उसका श्लोक सुनकर अत्यंत हर्षपूर्वक एक लक्ष रुपये देकर उसको बिदा किया ।

इति भोज और कालिदास समाप्त ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
कल्याण--बम्बई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
खेतवाडी—बम्बई.